महास्थविर महावीर-ग्रन्थमाला—३ पुष्प.

मूल पालि

महापरिनिर्वाण सूत्र

(हिन्दी अनुवाद सहित)

सम्पादक

भिक्षु कित्तिमा

प्रकाशक

ऊ० चोज़न्

अक्याब (वर्मा)

२४८५. बु० सं०

१९९८. वि० सं०

प्रथम संस्करण
१०००

मूल्य १।)

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स

निवेदन

आज मैं "महास्थविर महावीर-ग्रन्थमाला" के इस तृतीय पुष्प महा-परिनिर्वाण सूत्र को पाठकों के सन्मुख उपस्थित करता हूँ। इस सूत्र में मूल पालि के साथ हिन्दी अनुवाद भी रखा गया है। ताकि मूल पालि न जाननेवालों को भी मूल का आनन्द मिल सके।

इस सूत्र में उत्तरी भारत के प्राचीन मगध, वैशाली, कपिलवस्तु, कुशीनारा आदि तत्कालीन प्रजातन्त्र राष्ट्रों की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक अवस्था का सुन्दर विवरण है। दूसरे शब्दों में यह सूत्र बुद्ध-कालीन भारतके प्रजातन्त्र राज्यों का एक प्रामाणिक इतिहास है। अतः इस पर प्रकाश डालने के लिए एक विद्वत्तापूर्ण विस्तृत ऐतिहासिक भूमिका की अनिवार्य्य आवश्यकता थी; किन्तु वर्मी भाषा-भाषी होने के कारण मैं वैसा नहीं कर सका।

मूल पालिभाषा को यथाशक्ति शुद्ध-शुद्ध छापने की कोशिश की गई है। फिर भी यदि कुछ त्रुटियाँ रह गई हों तो आशा है कृपालु पाठक इस ओर विशेष ध्यान न दे कर पूज्य तथागत की उन शिक्षाओं और आदर्शों को, जो अमीर-गरीब सबके लिए कल्याणप्रद हैं, ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे।

इस सूत्र का हिन्दी अनुवाद प्रसिद्ध भारतीय विद्वान् त्रिपिटकाचार्य महापण्डित राहुल सांकृत्यायन जी और भिक्षु जगदीश काश्यप जी एम० ए० द्वारा अनूदित 'दीघनिकाय' से लिया गया है। इसके लिए मैं इन विद्वानों का कृतज्ञ हूँ।

मुझे यह उमीद न थी कि यह पुस्तक इतनी जल्दी प्रकाशित हो सकेगी, किन्तु अराकान (वर्मा) निवासी श्रद्धालु उपासक श्री ऊ० चोज़न् (U. Kyaw Zan, Akyab, Arakan) ने धन द्वारा सहायता दे कर मेरी हार्दिक इच्छा पूरी की। इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद दिए विना नहीं रह सकता।

अन्त में मैं अपने पाठकों को धन्यवाद देना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनकी गुण-ग्राहकता के फल-स्वरूप समय समय पर बौद्ध साहित्य को राष्ट्र-भाषा में प्रकाशित करने का अवसर मिलता रहा है।

वर्मी बौद्ध विहार,
सारनाथ (बनारस)
१८-७-४१

विनीत
भिक्षु कित्तिमा

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

———

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स

महापरिनिब्बान सुत्तं

(१) एवं मे सुतं—एकं समयं भगवा **राजगहे** विहरति **गिज्झकूटे** पब्बते। तेन खो पन समयेन राजा **मागधो अजातसत्तु** वेदेहि-पुत्तो वज्जी अभियातु कामो होति। सो एवमाह—'अहं हि मे वज्जी एवं महिद्धिके, एवं महानुभावे, उच्छिज्जामि वज्जी विनासेस्सामि वज्जी अनयब्यसनं आपादेस्सामि वज्जी, ति'।

(१) ऐसा मैंने सुना—एक समय भगवान् **राजगृहमें गृध्रकूट** पर्वतपर विहार करते थे।

उस समय राजा मागध अजातशत्रु वैदेही-पुत्र* वज्जीपर चढ़ाई (=अभियान) करना चाहता था। वह ऐसा कहता था—'मैं इन ऐसे महर्द्धिक (=वैभव-शाली), =ऐसे महानुभाव, वज्जियोंको† उच्छिन्न करूँगा, वज्जियोंका विनाश करूँगा, उनपर आफत ढाऊँगा।'

---

* गंगा (?) के घाटके पास आधा योजन अजातशत्रुका राज्य था, और आधा योजन लिच्छवियोंका।...। वहाँ पर्वत के पास (=जळ) से बहुमूल्य सुगन्ध-वाला माल उतरता था। उसको सुनकर अजातशत्रुके—'आज जाऊँ कल जाऊँ' करते ही, लिच्छवी एक राय, एक मत हो पहले ही जाकर सब ले लेते थे। अजातशत्रु पीछे जाकर उस समाचारको पा क्रुद्ध हो चला आता था। वह दूसरे वर्ष भी वैसा ही करते थे। तब उसने अत्यन्त कुपित हो...ऐसा सोचा—'गण (=प्रजातंत्र) के साथ युद्ध मुश्किल है, (उनका) एक भी प्रहार बेकार नहीं जाता। किसी एक पण्डित के साथ मंत्रणा करके करना अच्छा होगा।...'। (सोच) उसने वर्षकार ब्राह्मणको भेजा।—(अट्ठकथा)

† वर्तमान मुजफ्फरपुर, चम्पारन और दरभंगा के जिले।

(२) अथ खो राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वस्सकारं ब्राह्मणं मागध महामत्तं आमन्तेसि। "एहि त्वं ब्राह्मण! येन भगवा, तेनुपसङ्कम। उपसङ्कमित्वा मम वचनेन भगवतो पादे सिरसा वन्दाहि। अप्पा बाधं अप्पा तङ्कं लहुठानं बलं फासुविहारं पुच्छ—'राजा भन्ते! मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो भगवतो पादे सिरसा वन्दति। अप्पा बाधं अप्पा तङ्कं लहुठानं बलं फासुविहारं पुच्छती, ति'। एवञ्च वदेहि—"राजा भन्ते! मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वज्जी अभियातुकामो सो एवमाह—'अहंहि मे वज्जी एवं महिद्धिके एवं महानुभावे उच्छिज्जामि वज्जी विनासेस्सामि वज्जी अनयब्यसनं आपादेस्सामि वज्जी, ति'। यथा ते भगवा ब्याकरोति। तं साधुकं उग्गहेत्वा मम आरोचेय्यासि। न हि तथागता वितथं भणन्ती, ति"।

(३) 'एवं भो', ति खो वस्सकारो ब्राह्मणो मागध महामत्तो रञ्ञो मगधस्स अजातसत्तुस्स वेदेहिपुत्तस्स पटिस्सुत्वा भद्दानि भद्दानि यानानि योजेत्वा भद्दं भद्दं यानं अभिरूहित्वा भद्देहि भद्देहि यानेहि राजगहम्हा निय्यासि। येन गिज्झकूटो पब्बतो, तेन पायासि। यावतिका

(२) तब० अजातशत्रु० ने मगधके महामात्य (=महामंत्री) वर्षकार ब्राह्मणसे कहा—

"आओ ब्राह्मण! जहाँ भगवान् हैं, वहाँ जाओ। जाकर मेरे वचनसे भगवान्के पैरोंमें शिर से वन्दना करो। आरोग्य-अल्प-आतंक, लघु-उत्थान (=फुर्ती), सुख-विहार पूछो—'भन्ते! राजा० वन्दना करता है, आरोग्य० पूछता है।' और यह कहो—'भन्ते! राजा० वज्जियोंपर चढ़ाई करना चाहता है, वह ऐसा कहता है—'मैं इन० वज्जियोंको उच्छिन्न करूँगा०।' भगवान् जैसा तुमसे बोलें, उसे यादकर (आकर) मुझसे कहो, तथागत अ-यथार्थ (=वितथ) नहीं बोला करते।"

(३) "अच्छा भो।" कह...वर्षकार ब्राह्मण अच्छे अच्छे यानोंको जुतवाकर, बहुत अच्छे यानपर आरूढ़ हो, अच्छे यानोंके साथ, राजगृहसे निकला; (और) जहाँ गृध्रकूट-पर्वत था, वहाँ चला। जितनी यानकी भूमि थी, उतना यानसे जाकर,

यानस्स भूमियानेन गन्त्वा याना पच्चोरोहित्वा पत्तिकोव येन भगवा तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो वस्सकारो ब्राह्मणो मगध महामत्तो भगवन्तं एतदवोच—"राजा भो गोतम! मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो भो तो गोतमस्स पादे सिरसा वन्दति। अप्पा बाधं अप्पा तङ्कं लहुठानं बलं फासुविहारं पुच्छति"। एवञ्च वदेति—"राजा भो गोतम! मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वज्जी अभियातुकामो सो एवमाह—'अहं हि मे वज्जी एवं महिद्धिके एवं महानुभावे उच्छिज्जामि वज्जी विनासेस्सामि वज्जी अनयव्यसनं आपादेस्सामि वज्जी, ति"।

(४) तेन खो पन समयेन आयस्मा आनन्दो भगवतो पिठितो ठितो होति भगवन्तं बीजयमानो। अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि,

[१] "किन्ति ते आनन्द! सुतं वज्जी अभिण्हं सन्निपाता सन्निपात बहुला, ति?

"सुतमेतं भन्ते! वज्जी अभिण्हं सन्निपाता सन्निपातबहुला, ति"।

याव किवञ्च आनन्द! वज्जी अभिण्हं सन्निपाता सन्निपात बहुला भविस्सन्ति, वुद्धियेव आनन्द! वज्जीनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।

यानसे उतर पैदल ही, जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। जाकर भगवान्के साथ संमोदनकर...एक ओर बैठा; एक ओर बैठकर...भगवान्से बोला—"भो गौतम! राजा० आप गौतमके पैरोंमें शिरसे वन्दना करता है ०।० वज्जियोंको उच्छिन्न करूँगा ०'।"

(४) "उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान्के पीछे (खड़े) भगवान्को पंखा झल रहे थे। तब भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दको संबोधित किया—

[१] "आनन्द! क्या तूने सुना है, वज्जी (सम्मतिके लिये) बराबर बैठक (=सन्निपात) करते हैं=सन्निपात-बहुल हैं?"

[२] किन्ति ते आनन्द ! सुतं, वज्जी समग्गा सन्निपतन्ति। समग्गा वुट्ठहन्ति। समग्गा वज्जी करणीयानि करोन्ती, ति ?

सुतमेतं भन्ते ! 'वज्जी समग्गा सन्निपतन्ति, समग्गा वुट्ठहन्ति, समग्गा वज्जी करणीयानि करोन्ती, ति'।

याव किवञ्च आनन्द ! 'वज्जी समग्गा सन्निपतिस्सन्ति, समग्गा वुट्ठहिस्सन्ति, समग्गा वज्जी करणीयानि करिस्सन्ति, वुद्धियेव आनन्द ! वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि'।

[३] किन्ति ते आनन्द ! सुतं 'वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथा पञ्ञत्ते पोराणे वज्जी धम्मे समादाय वत्तन्ती, ति ?'

सुतमेतं भन्ते ! 'वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथा पञ्ञत्ते पोराणे वज्जी धम्मे समादाय वत्तन्ती, ति'।

याव किवञ्च आनन्द ! 'वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेस्सन्ति,

"सुना है, भन्ते ! वज्जी बराबर० ।"

"आनन्द ! जब तक वज्जी बैठक करते रहेंगे = सन्निपात-बहुल रहेंगे; (तब तक) आनन्द ! वज्जियोंकी वृद्धि ही समझना, हानि नहीं।

[२] "क्या आनन्द ! तूने सुना है, वज्जी एक ही बैठक करते हैं, एक ही उत्थान करते हैं, वज्जी एक ही करणीय (= कर्त्तव्य) को करते हैं ?"

"सुना है, भन्ते ! ० ।"

"आनन्द ! जब तक ० ।

[३] "क्या ० सुना है, वज्जी अ-प्रज्ञप्त* (= गैरकानूनी) को प्रज्ञप्त

---

* "पहले न किये गये, शुल्क या बलि (= कर) या दंड लेनेवाले अप्रज्ञप्त (काम) करते हैं। । पुराना वज्जिधर्म...यहाँ पहले वज्जिराजा लोग—'यह चोर है = अपराधी है, (कह) लाकर दिखलाने पर, 'इस चोरको बाँधो'— न कह विनिश्चय-महामात्य (= न्याया-धीश) को देते थे, वह विचारकर अचोर होनेपर छोळ देते थे, यदि चोर होता, तो अपने

पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दिस्सन्ति, यथा पञ्ञत्ते पोराणे वज्जी धम्मे समादाय वत्तिस्सन्ति, वुद्धियेव आनन्द ! वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि'।

[४] किन्ति ते आनन्द ! सुतं—'वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जी महल्लका, ते सक्करोन्ति गरुंकरोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति तेसञ्च सोतब्बं मञ्ञन्ती, ति ?

सुतमेतं भन्ते ! 'वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जी महल्लका, ते सक्करोन्ति गरुंकरोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति तेसं च सोतब्बं मञ्ञन्ती, ति'।

याव किवञ्च आनन्द ! 'वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जी महल्लका, ते सक्करिस्सन्ति गरुंकरिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति तेसं च सोतब्बं मञ्ञिस्सन्ति, वुद्धियेव आनन्द ! वज्जीनं पाटिकङ्खा नो परिहानि'।

[५] किन्ति ते आनन्द ! सुतं—'वज्जी या ता कुलित्थियो कुल-कुमारियो ता न ओक्कस्स पसय्ह वासेन्ती, ति' ?

(=विहित) नहीं करते, प्रज्ञप्त (=विहित) का उच्छेद नहीं करते। जैसे प्रज्ञप्त है, वैसे ही पुराने पुराने वज्जि-धर्म (=०नियम) को ग्रहण कर, वर्तते हैं ?"

"भन्ते ! सुना है।"

"आनन्द ० ! जब तक कि ०।"

[४] "क्या आनन्द ! तूने सुना है—वज्जियोंके जो महल्लक (=वृद्ध) हैं, उनका (वह) सत्कार करते हैं, =गुरुकार करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं; उनकी (बात) सुनने योग्य मानते हैं।"

"भन्ते ! सुना है ०।"

"आनन्द ! जब तक कि ०।"

कुछ न कहकर व्यवहारिकको दे देते थे। वह भी विचारकर अचोर होनेपर छोळ देते थे, यदि चोर होता तो सूत्रधारको दे देते थे। वह भी विचारकर अचोर होनेपर छोळ देते थे, यदि चोर होता तो अष्टकुलिकको दे देते। वह भी वैसा ही कर सेनापतिको, सेनापति उपराजको, और उपराज राजा (=गण-पति) को। राजा विचारकर यदि अचोर होता तो छोळ देता। यदि चोर (=अपराधी) होता, तो प्रवेणी-पुस्तक बँचवाता। उसमें—जिसने यह किया, उसको ऐसा दंड हो—लिखा रहता है। राजा उसके अपराधको उससे मिलाकर उसके अनुसार दंड करता।"—अट्ठकथा।

सुतमेतं भन्ते! 'वज्जी या ता कुलित्थियो कुल-कुमारियो ता न ओक्कस्स पसय्ह वासेन्ती, ति'।

याव किवञ्च आनन्द! वज्जी या ता कुलित्थियो कुल-कुमारियो ता न ओक्कस्स पसय्ह वासेस्सन्ति, वुद्धियेव आनन्द! वज्जीनं पाटिकङ्खा नो परिहानि'।

[६] किन्ति ते आनन्द! सुतं—'वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जी चेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च। तानि सक्करोन्ति गरु करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति। तेसं च दिन्न पुब्बं कत पुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेन्ती, ति'?

सुतमेतं भन्ते! 'वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जी चेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च। तानि सक्करोन्ति गरुंकरोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति। तेसं च दिन्न-पुब्बं कत-पुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेन्ती, ति'।

याव किवञ्च आनन्द! 'वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जी चेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च। तानि सक्करिस्सन्ति गरुं-करिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति। तेसञ्च दिन्न-पुब्बं कत-पुब्बं धम्मिकं-बलिं नो परिहापेन्ति। वुद्धियेव आनन्द! वज्जीनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।

[५] "क्या० सुना है—जो वह कुल-स्त्रियाँ हैं, कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हें (वह) छीनकर, जबर्दस्ती नहीं बसाते ?"

"भन्ते ! सुना है।"

"आनन्द ! ० जब तक ०।"

[६] "क्या ० सुना है—वज्जियोंके (नगरके) भीतर या बाहरके जो चैत्य (=चौरा=देव-स्थान) हैं, वह उनका सत्कार करते हैं, ० पूजते हैं। उनके लिये पहिले किये गये दानको, पहिले की गई धर्मानुसार बलि (=वृत्ति) को, लोप नहीं करते ?"

"भन्ते ! सुना है ० ?"

"जब तक ०।"

[७] किन्ति ते आनन्द ! सुतं—'वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खा वरण गुत्ति सुसंविहिता। किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं। आगता च अरहन्तो विजिते फासुविहरेय्युन्ति ?'

सुतमेतं भन्ते ! 'वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खा वरण गुत्ति सुसंविहिता। किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं। आगता च अरहन्तो विजिते फासुविहरेय्युन्ति।'

याव किवञ्च आनन्द ! 'वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खा वरण गुत्ति सुसंविहिता भविस्सन्ति। किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं। आगता च अरहन्तो विजिते फासु-विहरेय्युन्ति। वुद्धियेव आनन्द ! वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी, ति'।

(५) अथ खो भगवा वस्सकारं ब्राह्मणं मगध महामत्तं आमन्तेसि—"एकमिदाहं ब्राह्मण ! समयं वेसालियं विहरामि सानन्दरे चेतिये, तत्राहं वज्जीनं इमे 'सत्त अपरिहानिये धम्मे' देसेसिं। याव किवञ्च ब्राह्मण ! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा वज्जीसु ठस्सन्ति।

[७] "क्या सुना है,—वज्जी लोग अर्हतों (=पूज्यों) की अच्छी तरह धार्मिक (=धर्मानुसार) रक्षा=आवरण=गुप्ति करते हैं। किसलिये ? भविष्यमें अर्हत् राज्यमें आवें, आये अर्हत् राज्यमें सुखसे विहार करें।"

"सुना है, भन्ते ! ०।"

"जब तक ०।"

(५) तब भगवान्‌ने ० वर्षकार ब्राह्मणको संबोधित किया—

"ब्राह्मण ! एक समय मैं वैशालीके सानन्दर-चैत्यमें विहार करता था। वहाँ मैंने वज्जियों को यह सात अपरिहाणीय-धर्म (=अ-पतनके नियम) कहे। जब तक ब्राह्मण ! यह सात अपरि-हाणीय-धर्म वज्जियोंमें रहेंगे; इन सात अपरिहाणीय-

इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु वज्जी सन्दिस्सिस्सन्ति । वुद्धियेव ब्राह्मण ! वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी, ति ।"

(६) एवं वुत्ते वस्सकारो ब्राह्मणो मगध महामत्तो भगवन्तं एतद्वोच—"एकमेकेनपि भो गोतम ! अपरिहानियेन धम्मेन समन्नागतानं वज्जीनं वुद्धियेव पाटिकङ्खा नो परिहानि । कोपनवादो सत्तहि अपरिहानियेहि धम्मेहि ? अकरणीया च भो गोतम ! वज्जीनं रञ्ञा मागधेन अजातसत्तुना वेदेहिपुत्तेन यदिदं युद्धस्स अञ्ञत्र उपलापनाय अञ्ञत्र मिथुभेदाय" । "हन्द च दानि मयं भो गोतम ! गच्छाम । बहुकिच्चा मयं बहु करणीया, ति ।"

"यस्स दानि त्वं ब्राह्मण ! कालं मञ्ञसी, ति" ।

(७) अथ खो वस्सकारो ब्राह्मणो मगध महामत्तो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना पक्कामि ।

धर्मोंमें वज्जी (लोग) दिखलाई पळेंगे; (तब तक) ब्राह्मण ! वज्जियोंकी वृद्धि ही समझना, हानि नहीं ।"

(६) ऐसा कहने पर० वर्षकार ब्राह्मण भगवान्‌से बोला—

"हे गौतम ! (इनमेंसे) एक भी अपरिहाणीय-धर्मसे वज्जियोंकी वृद्धि ही समझनी होगी, सात अ-परिहाणीय धर्मोंकी तो बात ही क्या ? हे गौतम ! राजा ० को उपलाप (=रिश्वत देना), या आपसमें फूटको छोळ, युद्ध करना ठीक नहीं । हन्त ! हे गौतम ! अब हम जाते हैं, हम बहु-कृत्य=बहु-करणीय (=बहुत कामवाले) हैं ०"

"ब्राह्मण ! जिसका तू काल समझता है ।"

(७) "तब मगध-महामात्य वर्षकार ब्राह्मण भगवान्‌के भाषणको अभिनन्दनकर, अनुमोदनकर, आसनसे उठकर, चला गया* ।

---

* अ. क. "राजाके पास गया । राजाने उससे पूछा—'आचार्य ! भगवान्‌ने क्या कहा ?' । उसने कहा—'भो ! श्रमण०के कथनसे तो वज्जियोंको किसी प्रकार भी लिया नहीं जा सकता; हाँ, उपलापन (=रिश्वत) और आपसमें फूट होनेसे लिया जा

(८) अथ खो भगवा अचिर पक्कन्ते वस्सकारे ब्राह्मणे मगध महामत्ते आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"गच्छ त्वं आनन्द ! यावतिका भिक्खू राजगहं उपनिस्साय विहरन्ति। ते सब्बे उपट्ठानसालायं सन्निपातेही, ति।"

(८) तब भगवान्‌ने ० वर्षकार ब्राह्मणके जानेके थोळी ही देर बाद आयुष्मान् आनन्दको संबोधित किया—

"जाओ, आनन्द ! तुम जितने भिक्षु राजगृहके आसपास विहरते हैं, उन सबको उपस्थान-शालामें एकत्रित करो।"

सकता है'। तब राजाने कहा—'उपलापन से हमारे हाथी घोळे नष्ट होंगे, भेद (=फूट) से ही पकळना चाहिये।०।"

"तो महाराज ! वज्जियोंको लेकर तुम परिषद्‌में बात उठाओ। तब मैं—'महाराज ! तुम्हें उनसे क्या है ? अपनी कृषि, वाणिज्य करके यह राजा (=प्रजातन्त्रके सभासद्) जीयें'—कहकर चला जाऊँगा। तब तुम बोलना—क्योंजी ! यह ब्राह्मण वज्जियोंके सम्बन्धमें होती बातको रोकता है'। उसी दिन मैं उन (=वज्जियों) के लिये भेंट (=पण्णाकार) भेजूँगा; उसे भी पकळकर मेरे ऊपर दोषारोपण कर, बन्धन, ताळन आदि न कर, छुरेसे मुण्डन करा मुझे नगरसे निकाल देना। तब मैं कहूँगा—मैंने तेरे नगरमें प्राकार और परिखा (=खाई) बनवाई है; मैं दुर्बल...तथा गम्भीर स्थानों को जानता हूँ, अब जल्दी (तुझे) सीधा करूँगा'। ऐसा सुनकर बोलना—'तुम जाओ'।

"राजाने सब किया। लिच्छवियोंने उसके निकालने (=निष्क्रमण) को सुनकर कहा—'ब्राह्मण मायावी (=शठ) है, उसे गंगा न उतरने दो।' तब किन्हीं किन्हींके—'हमारे लिये कहनेसे तो वह (राजा) ऐसा करता है' कहनेपर,—'तो भणे ! आने दो'। उसने जाकर लिच्छवियों द्वारा—'किस लिये आये ?' पूछनेपर, वह (सब) हाल कह दिया। लिच्छवियोंने—'थोळीसी बातके लिये इतना भारी दंड करना युक्त नहीं था' कहकर—'वहाँ तुम्हारा क्या पद=(स्थानान्तर) था'—पूछा। 'मैं विनिश्चय-महामात्य था'—(कहनेपर)—'यहाँ भी (तुम्हारा) वही पद रहे'—कहा। वह सुन्दर तौरसे विनिश्चय (=इन्साफ) करता था। राजकुमार उसके पास विद्या (=शिल्प) ग्रहण करते थे। अपने गुणोंसे प्रतिष्ठित हो जानेपर वह एक दिन एक लिच्छवीको एक ओर ले जाकर—

(९) 'एवं भन्ते'ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा यावतिका भिक्खू राजगहं उपनिस्साय विहरन्ति, ते सब्बे उपट्ठानसालायं सन्निपातेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"सन्निपतितो भन्ते! भिक्खु-संघो। यस्स दानि भन्ते! भगवा कालं मञ्ञसी, ति।"

(९) "अच्छा, भन्ते!"०।

"भन्ते! भिक्षुसंघको एकत्रित कर दिया, अब भगवान् जिसका समय समझें।"

'खेत (=केदार, क्यारी) जोतते हैं'? 'हाँ जोतते हैं'। 'दो बैल जोतकर?'—'हाँ, दो बैल जोतकर'—कहकर लौट आया। तब उसको दूसरेके—'आचार्य! (उसने) क्या कहा?'—पूछनेपर, उसने वह कह दिया। (तब) 'मेरा विश्वास न कर, यह ठीक ठीक नहीं बतलाता है' (सोच) उसने बिगाळ कर लिया। ब्राह्मण दूसरे दिन भी एक लिच्छवी को एक ओर ले जाकर 'किस व्यंजन (=तेमन, तरकारी) से भोजन किया' पूछकर लौटनेपर, उससे भी दूसरेने पूछकर, न विश्वासकर वैसेही बिगाळ कर लिया। ब्राह्मण किसी दूसरे दिन एक लिच्छवीको एकान्त में लेजाकर—'बळे गरीब हो न?'—पूछा। 'किसने ऐसा कहा?' 'अमुक लिच्छवीने।' दूसरेको भी एक ओर लेजाकर—'तुम कायर हो क्या?' 'किसने ऐसा कहा' अमुक लिच्छवीने।' इस प्रकार दूसरेके न कहे हुएको कहते तीन वर्ष (४८३—४८० ई. पू.) में उन राजाओंमें परस्पर ऐसी फूट डाल दी, कि दो आदमी एक रास्तेसे भी न जाते थे। वैसा करके, जमा होनेका नगारा (=सन्निपात-भेरी) बजवाया।

लिच्छवी—'मालिक (=ईश्वर) लोग जमा हों'—कहकर नहीं जमा हुए। तब उस ब्राह्मणने राजाको जल्दी आनेके लिये खबर (=शासन) भेजी। राजा सुनकर सैनिक नगारा (=बलभेरी) बजवाकर निकला। वैशालीवालों ने सुनकर भेरी बजवाई—'(आओ चलें) राजाको गंगा न उतरने दें'। उसको भी सुनकर—'देव-राज (=सुर-राज) लोग जायें' आदि कहकर लोग नहीं जमा हुए। (तब) भेरी बजवाई—'नगरमें घुसने न दें', (नगर-) द्वार बन्द करके रहें'। एक भी नहीं जमा हुआ। (राजा अजातशत्रु) खुले द्वारोंसे ही घुसकर, सबको तबाह कर (=अनय-व्यसनं पापेत्वा) चला गया।

(१०) अथ खो भगवा उट्ठायासना येन उपट्ठानसाला, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सत्त वो भिक्खवे! अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ साधुकं मनसिकरोथ भासिस्सामी," ति।

'एवं भन्ते,' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं।

(११) भगवा एतदवोच।

[१] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू अभिण्हं सन्निपाता सन्निपात बहुला भविस्सन्ति, वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।" [२] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू समग्गा सन्निपतिस्सन्ति, समग्गा वुट्ठहिस्सन्ति, समग्गा संघ करणीयानि करिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।" [३] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेस्सन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दिस्सन्ति; यथा पञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय वत्तिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।" [४] "याव किवञ्च भिक्खवे! ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता

(१०) तब भगवान् आसनसे उठकर जहाँ उपस्थान-शाला थी, वहाँ जा, बिछे आसन पर बैठे। बैठ कर भगवान्ने भिक्षुओंको संबोधित किया—"भिक्षुओ! तुम्हें सात अपरिहाणीय-धर्म उपदेश करता हूँ, उन्हें सुनो कहता हूँ।"

..."अच्छा, भन्ते!"...

(११) "[१] भिक्षुओ! जब तक भिक्षु बार बार (=अभीक्ष्णं) बैठक करनेवाले=सन्निपात-बहुल रहेंगे; (तब तक) भिक्षुओ! भिक्षुओंकी वृद्धि समझना, हानि नहीं। [२] जब तक भिक्षुओ! भिक्षु एक हो बैठक करेंगे, एक हो उत्थान करेंगे; एक हो संघके करणीय (कामों) को करेंगे; (तब तक) भिक्षुओ! भिक्षुओंकी वृद्धि ही समझना, हानि नहीं। [३] जब तक ० अप्रज्ञप्तों (=अ-विहितों) को प्रज्ञप्त नहीं करेंगे, प्रज्ञप्तका उच्छेद नहीं करेंगे; प्रज्ञप्त शिक्षा-पदों (=विहित भिक्षु-नियमों) के अनुसार वर्तेंगे ०। [४] जब तक ० जो वह रक्तज्ञ (=धर्मानुरागी)

संघ परिणायका, ते सक्करिस्सन्ति, गरुं करिस्सन्ति, मानेस्सन्ति, पूजेस्सन्ति। तेसञ्च सोतब्बं मञ्ञिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।" [५] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू उप्पन्नाय तण्हाय पोनोब्भविकाय न वसं गच्छिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।" [६] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू आरञ्ञकेसु सेनासनेसु सापेक्खा भविस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।" [७] "याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू पच्चत्तञ्ञेव सतिं उपट्ठपेस्सन्ति। किन्ति अनागता च पेसला सब्रह्मचारी आगच्छेय्युं, आगता च पेसला सब्रह्मचारी फासुविहरेय्युन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।"

"याव किवञ्च भिक्खवे! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति। इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।"

(१२) अपरेपि वो भिक्खवे! सत्त अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ साधुकं मनसिकरोथ भासिस्सामी, ति। 'एवं भन्ते,' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—[१] याव किवञ्च

चिरप्रव्रजित, संघके पिता, संघके नायक, स्थविर भिक्षु हैं, उनका सत्कार करेंगे, गुरुकार करेंगे, मानेंगे, पूजेंगे, उन (की बात) को सुनने योग्य मानेंगे ०। [५] जब तक पुन: पुन: उत्पन्न होनेवाली तृष्णाके वशमें नहीं पळेंगे०। [६] जब तक ० भिक्षु, आरण्यक शयनासन (=वनकी कुटियों) की इच्छावाले रहेंगे०। [७] जब तक भिक्षुओ! हर एक भिक्षु यह याद रखेगा कि अनागत (=भविष्य) में सुन्दर सब्रह्मचारी आवें, आये हुए (=आगत) सुन्दर सब्रह्मचारी सुखसे विहरें; (तब तक) ०। भिक्षुओ! जब तक यह सात अ-परिहाणीय-धर्म (भिक्षुओंमें) रहेंगे; (जब तक) भिक्षु इन सात अ-परिहाणीय-धर्मोंमें दिखाई देंगे; (तब तक) ०।

(१२) "भिक्षुओ! और भी सात अ-परिहाणीय धर्मोंको कहता हूँ। उसे सुनो ०।......। [१] भिक्षुओ! जब तक भिक्षु (सारे दिन चीवर आदिक) काममें

भिक्खवे ! भिक्खू न कम्मारामा भविस्सन्ति, न कम्मरता न कम्मारा-मतमनुयुत्ता; वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खून पाटिकङ्खा नो परिहानि। [२] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न भस्सारामा भविस्सन्ति, न भस्सरता न भस्सारामतमनुयुत्ता। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। [३] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न निद्दारामा भविस्सन्ति, न निद्दारता, न निद्दारामतमनुयुत्ता। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। [४] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न सङ्गणिकारामा भविस्सन्ति, न सङ्गणिकरता, न सङ्गणिकारामतमनुयुत्ता वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। [५] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न पापिच्छा भविस्सन्ति, न पापिकानं इच्छानं वसंगता। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। [६] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न पापमित्ता भविस्सन्ति, न पाप सहाया, न पाप सम्पवङ्कता। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। [७] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू न ओरमत्तकेन विसेसाधिगमेन अन्तरा वोसानं आपिज्जिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि।

याव किवञ्च भिक्खवे ! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु

लगे रहनेवाले (=कर्माराम)=कर्मरत=कर्मारामता-युक्त नहीं होंगे। (तब तक) ०। [२] जब तक भिक्षु बकवादमें लगे रहनेवाले (=भस्साराम), =भस्सरत =भस्सारामता-युक्त नहीं होंगे। [३] ० निद्राराम=निद्रा-रत=निद्रा-रामता-युक्त नहीं होंगे ०। [४] ० संगणिकाराम (=भीळको पसन्द करनेवाले)=संगणिक-रत= संगणिकारामता-युक्त नहीं होंगे०। [५] ० पापेच्छ (=बदनीयत)=पाप-इच्छाओंके वशमें नहीं होंगे०। [६] ० पाप-मित्र (=बुरे मित्रोंवाले), =पाप-सहाय, बुराईकी ओर झुकानवाले न होंगे०। [७] ० थोळेसे विशेष (=योग-साफल्य) को पाकर बीचमें न छोळ देंगे ०। ०।

ठस्सन्ति। इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

(१३) अपरे पि वो भिक्खवे! सत्त अपरिहानिये धम्मे देसिस्सामि०।

[१] याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू सद्धा भविस्सन्ति।....॥

[२] ...हिरिमना भविस्सन्ति....॥

] ३]....ओत्तप्पी भविस्सन्ति....॥

[४]....बहुस्सुता भविस्सन्ति....॥

[५]....आरद्ध वीरिया भविस्सन्ति....॥

[६]....उपट्ठित सती भविस्सन्ति....॥

[७]....पञ्ञवन्तो भविस्सन्ति....॥

वद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। याव किवञ्च भिक्खवे! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति। इमे सु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि॥

(१४) अपरे पि वो भिक्खवे! सत्त अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि॥ तं सुणाथ साधुकं मनसि करोथ भासिस्सामी, ति॥ 'एवं भन्ते' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं॥

भगवा एतदवोच—

[१] याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खू सति-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति।०

(१३) "भिक्षुओ! और भी सात अ-परिहाणाय-धर्मोंको कहता हूँ ०।...। [१] भिक्षुओ! जब तक भिक्षु श्रद्धालु होंगे ०। [२] ० (पापसे) लज्जाशील (=ह्रीमान्) होंगे०। [३] ० (पापसे) भय खानेवाले (=अपत्रपी) होंगे ०। [४] ० बहुश्रुत ० [५] ० उद्योगी (=आरब्ध-वीर्य) ०। [६] ० याद रखनेवाले (=उपस्थित-स्मृति) ०। [७] ० प्रज्ञावान् होंगे ०। ०।

(१४) "भिक्षुओ! और भी सात अ-परिहाणीय-धर्मोंको० । [१] भिक्षुओ!

[२]····धम्मविचय-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥
[३]····वीरिय-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥
[४]····पीति-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥
[५]····पस्सद्धि-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥
[६]····समाधि-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥
[७]····उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति····॥

वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। याव किवञ्च भिक्खवे ! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति। इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

(१५) अपरे पि वो भिक्खवे ! सत्त अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ साधुकं मनसि करोथ भासिस्सामी, ति। 'एवं भन्ते', ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं।

भगवा एतदवोच—

[१] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू अनिच्च-सञ्ञं भावेस्सन्ति....
[२] ····· अनत्त-सञ्ञं भावेस्सन्ति······॥

जब तक भिक्षु स्मृतिसंबोध्यंग * की भावना करेंगे०। [२] ० धर्म-विचय-संबोध्यंगकी०। [३] ० वीर्य-सं०। [४] प्रीति-सं०। [५] ० प्रश्रब्धि-सं०। [६] ० समाधि-सं०। [७] ० उपेक्षा-संबोध्यंगकी भावना करेंगे ०।

(१५) "भिक्षुओ ! और भी सात अ-परिहाणीय-धर्मों को कहता हूँ।......। [१] भिक्षुओ ! जब तक भिक्षु अनित्य-संज्ञाकी भावना करेंगे ० [२] ० अनात्मसंज्ञा०।

---

* परमज्ञान प्राप्त करनेके लिये सात आवश्यक बातें।

[३] ······असुभ-सञ्ञं भावेस्सन्ति······॥
[४] ······आदीनव-सञ्ञं भावेस्सन्ति······॥
[५] ······पहान-सञ्ञं भावेस्सन्ति······॥
[६] ······विराग-सञ्ञं भावेस्सन्ति ·····॥
[७] ······निरोध-सञ्ञं भावेस्सन्ति······॥

वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि। याव किवञ्च भिक्खवे ! इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति। इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि ॥

(१६) छ भिक्खवे ! अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ साधुकं मनसिकरोथ भासिस्सामी, ति ॥ 'एवं भन्ते,' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[१] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू मेत्तं काय कम्मं पच्चुपट्ठापेस्सन्ति सब्रह्मचारी सु आवीचेवरहो च। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि ॥

[२]···मेत्तं वची कम्मं पच्चुपट्ठापेस्सन्ति···॥

[३]···मेत्तं मनोकम्मं पच्चुपट्ठापेस्सन्ति सब्रह्मचारीसु आवीचेव-रहोच। वुद्धियेव भिक्खवे ! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

[४] याव किवञ्च भिक्खवे ! भिक्खू ये ते लाभा धम्मिका धम्म लद्धा अन्तमसो पत्त-परियापन्न-मत्तंपि तथा रूपे हि लाभेहि अप्पटि

[३] ० भोगोंमें; अशुभसंज्ञा ०। [४] ० आदिनव (=दुष्परिणाम)-संज्ञा। [५] प्रहाण-(=त्याग) संज्ञा ०। [६] ० विराग-संज्ञा ०। [७] निरोधसंज्ञा ०।०।

(१६) "भिक्षुओ ! और भी छै अ-परिहाणीय-धर्मोंको कहता हूँ।...। [१] जब तक भिक्षु-सब्रह्मचारियों (=गुरुभाइयों) में गुप्त और प्रकट, मैत्रीपूर्ण कायिक कर्म रखेंगे ०। [२] ० मैत्रीपूर्ण वाचिक-कर्म रक्खेंगे ०। [३] ० मैत्रीपूर्ण मानसिक-कर्म रक्खेंगे ०। [४] ० जब तक भिक्षु धार्मिक, धर्म से प्राप्त जो लाभ हैं—अन्तमें पात्रमें

विभत्त भोगी भविस्सन्ति सीलवन्ते हि सब्रह्मचारी हि साधारण भोगी। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा नो परिहानि॥

[५] याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खूनं यानि तानि सीलानि अखण्डानि अछिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि विञ्ञूपसट्ठानि अपरामट्ठानि समाधि संवत्तनिकानि। तथा रूपे सुसीलेसु सील सामञ्ञगता विहरिस्सन्ति सब्रह्मचारी हि आवीचेवरहोच। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

[६] याव किवञ्च भिक्खवे! भिक्खूनं या यं दिट्ठि अरिया निय्यानिका निय्याति तक्क रस्स सम्मा दुक्खक्खयाय तथा रूपाय दिट्ठिया दिट्ठि सामञ्ञगता विहरिस्सन्ति सब्रह्मचारी हि आवीचेवरहोच। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

(१७) याव किवञ्च भिक्खवे! इमे छ अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति। इमेसु छसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति। वुद्धियेव भिक्खवे! भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी, ति।

(१८) तत्र सुदं भगवा राजगहे विहरन्तो गिज्झकूटे पब्बते एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति। 'इति सीलं, इति समाधि, इति

चुपळने मात्र भी—वैसे लाभोंको (भी) शीलवान् सब्रह्मचारी भिक्षुओंमें बाँटकर भोग करनेवाले होंगे ० [५] ० जब तक भिक्षु, जो वह अखंड (=निर्दोष) अ-छिद्र,अ-कल्मष =भुजिस्स (=सेवनीय), विद्वानोंसे प्रशंसित, अ-निन्दित समाधिकी ओर (ले) जानेवाले शील हैं, वैसे शीलोंसे शील-श्रामण्य-युक्त हो सब्रह्मचारियोंके साथ गुप्त भी प्रकट भी विहरेंगे ०। [६] जो वह आर्य (=उत्तम), नैर्याणिक (=पार करानेवाली), वैसा करनेवालेको अच्छी प्रकार दुःख-क्षयकी ओर ले जानेवाली दृष्टि है, वैसी दृष्टिसे दृष्टि-श्रामण्य-युक्त हो, सब्रह्मचारियोंके साथ गुप्त भी प्रकट भी विहरेंगे।

(१७) भिक्षुओ! जब तक यह छै अपरिहाणीय-धर्म ०।

(१८) वहाँ राजगृहमें गृध्रकूट-पर्वतपर विहार करते हुए भगवान् बहुत करके भिक्षुओंको यही धर्मकथा कहते थे—ऐसा शील है, ऐसी समाधि है, ऐसी प्रज्ञा

पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति। सेय्यथिदं,—कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति।'

(१९) अथ खो भगवा राजगहे यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि 'आयामानन्द! येन अम्बलट्ठिका तेनुपसङ्कमिस्साम, ति।'

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

(२०) अथ खो भगवा महता भिक्खु संघेन सद्धिं येन अम्बलट्ठिका तदवसरि। तत्र सुदं भगवा अम्बलट्ठिकायं विहरति राजागारके। तत्र पि सुदं भगवा अम्बलट्ठिकायं विहरन्तो राजागारके, एतदेव बहुलं

है। शीलसे परिभावित समाधि महा-फलवाली=महा-आनृशंसवाली होती है। समाधिसे परिभावित प्रज्ञा महाफलवाली=महा-आनृशंसवाली होती है। प्रज्ञासे परिभावित चित्त आस्रवों*,—कामास्रव, भवास्रव, दृष्टि-आस्रव—से अच्छी तरह मुक्त होता है।

बुद्धकी अन्तिम यात्रा

अम्ब-लट्ठिका—

(१९) तब भगवान्‌ने राजगृहमें इच्छानुसार विहारकर आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—

"चलो आनन्द! जहाँ अम्बलट्ठिका† है, वहाँ चलें।" "अच्छा, भन्ते!"...

(२०) तब भगवान् महान् भिक्षु-संघके साथ जहाँ अम्बलट्ठिका थी, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् अम्बलट्ठिकामें राजगारकमें विहार करते थे। वहाँ० राजगारकमें भी भगवान् भिक्षुओंको बहुधा यही धर्म-कथा कहते थे—०।

---

* आस्रव (=चित्त-मल)— भोग (=काम)-संबंधी, आवागमन (=भव)-संबंधी, धारणा (=दृष्टि)-संबंधी।

† सम्भवतः वर्तमान सिलाव।

भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति। 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति। सेय्यथिदं—कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति।'

(२१) अथ खो भगवा अम्बलट्ठिकायं यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि 'आयामानन्द! येन नालन्दा, तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति।'

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

(२२) अथ खो भगवा महता भिक्खु संघेन सद्धिं येन नालन्दा, तदवसरि। तत्र सुदं भगवा नालन्दायं विहरति पावारिकम्बवने। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो

(२१) भगवान्‌ने अम्बलट्ठिकामें यथेच्छ विहार कर आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—

"चलो आनन्द! जहाँ नालन्दा है, वहाँ चलें।" "अच्छा, भन्ते!"...

बुद्धके प्रति सारिपुत्रका उद्गार

नालन्दा—

(२२) तब भगवान् वहाँसे महाभिक्षु-संघके साथ जहाँ नालन्दा थी, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् नालन्दा*में प्रावारिक-आम्रवनमें विहार करते थे।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र[1] जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवान्‌से कहा—

---

* वर्तमान बड़गाँव, जिला पटना।

[1] पृ० १२४ टि० १ से विरुद्ध होनेसे सारिपुत्रका इस वक्त होना सन्दिग्ध है।

आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—'एवं पसन्नो अहं भन्ते! भगवति। न चाहु न च भविस्सति न चेतरहि विज्जति अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा भगवता भिय्यो भिञ्ञतरो यदिदं सम्बोधियन्ति।'

(२३) उलारा खो ते अयं सारिपुत्त! असम्भिवाचा भासिता। एकं सो गहितो सीहनादो नदितो। 'एवं पसन्नो अहं भन्ते! भगवति। न चाहु, न च भविस्सति, न चेतरहि विज्जति अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा भगवता भिय्यो भिञ्ञतरो यदिदं सम्बोधियन्ति।'

(२४) 'किंनु सारिपुत्त! ये ते अहेसुं अतीत-मद्धानं अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा। सब्बे ते भगवन्तो चेतसा चेतोपरिच्च विदिता। एवं सीला ते भगवन्तो अहेसुं इति पि। एवं धम्मा, एवं पञ्ञा, एवं विहारी, एवं विमुत्ता ते भगवन्तो अहेसुं इति पी, ति?'॥

नो हेतं भन्ते!

(२५) किं पन सारिपुत्त! ये ते भविस्सन्ति अनागत-मद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा। सब्बे ते भगवन्तो चेतसा चेतो परिच्च विदिता। एवं सीला ते भगवन्तो भविस्सन्ति इति पि। एवं धम्मा, एवं पञ्ञा, एवं विहारी, एवं विमुत्ता ते भगवन्तो भविस्सन्ति इति पी, ति?'॥

"भन्ते! मेरा ऐसा विश्वास है—'संबोधि (=परमज्ञान) में भगवान्से बढ़कर(=भूयस्तर) कोई दूसरा श्रमण ब्राह्मण न हुआ, न होगा, न इस समय है'।"

(२३) "सारिपुत्र! तूने यह बहुत उदार (=बळी) =आर्षभी वाणी कही। बिल्कुल सिंहनाद...किया—'मेरा ऐसा ०।'

(२४) सारिपुत्र! जो वह अतीतकालमें अर्हत् सम्यक्-संबुद्ध हुए, क्या (तूने) उन सब भगवानोंको (अपने) चित्तसे जान लिया; कि वह भगवान् ऐसे शीलवाले, ऐसी प्रज्ञावाले, ऐसे विहारवाले, ऐसी विमुक्तिवाले थे?"

"नहीं, भन्ते!"

(२५) "सारिपुत्र! जो वह भविष्यकालमें अर्हत्-सम्यक्-संबुद्ध होंगे, क्या उन सब भगवानोंको चित्तसे जान लिया ०?"

नो हेतं भन्ते !

(२६) किं पन सारिपुत्त ! अहं एतरहि अरहं सम्मासम्बुद्धो चेतसा चेतो परिच्च विदितो । एवं सीलो भगवा इति पि । एवं धम्मो, एवं पञ्ञो, एवं विहारी, एवं विमुत्तो भगवा इति पी, ति ? ।

नो हेतं भन्ते !

(२७) एतरहि ते सारिपुत्त ! अतीतानागत पच्चुप्पन्नेसु अरहन्तेसु सम्मासम्बुद्धेसु चेतसा चेतो परियाय ञाणं नत्थि, अथ किञ्च-रहिते अयं सारिपुत्त ! उलारा असम्भि वाचा भासिता । एकं सो गहितो सीह-नादो नदितो—'एवं पसन्नो अहं भन्ते ! भगवति । न चाहु, न च भविस्सति, न चेतरहि विज्जति अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा भगवता भिय्यो भिञ्ञतरो यदिदं सम्बोधियन्ति' ॥

(२८) न खो मे भन्ते ! अतीतानागत पच्चुप्पन्नेसु अरहन्तेसु सम्मासम्बुद्धेसु चेतो परियाय ञाणं अत्थि । अपिच खो मे भन्ते ! धम्मन्वयो विदितो, सेय्यथापि भन्ते !—रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं दल्ह द्धारं, दल्ह पाकार तोरणं एक द्धारं । तत्रस्स दोवारिको पण्डितो वियत्तो मेधावी

"नहीं, भन्ते !"

(२६) "सारिपुत्र ! इस समय मैं अर्हत्-सम्यक्-संबुद्ध हूँ, क्या चित्तसे जान लिया, (कि मैं) ऐसी प्रज्ञावाला ० हूँ ?"

"नहीं, भन्ते !"

(२७) "(जब) सारिपुत्र ! तेरा अतीत, अनागत (=भविष्य), प्रत्युत्पन्न (=वर्तमान) अर्हत्-सम्यक्-संबुद्धोंके विषयमें चेतः-परिज्ञान (=पर-चित्तज्ञान) नहीं है; तो सारिपुत्र ! तूने क्यों यह बहुत उदार=आर्षभी वाणी कही ० ?"

(२८) "भन्ते ! अतीत-अनागत-प्रत्युत्पन्न अर्हत्-सम्यक्-संबुद्धोंमें मुझे चेतः-परिज्ञान नहीं है; किन्तु (सबकी) धर्म-अन्वय (=धर्म-समानता) विदित है । जैसे कि भन्ते ! राजा का सीमान्त-नगर दृढ़ नींववाला, दृढ़ प्राकारवाला, एक द्वारवाला हो । वहाँ अज्ञातों (=अपरिचितों) को निवारण करनेवाला, ज्ञातों (=परिचितों)

अञ्ञातानं निवारेता ञातानं पवेसेता। सो तस्स नगरस्स समन्ता अनुपरियाय पथं अनुक्कममानो न पस्सेय्य पाकार सन्धिं वा पाकार विवरं वा अन्तमसो बिलार निक्खमन-मत्तंपि। तस्स एव-मस्स ये खो केचि ओलारिका पाणा इमं नगरं पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा। सब्बे ते इमिनाव द्वारेन पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा, ति। एवमेव खो मे भन्ते! धम्मन्वयो विदितो॥ ये ते भन्ते! अहेसुं अतीतमद्धानं अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा। सब्बे ते भगवन्तो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलि करणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुपट्ठित चित्ता, सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झिसु। ये पि ते भन्ते! भविस्सन्ति अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा। सब्बे ते भगवन्तो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलि करणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुपट्ठित चित्ता, सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा, अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झिस्सन्ति। भगवा पि भन्ते! एतरहि अरहं सम्मासम्बुद्धो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलि करणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुपट्ठित चित्तो, सत्त बोज्झङ्गे यथा-भूतं भावेत्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धोति'॥

को प्रवेश करानेवाला पंडित=व्यक्त=मेधावी द्वारपाल हो। वहाँ नगरकी चारों ओर, अनुपर्याय (=क्रमशः) मार्गपर घूमते हुए (मनुष्य), प्राकारमें अन्ततः बिल्लीके निकलने भरकी भी संधि (=विवर) न पाये। उसको ऐसा हो—'जो कोई बळे बळे प्राणी इस नगरमें प्रवेश करते हैं; सभी इसी द्वारसे ०। ऐसे ही भन्ते! मैंने धर्म-अन्वय जान लिया—'जो वह अतीतकालमें अर्हत्-सम्यक्-संबुद्ध हुए, वह सभी भग-वान् भी चित्तके उपक्लेश (=मल) प्रज्ञाको दुर्बल करनेवाले, पाँचों नी व र णों को छोळ, चारों स्मृति-प्रस्थानोंमें चित्तको सु-प्रतिष्ठितकर, सात बोध्यंगोंकी यथार्थसे भावना कर, सर्वश्रेष्ठ (=अनुत्तर) सम्यक्-संबोधि (=परमज्ञान) का साक्षात्कार किये थे। और भन्ते! अनागतमें भी जो अर्हत्-सम्यक्-संबुद्ध होंगे; वह सभी भग-वान ०। भन्ते! इस समय भगवान् अर्हत्-सम्यक्-संबुद्धने भी चित्तके उपक्लेश ०।"

(२९) तत्र पि सुदं भगवा नालन्दायं विहरन्तो पावारिकम्बवने एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति। 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति। सेय्यथिदं—कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति।'

(३०) अथ खो भगवा नालन्दायं यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द ! येन पाटलिगामो तेनुपसङ्कमिस्साम, ति।'

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

(३१) अथ खो भगवा महता भिक्खु संघेन सद्धिं येन पाटलिगामो तदवसरि।

(२९) वहाँ नालन्दामें प्रावारिक-आम्रवनमें विहार करते, भगवान् भिक्षुओंको बहुधा यही कहते थे ०।

पाटलि-ग्राम—

(३०) तब भगवान्ने नालन्दामें इच्छानुसार विहारकर, आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—

"चलो, आनन्द! जहाँ पाटलि-ग्राम है, वहाँ चल।"

"अच्छा, भन्ते!"

(३१) तब भगवान् महान् भिक्षुसंघके साथ, जहाँ पा ट लि ग्रा म* था, वहाँ गये। पाटलिग्रामके उपासकोंने सुना कि भगवान् पाटलिग्राम आये हैं। तब... उपासक जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे...उपासकोंने भगवान्से यह कहा—

---

* वर्तमान पटना।

अस्सोसुं खो पाटलिगामिया उपासका 'भगवा किर पाटलिगामं अनुप्पत्तो, ति'। अथ खो पाटलिगामिया उपासका येन भगवा, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो पाटलिगामिया उपासका भगवन्तं एतदवोचुं—'अधिवासेतु नो भन्ते ! भगवा आवसथागारन्ति'। अधिवासेसि भगवा तुण्हिभावेन।

(३२) अथ खो पाटलिगामिया उपासका भगवतो अधिवासनं विदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा येन आवसथागारं, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा सब्ब सन्थरिं सन्थतं आवसथागारं सन्थरित्वा आसनानि पञ्ञापेत्वा उदकमणिकं पतिट्ठापेत्वा तेल-पदीपं आरोपेत्वा येन भगवा, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो पाटलिगामिया उपासका भगवन्तं एतदवोचुं। "सब्ब सन्थरिं सन्थतं भन्ते ! आवसथागारं आसनानि पञ्ञत्तानि। उदकमणिको पतिट्ठापितो। तेल-पदीपो आरोपितो। यस्स दानि भन्ते ! भगवा कालं मञ्ञती, ति।"

"भन्ते ! भगवान् हमारे आवसथागार (=अतिथिशाला) को स्वीकार करें।"

भगवान्ने मौनसे स्वीकार किया।

(३२) तब...उपासक भगवान्की स्वीकृति जान आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादनकर, प्रदक्षिणा कर जहाँ आवसथागार था, वहाँ गये। जाकर आवसथागारमें चारों ओर बिछौना बिछाकर, आसन लगाकर, जलके बर्तन स्थापितकर, तेल दीपक जला, जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर, भगवान्को अभिवादनकर एक ओर खळे हो गये। एक ओर खळे हो पाटलिग्रामके उपासकोंने भगवान्से यह कहा—"भन्ते ! आवसथागारमें चारों ओर बिछौना बिछा दिया ०, अब जिसका भन्ते ! भगवान् काल समझें।"

(३३) अथ खो भगवा सायन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवरं आदाय सद्धिं भिक्खु संघेन येन आवसथागारं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पादे पक्खालेत्वा आवसथागारं पविसित्वा मज्झिमं थम्भं निस्साय पुरत्थिमाभिमुखो निसीदि। भिक्खुसंघो पि खो पादे पक्खालेत्वा आवसथागारं पविसित्वा पच्छिमं भित्तिं निस्साय पुरत्थिमाभिमुखो निसीदि भगवन्तमेव पुरक्खित्वा। पाटलिगामिया पि खो उपासका पादे पक्खालेत्वा आवसथागारं पविसित्वा पुरत्थिमं भित्तिं निस्साय पच्छिमाभिमुखा निसीदिंसु भगवन्तमेव पुरक्खित्वा।

(३४) अथ खो भगवा पाटलिगामिये उपासके आमन्तेसि,—पञ्चिमे गहपतयो! आदीनवा दुस्सीलस्स सीलविपत्तिया। कतमे पञ्च?

[१] इध गहपतयो! दुस्सीलो सीलविपन्नो पमादाधिकरणं महतिं भोगजानिं निगच्छति। अयं पठमो आदीनवो दुस्सीलस्स सीलविपत्तिया।

[२] पुन च परं गहपतयो! दुस्सीलस्स सीलविप्पन्नस्स पापको कित्ति सद्दो अब्भुग्गच्छति। अयं दुतियो आदीनवो दुस्सीलस्स सीलविपत्तिया।

[३] पुन च परं गहपतयो! दुस्सीलो सील विपन्नो यं—यदेव

(३३) तब भगवान् सायंकालको पहिनकर पात्र चीवर ले, भिक्षु-संघ के साथ ० आवसथागारमें प्रविष्ट हो बीचके खम्भे के पास पूर्वाभिमुख बैठे। भिक्षुसंघ भी पैर पखार आवसथागारमें प्रवेशकर, पूर्वकी ओर मुँहकर पच्छिमकी भीतके सहारे भगवान्को आगेकर बैठा। पाटलिग्रामके उपासक भी पैर पखार आवसथागारमें प्रवेशकर पच्छिमकी ओर मुँहकर पूर्वकी भीतके सहारे भगवान्को सामने करके बैठे।

(३४) तब भगवान्ने...उपासकोंको आमंत्रित किया—

"गृहपतियो! दुराचारके कारण दुःशील (=दुराचारी) के लिए यह पाँच दुष्परिणाम हैं। कौनसे पाँच? गृहपतियो! [१] दुराचारी आलस्य करके बहुतसे अपने भोगोंको खो देता है, दुराचारीका दुराचारके कारण यह पहला दुष्परिणाम है। [२] और फिर...दुराचारीकी निन्दा होती है ०। [३] दुराचारी आचारभ्रष्ट (पुरुष)

परिसं उपसङ्कमति यदि खत्तिय-परिसं, यदि ब्राह्मण-परिसं, यदि गहपति-परिसं, यदि समण-परिसं अविसारदो उपसङ्कमति, मङ्कुभूतो। अयं ततियो आदीनवो दुस्सीलस्स सीलविपत्तिया।

[४] पुन च परं गहपतयो! दुस्सीलो सील विप्पन्नो संमुल्हो कालं करोति। अयं चतुत्थो आदीनवो दुस्सीलस्स सील विपत्तिया।

[५] पुन च परं गहपतयो! दुस्सीलो सील विप्पन्नो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। अयं पञ्चमो आदीनवो दुस्सीलस्स सील विपत्तिया॥ इमे खो गहपतयो! पञ्च आदीनवा दुस्सीलस्स सील विपत्तिया॥

(३५) पञ्चिमे गहपतयो! आनिसंसा सीलवतो सीलसम्पदाय। कतमे पञ्च?

[१] इध गहपतयो! सीलवा सील सम्पन्नो अप्पमादाधिकरणं महन्तं भोगक्खन्दं अधिगच्छति। अयं पठमो आनिसंसो सीलवतो सील सम्पदाय॥

[२] पुन च परं गहपतयो! सीलवतो सील सम्पन्नस्स कल्याणो कित्ति-सद्दो अब्भुग्गच्छति। अयं दुतियो आनिसंसो सीलवतो सील सम्पदाय॥

क्षत्रिय ब्राह्मण, गृहपति या श्रमण जिस किसी सभामें जाता है प्रतिभा रहित, मूक होकर ही जाता है ०। [४] ० मूढ़ रह मृत्युको प्राप्त होता है ०। [५] और फिर गृहपतियों! दुराचारी आचारभ्रष्ट काया छोळ मरनेके वाद अपाय=दुर्गति=पतन=नरकमें उत्पन्न होता है। दुराचारीके दुराचारके कारण यह पाँचवाँ दुष्परिणाम है। ०।

(३५) "गृहपतियो! सदाचारीके लिये सदाचारके कारण पाँच सुपरिणाम हैं। कौनसे पाँच?—[१] गृहपतियो! सदाचारी अप्रमाद (=ग़फलत न करना) होकर वळी भोगराशिको (इसी जन्ममें) प्राप्त करता है। सदाचारीको सदाचारके कारण यह पहला सुपरिणाम है। [२] ० सदाचारीका मंगल यश फैलता है ०।

[३] पुन च परं गहपतयो ! सीलवा सील सम्पन्नो यं यदेव परिसं उपसङ्कमति यदि खत्तिय-परिसं, यदि ब्राह्मण-परिसं, यदि गह-पति-परिसं, यदि समण-परिसं विसारदो उपसङ्कमति अमङ्कुभूतो । अयं ततियो आनिसंसो सीलवतो सील सम्पदाय ॥

[४] पुन च परं गहपतयो ! सीलवा सीलसम्पन्नो असंमुल्हो कालं करोति । अयं चतुत्थो आनिसंसो सीलवतो सील सम्पदाय ॥

[५] पुन च परं गहपतयो ! सीलवा सील सम्पन्नो कायस्स-भेदा परंमरणा सुगतिं सग्गंलोकं उपपज्जति । अयं पञ्चमो आनिसंसो सीलवतो सील सम्पदाय ॥

इमे खो गहपतयो ! पञ्च आनिसंसा सीलवतो सील सम्पदाया, ति ।

(३६) अथ खो भगवा पाटलिगामिके उपासके बहुदेव रत्तिं धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा संपहंसेत्वा उय्योजेसि । अभिक्कन्ता खो गहपतयो ! रत्तियस्स दानि तुम्हे कालं मञ्ञथा, ति । 'एवं भन्ते', ति खो पाटलिगामिया उपासका भगवतो पटिस्सुत्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमिंसु ।

[३] ० जिस किसी सभामें जाता है मूक न हो विशारद बनकर जाता है ० । [४] ० मूढ़ न हो मृत्युको प्राप्त होना है ० । [५] और फिर गृहपतियो ! सदाचारी सदाचारके कारण काया छोळ मरनेके बाद सुगति=स्वर्गलोकको प्राप्त होता है । सदाचारीको सदाचारके कारण यह पाँचवाँ सुपरिणाम है ।

गृहपतियो ! सदाचारीके लिये सदाचारके कारण यह पाँच सुपरिणाम हैं ।"

(३६) तब भगवान्‌ने बहुत रात तक...उपासकोंको धार्मिक कथासे संदर्शित... समुत्तेजितकर...उद्योजित किया—"गृहपतियो ! रात क्षीण हो गई, जिसका तुम समय समझते हो (वैसा करो) ।"

अथ खो भगवा अचिर पक्कन्तेसु पाटलिगामिकेसु उपासकेसु सुञ्ञा-गारं पाविसि ॥

(३७) तेन खो पन समयेन सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता पाटलिगामे नगरं मापेन्ति वज्जीनं पटिवाहाय । तेन समयेन सम्पहुला देवता सहस्सस्सेव पाटलिगामे वत्थूनि परिग्गण्हन्ति । यस्मिं पदेसे महे-सक्खा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति । महेसक्खानं तत्थ रञ्ञं राज-महा-मत्तानं चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं । यस्मिं पदेसे मज्झिमा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति, मज्झिमानं तत्थ रञ्ञं राज-महामत्तानं

"अच्छा भन्ते ! "...पाटलिग्राम-वासी... * उपासक...आसनसे उठकर भगवान्‌को अभिवादनकर, प्रदक्षिणाकर, चले गये। तब पाटलिग्रामिक उपासकोंके चले जानेके थोळी ही देर बाद भगवान् शून्य-आगारमें चले गये।

(२) पाटलिपुत्रका निर्माण

(३७) उस समय सुनीध (=सुनीथ) और वर्षकार मगधके महामात्य पाटलिग्राममें वज्जियोंको रोकनेके लिये नगर बसा रहे थे। उस समय अनेक हजार देवता पाटलिग्राम में वास ग्रहण कर रहे थे। जिस स्थानमें महाप्रभावशाली (=महेसक्ख) देवताओंने वास ग्रहण किया, उस स्थानमें महाप्रभावशाली राजाओं

---

* "भगवान् कब पाटलिग्राम गये ? ... श्रावस्तीमें धर्मसेनापति (सारिपुत्र) का चैत्य बनवा, वहाँसे निकलकर राजगृहमें वास करते, वहाँ आयुष्मान् महामौद्गल्यायनका चैत्य बनवाकर, वहाँसे निकल अम्बलट्ठिकामें वासकर ; अ-त्वरित चारिकासे देशमें विचरते; वहाँ वहाँ एक एक रात वास करते, लोकानुग्रह करते, क्रमशः-पाटलिग्राम पहुँचे। ...पाटलिग्राममें अजातशत्रु और लिच्छवि राजाओंके आदमी समय समयपर आकर घरके मालिकोंको घर से निकालकर (एक) मास भी आधे मास भी बस रहते थे। इससे पाटलिग्राम वासियोंने नित्य पीळित हो– उनके आनेपर यह (हमारा) वासस्थान होगा—(सोच) ... नगरके बीचमें महाशाला बनवाई। उसीका नाम था आवसथा-गार। वह उसी दिन समाप्त हुआ था।"—अट्ठकथा।

चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं। यस्मिं पदेसे नीचा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति, नीचानं तत्थ रञ्ञं राज-महामत्तानं चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं। अद्दस खो भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अति-क्कन्त मानुसकेन ता देवतायो सहस्सस्सेव पाटलिगामे वत्थूनि परिग्ग-ण्हन्तियो॥

(३८) अथ खो भगवा रत्तिया पच्चुस समयं पच्चुट्ठाय आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"कोनुखो आनन्द पाटलिगामे नगरं मापेतीति?"

"सुनिध वस्सकारा भन्ते! मगध महामत्ता पाटलिगामे नगरं मापेन्ति वज्जीनं पटिबाहाया,ति॥"

(३९) सेय्यथापि आनन्द! देवे हि तावतिंसे हि सद्धिं मन्तेत्वा एवमेव खो आनन्द! सुनिध वस्सकारा मगध गहामत्ता पाटलिगामे नगरं मापेन्ति वज्जीनं पटिबाहाय। इधाहं आनन्द! अद्दसं दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्त मानुसकेन सम्पहुला देवतायो सहस्सेव

और राजमहामंत्रियोंके चित्तमें घर वनानेको होता है। जिस स्थानमें मध्यम श्रेणीके देवताओंने वास ग्रहण किया, उस स्थानमें मध्यम श्रेणीके राजाओं और राजमहामंत्रियोंके चित्तमें घर वनानेको होता है। जिस स्थानमें नीच देवताओंने वास ग्रहण किया, उस स्थानमें नीच राजाओं और राजमहामंत्रियोंके चित्तमें घर वनानेको होता है।

(३८) भगवान्‌ने रातके प्रत्यूष-समय (=भिनसार) को उठकर आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—

"आनन्द! पाटलिग्राममें कौन नगर वना रहा है?"

"भन्ते! सुनीथ और वर्षकार मगध-महामात्य, वज्जियोंको रोकनेके लिए नगर वसा रहे हैं।"

(३९) "आनन्द! जैसे त्रायस्त्रिंश देवताओंके साथ सलाह करके मगधके महामात्य सुनीथ, वर्षकार, वज्जियोंके रोकनेके लिये नगर वना रहे हैं। आनन्द! मैंने अमानुष दिव्य नेत्रसे देखा—अनेक सहस्र देवता यहाँ पाटलिग्राममें वास्तु (=घर,

पाटलिगामे वत्थूनि परिग्गण्हन्तियो। यस्मिं आनन्द ! पदेसे महेसक्खा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति, महेसक्खानं तत्थ रञ्ञं राज-महामत्तानं चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं। यस्मिं पदेसे मज्झिमा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति, मज्झिमानं तत्थ रञ्ञं राजमहामत्तानं चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं। यस्मिं पदेसे नीचा देवता वत्थूनि परिग्गण्हन्ति, नीचानं तत्थ रञ्ञं राजमहामत्तानं चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं॥ यावता आनन्द ! अरियं आयतनं यावता वणिप्पथो इदं अग्ग-नगरं भविस्सति **पाटलिपुत्तं** पुटभेदनं॥ पाटलि-पुत्तस्स खो आनन्द ! **तयो अन्तराया** भविस्सन्ति अग्गितो वा, उदकतो वा, मिथुभेदावा, ति॥

(४०) अथ खो सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता येन भगवा, तेनुप-सङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता भगवन्तं एतदवोचुं—'अधिवासेतु नो

वास) ग्रहण कर रहे हैं। जिस प्रदेशमें महाशक्ति-शाली (=महेसक्ख) देवता वास ग्रहण कर रहे हैं, वहाँ महा-शक्ति-शाली राजाओं और राज-महामात्योंका चित्त, घर बनानेको लगेगा। जिस प्रदेशमें मध्यम देवता वास ग्रहण कर रहे हैं, वहाँ मध्यम राजाओं और राज-महामात्योंका चित्त घर बनानेको लगेगा। जिस प्रदेशमें नीच देवता०, वहाँ नीच राजाओं०। आनन्द ! जितने (भी) आर्य-आयतन (=आर्योंके निवास) हैं, जितने भी वणिक्-पथ (=व्यापार-मार्ग) हैं, (उनमें) यह पाटलिपुत्र, पुट-भेदन (=मालकी गाँठ जहाँ तोळी जाय) अग्र (=प्रधान)-नगर होगा। पाटलिपुत्रके तीन अन्तराय (=शत्रु) होंगे—आग, पानी और आपसकी फूट।"

(४०) तब मगध-महामात्य **सुनीथ** और **वर्षकार** जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये; जाकर भगवान्के साथ संमोदनकर...एक ओर खळे हुए...भगवान्से बोले—

भन्ते ! भवं गोतमो अज्जतनाय भत्तं सद्धिं भिक्खु संघेना, ति'।
अधिवासेसि भगवा तुण्हिभावेन ॥

(४१) अथ खो सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता भगवतो अधिवासनं विदित्वा येन सको आवसथो, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा सके आवसथे पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादापेत्वा भगवतो कालं आरोचापेसुं—'कालो भो गोतम ! निट्ठितं भत्तन्ति' ॥

(४२) अथ खो भगवा पुब्बन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवर-मादाय सद्धिं भिक्खु संघेन येन सुनिध वस्सकारानं मगध महामत्तानं आवसथो, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता बुद्ध पमुखं भिक्खु संघं पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसुं सम्पवारेसुं। अथ खो सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता भगवन्तं भुत्तार्वि ओणीत पत्त पाणिं अञ्ञतरं नीचं आसनं गहेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो सुनिध वस्सकारे मगध महामत्ते भगवा इमाहि गाथा हि अनुमोदि—

"भिक्षु-संघ के साथ आप गौतम ! हमारा आजका भात स्वीकार करें।"
भगवान्‌ने मौनसे स्वीकार किया।

(४१) तब ० सुनीथ वर्षकार भगवान्‌की स्वीकृति जान, जहाँ उनका आवसथ (=डेरा) था, वहाँ गये। जाकर अपने आवसथमें उत्तम खाद्य-भोज्य तैयार करा (उन्होंने) भगवान्‌को समयकी सूचना दी...।

(४२) तब भगवान् पूर्वाह्ण समय पहनकर, पात्र चीवर ले भिक्षु-संघके साथ जहाँ मगध-महामात्य सुनीथ और वर्षकारका आवसथ था, वहाँ गये; जाकर बिछे आसनपर बैठे। तब सुनीथ, वर्षकारने बुद्धप्रमुख भिक्षु-संघको अपने हाथसे उत्तम खाद्य-भोज्यसे संतर्पित=संप्रवारित किया। तब ० सुनीथ वर्षकार, भगवान्‌के भोजनकर पात्रसे हाथ हटा लेनेपर, दूसरा नीचा आसन ले, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए मगध-महामात्य सुनीथ, वर्षकारको भगवान्‌ने इन गाथाओंसे (दान-) अनुमोदन किया—

(४३) यस्मिं पदेसे कप्पेति, वासं पण्डित जातियो।
सीलवन्तेत्थ भोजेत्वा, सञ्ञते ब्रह्मचरियो॥
यातत्थ देवता आसुं, तासं दक्खिणमादिसे।
पूजिता पूजयन्ति नं, मानिता मानयन्ति नं॥
ततो नं अनुकम्पेन्ति, माता पुत्तंव ओरसं।
देवतानुकम्पितो पोसो, सदा भद्रानि पस्सती,ति॥

(४४) अथ खो भगवा सुनिध वस्सकारे मगध महामत्ते इमाहि गाथाहि अनुमोदित्वा उट्ठायासना पक्कामि। तेन खो पन समयेन सुनिध वस्सकारा मगध महामत्ता भगवन्तं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धा होन्ति। येनिज्ज समणो गोतमो द्वारेन निक्खमिस्सति, तं **'गोतम-द्वारं'** नाम भविस्सति। येन तित्थेन गङ्गं नदिं तरिस्सति, तं **'गोतम-तित्थं'** नाम भविस्सती, ति। अथ खो भगवा येन द्वारेन निक्खमि, तं गोतम-द्वारं नाम अहोसि। अथ खो भगवा येन गङ्गानदी, तेनुपसङ्कमि। तेन

(४३) "जिस प्रदेश (में) पंडितपुरुष, शीलवान्, संयमी,
ब्रह्मचारियोंको भोजन कराकर वास करता है॥ १॥
"वहाँ जो देवता हैं, उन्हें दक्षिणा (=दान) देनी चाहिये।
वह देवता पूजित हो पूजा करते हैं, मानित हो मानते हैं॥ २॥
"तब (वह) औरस पुत्रकी भाँति उसपर अनुकम्पा करते हैं।
देवताओंसे अनुकम्पित हो पुरुष सदा मंगल देखता है॥ ३॥"

(४४) तब भगवान् ० सुनीथ और वर्षकारको इन गाथाओंसे अनुमोदन-कर, आसनसे उठकर चले गये।

उस समय ० सुनीथ, वर्षकार भगवान्के पीछे पीछे चल रहे थे—'श्रमण गौतम आज जिस द्वारसे निकलेंगे, वह **गौतम-द्वार**...होगा। जिस तीर्थ (=घाट) से **गंगा** नदी पार होंगे, वह **गौतम-तीर्थ**...होगा। तब भगवान् जिस द्वारसे निकले, वह गौतम-द्वार...हुआ। भगवान् जहाँ गंगा-नदी है, वहाँ गये। उस समय गंगा करारों बराबर भरी, करारपर बैठे कौवेके पीने योग्य थी। कोई आदमी नाव

खो पन समयेन गङ्गानदी पूरा होति। समतित्थिका काकपेय्या। अप्पेकच्चे मनुस्सा नावं परियेसन्ति। अप्पेकच्चे उलुम्पं परियेसन्ति। अप्पेकच्चे कुल्लं बन्धन्ति पारा पारं गन्तुकामा। अथ खो भगवा सेय्यथापि नाम, बलवा पुरिसो समिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य पसारितं वा बाहं समिञ्जेय्य, एवमेव गङ्गाय नदिया ओरिमं तीरे अन्तरहितो पारिमतीरे पच्चुट्ठासि सद्धिं भिक्खु संघेन। अद्दस खो भगवा ते मनुस्से अप्पेकच्चे नावं परियेसन्ते, अप्पेकच्चे उलुम्पं परियेसन्ते, अप्पेकच्चे कुल्लं बन्धन्ते पारा पारं गन्तुकामे। अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

(४५) ये तरन्ति अण्णवंसरं, सेतुं कत्वा विसज्ज पल्ललानि।
कुल्लं हि जनो पबन्धति, न तिण्ण मेधाविनो जना, ति॥

पठम भाणवारं॥ १॥

खोजते थे, कोई ० बेळा (=उलुम्प) खोजते थे, कोई ० कूला (=कुल्ल) बाँधते थे। तब भगवान्, जैसे कि बलवान् पुरुष समेटी बाँहको (सहज ही) फैला दे, फैलाई बाँहको समेट ले, वैसे ही भिक्षु-संघके साथ गंगा नदीके इस पारसे अन्तर्धान हो, परले तीरपर जा खळे हुए। भगवान्ने उन मनुष्योंको देखा, कोई कोई नाव खोज रहे थे ०। तब भगवान्ने इसी अर्थको जानकर, उसी समय यह उदान कहा—

(४५) "(पंडित) छोटे जलाशयों (=पल्वलों) को छोळ समुद्र और नदियोंको सेतुसे तरते हैं।

(जब तक) लोग कूला बाँधते रहते हैं, (तब तक) मेधावी जन तर गये रहते हैं"॥

(इति) प्रथम भाणवार॥ १॥

---

(४६) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"आयामानन्द ! येन **कोटिगामो**, तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति" ॥ 'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि ॥

(४७) अथ खो भगवा महता भिक्खु संघेन सद्धिं येन कोटिगामो, तदवसरि । तत्र सुदं भगवा कोटिगामे विहरति । तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"चतुन्नं भिक्खवे ! **अरिय-सच्चानं** अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च, कतमेसं चतुन्नं ?

(४८) [१] **दुक्खस्स** भिक्खवे ! अरिय-सच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च ॥

[२] दुक्ख-समुदयस्स भिक्खवे ! अरिय-सच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च ।

[३] दुक्ख-निरोधस्स भिक्खवे ! अरिय-सच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च ॥

[४] दुक्ख-निरोध-गामिनिया-पटिपदाय भिक्खवे ! अरिय-

कोटिग्राम—

(४६) तब भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—

"आओ आनन्द ! जहाँ **कोटिग्राम** है, वहाँ चलें ।" "अच्छा, भन्ते !"

(४७) तब भगवान् भिक्षु-संघके साथ जहाँ कोटिग्राम था, वहाँ गये । वहाँ भगवान् कोटि-ग्राममें विहार करते थे । भगवान्‌ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

"भिक्षुओ ! चारों आर्य-सत्योंके अनुबोध=प्रतिवेध न होनेसे इस प्रकार दीर्घकालसे (यह) दौळना=संसरण (=आवागमन) 'मेरा और तुम्हारा' हो रहा है । कौनसे चारोंसे ?

(४८) भिक्षुओ ! [१] दुःख आर्य-सत्यके अनुबोध-प्रतिबोध न होनेसे ० । [२] दुःख-समुदय ० । [३] दुःख-निरोध ० । [४] दुःख-निरोध-गामिनी प्रतिपद् ० ।

सच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च ॥

तयिदं भिक्खवे! दुक्खं-अरिय-सच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं। दुक्ख-समुदयं-अरिय-सच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं। दुक्ख-निरोधं-अरिय-सच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं। दुक्ख-निरोध-गामिनि-पटिपदा अरिय-सच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं। उच्छिन्ना भव तण्हा, खीणा भव नेत्ति। नत्थि दानि पुनब्भवो, ति।

(४९) इधमवोच भगवा, इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

चतुन्नं अरिय सच्चानं, यथाभूतं अदस्सना।
संसरितं दीघमद्धानं, तासुतास्वेव जातिसु ॥
तानि एतानि दिट्ठानि, भव नेत्ति समूहता।
उच्छिन्नं मूलं दुक्खस्स, नत्थि दानि पुनब्भवो, ति ॥

(५०) तत्र पि सुदं भगवा कोटिगामे विहरन्तो एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति। 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवे हि विमुच्चति। सेय्यथिदं,—कामासवा भवासवा अविज्जासवा, ति'।

भिक्षुओ! सो इस दुःख आर्य-सत्यको अनु-बोध प्रतिबोध किया ०, (तो) भव-तृष्णा उच्छिन्न हो गई, भवनेत्री (=तृष्णा) क्षीण हो गई"

(४९) यह कहकर सुगत (=बुद्ध) ने और यह भी कहा—"चारों आर्य-सत्योंको ठीकसे न देखनेसे,

उन उन योनियोंमें दीर्घकालसे आवागमन हो रहा है।
जब ये देख लिये जाते हैं, तो भवनेत्री नष्ट हो जाती है,
दुःखकी जळ कट जाती है, और फिर आवागमन नहीं रहता।

(५०) वहाँ कोटिग्राममें विहार करते भी भगवान्, भिक्षुओंको बहुत करके यही धर्म-कथा कहते थे यह शील ०। ०

(५१) अथ खो भगवा कोटिगामे यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"आयामानन्द ! येन नातिका, तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति"।

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

अथ खो भगवा महता भिक्खु संघेन सद्धिं येन नातिका, तदवसरि। तत्र पि सुदं भगवा नातिके विहरति गिञ्जकावसथे।

(५२) अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच। साल्हो नाम भन्ते ! भिक्खु नातिके कालं कतो, तस्स का गति, को अभिसम्परायो ?; नन्दा नाम भन्ते ! भिक्खुनी नातिके कालं कता, तस्सा का गति, को अभिसम्परायो ?; सुदत्तो

नादिका—

(५१) तब भगवान्‌ने कोटिग्राममें इच्छानुसार विहारकर, आयुष्मान् आनन्द को आमंत्रित किया –

"आओ आनन्द ! जहाँ नादिका* (=नाटिका) है, वहाँ चलें।"

"अच्छा, भन्ते !"

तब भगवान् महान् भिक्षु-संघ के साथ जहाँ नादिका है, वहाँ गये। वहाँ नादिकामें भगवान् गिंजकावसथमें विहार करते थे।

धर्म-आदर्श

(५२) तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये; जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह कहा—

"भन्ते ! साल्ह भिक्षु नादिका में मर गया, उसकी क्या गति=क्या अभिसम्पराय (=परलोक) हुआ ? नन्दा भिक्षुणी ० सुदत्त उपासक ०

---

* मिलाओ जनवसभसुत्त पृष्ठ १६०। दीघनिकाय।

नाम भन्ते! उपासको नातिके कालं कतो, तस्स का गति, को अभिसम्परायो? सुजाता नाम भन्ते! उपासिका नातिके कालं कता, तस्स का गति, को अभिसम्परायो? कुक्कुटो नाम भन्ते! उपासको नातिके कालं कतो, तस्स का गति, को अभिसम्परायो? कालिम्बो नाम भन्ते! उपासको नातिके कालं कतो, तस्स का गति, को अभिसम्परायो? निकटो नाम भन्ते! उपासको, कटिस्सहो नाम भन्ते! उपासको, तुट्ठो नाम भन्ते! उपासको, सन्तुट्ठो नाम भन्ते! उपासको, भद्दो नाम भन्ते! उपासको, सुभद्दो नाम भन्ते! उपासको नातिके कालं कतो, तस्स का गति, को अभिसम्परायो, ति?

(५२) साल्हो आनन्द! भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतो विमुत्तिं पञ्ञा विमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छि कत्वा उपसम्पज्ज विहासि। नन्दा नाम आनन्द! भिक्खुनी पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनी अनावत्ति धम्मा तस्मा लोका। सुदत्तो आनन्द! उपासको तिण्णं संयोजनानं परिक्खया राग दोस मोहानं तनुत्ता सकदागामि सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सति। सुजाता आनन्द! उपासिका

सुजाता उपासिका ० ककुध उपासक ० कालिंग उपासक ० निकट उपासक ० कटिस्सह उपासक ० तुट्ठ उपासक ० सन्तुट्ठ उपासक ० भद्द उपासक० भन्ते! सुभद्द उपासक नादिकामें मर गया, उसकी क्या गति = क्या अभिसम्पराय हुआ?"

(५२) "आनन्द! साल्ह भिक्षु इसी जन्ममें आस्रवों (=चित्तमलों) के क्षयसे आस्रव-रहित चित्तकी मुक्ति प्रज्ञा-विमुक्ति (=ज्ञानद्वारा मुक्ति) को स्वयं जानकर साक्षात्कर प्राप्तकर विहार कर रहा था। आनन्द! नन्दा भिक्षुणी पाँच अवरभागीय संयोजनोंके क्षयसे देवता हो वहाँसे न लौटनेवाली (अनागामी) हो वहीं (देवलोकमें) निर्वाण प्राप्त करेगी। सुदत्त उपासक आनन्द! तीन संयोजनोंके क्षीण होनेसे, राग-द्वेष-मोहके दुर्बल होनेसे सकृदागामी हुआ, एक ही बार इस लोकमें और आकर दुःखका अन्त करेगा। सुजाता उपासिका...तीन संयोजनोंके

तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्ना अविनिपात धम्मा नियता सम्बोधि परायना। कुक्कुटो नाम आनन्द! उपासको पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको तत्थ परिनिब्बायि अनावत्ति धम्मो तस्मा लोका। कालिम्बो आनन्द! उपासको ०। निकटो आनन्द! उपासको ०। कटिस्सहो आनन्द! उपासको०। तुट्ठो आनन्द! उपासको ०। सन्तुट्ठो आनन्द! उपासको ०। भद्दो आनन्द! उपासको ०! सुभद्दो आनन्द! उपासको ०। पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको तत्थ परिनिब्बायि अनावत्ति धम्मो तस्मा लोका। परो पञ्ञासं आनन्द! नातिके उपासका कालङ्कता पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनो अनावत्ति धम्मा तस्मा लोका। साधिका नवुति आनन्द! नातिके उपासका कालं कता तिण्णं संयोजनानं परिक्खया राग दोस मोहानं तनुत्ता सकदागामिनो सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सन्ति। सातिरेकानि आनन्द! पञ्चसतानि नातिके उपासका कालं कता तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्ना अविनिपात धम्मा नियता सम्बोधि परायना।

(५४) अनच्छरियं खो पनेतं आनन्द! यं मनुस्स भूतो कालं

क्षयसे न-गिरनेवाले बोधिके रास्ते पर आरूढ़ हो स्रोतआपन्न हुई। ककुध० अनागामी ०। कालिंग ०। निकट ०। कटिस्सह ०। तुट्ठ ०। संतुट्ठ ०। भद्द ०। सुभद्द उपासक आनन्द! पाँच अवरभागीय संयोजनोंके क्षयसे देवता हो वहाँसे न लौटने-वाला (=अनागामी) हो वहीं (देवलोकमें) निर्वाण प्राप्त करनेवाला है। आनन्द! नादिकामें पचाससे अधिक उपासक मरे हैं, जो सभी ० अनागामी ० हैं। ० नब्बेसे अधिक उपासक ० सकृदागामी ०। ० पाँचसौसे अधिक उपासक ० स्रोत-आपन्न ०।

(५४) आनन्द! यह ठीक नहीं, कि जो कोई मनुष्य मरे, उसके मरनेपर तथागतके पास आकर इस बातको पूछा जाय। आनन्द! यह तथागत को कष्ट

करेय्य तस्मिं येव कालं कते तथागतं उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पुच्छिस्सथ। विहेसाहेसा आनन्द! तथागतस्स। तस्मा-ति-हानन्द! धम्मादासं नाम धम्म परियायं देसेस्सामि। येन समन्नागतो अरिय सावको आकङ्खमानो अत्तनाव अत्तानं व्याकरेय्य—"खीण निरयोम्हि, खीण तिरच्छान योनि, खीण पित्ति विसयो, खीणा-पाय दुग्गति विनिपातो सोतापन्नो हमस्मि अविनिपात धम्मो नियतो सम्बोधि परायनो, ति"।

(५५) कतमो च सो आनन्द! धम्म-दासो, धम्म-परियायो? येन समन्नागतो अरिय सावको आकङ्खमानो अत्तनाव अत्तानं व्याकरेय्य "खीण निरयोम्हि, खीण तिरच्छान योनि, खीण पित्ति विसयो, खीणा-पाय, दुग्गति विनिपातो, सोतापन्नो हमस्मि, अविनिपात धम्मो, नियतो सम्बोधि परायनो, ति"।

[१] इधानन्द! अरिय सावको बुद्धे अवेच्च पसादेन समन्नागतो होति, "इति पि सो भगवा अरहं सम्मा सम्बुद्धो विज्जा चरण सम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिस दम्म सारथि सत्था देव-मनुस्सानं बुद्धो भगवा, ति"।

देना है। इसलिये आनन्द! धर्म-आदर्श नामक धर्म-पर्याय (=उपदेश) को उपदेशता हूँ। जिससे युक्त होनेपर आर्यस्रावक स्वयं अपना व्याकरण (=भविष्य-कथन) कर सकेगा—'मुझे नर्क नहीं, पशु नहीं, प्रेत-योनि नहीं, अपाय=दुर्गति=विनिपात नहीं। मैं न गिरनेवाला बोधिके रास्तेपर स्रोतआपन्न हूँ।'

(५५) आनन्द! क्या है वह धर्मादर्श धर्मपर्याय ०?—[१] *आनन्द! जो आर्यश्रावक बुद्धमें अत्यन्त श्रद्धायुक्त होता है—'वह भगवान् अर्हत्, सम्यक्-संबुद्ध (=परमज्ञानी), विद्या-आचरण-युक्त, सुगत, लोकविद्, पुरुषोंके दमन करनेमें अनुपम चाबुक-सवार, देवताओं और मनुष्योंके उपदेशक बुद्ध (=ज्ञानी) भगवान् हैं।'

---

* यही तीनों वाक्य-समूह त्रिरत्न (=बुद्ध-धर्म-संघ) की अनुस्मृति (=स्मरण), कही जाती है।

[२] धम्मे अवेच्च पसादेन समन्नागतो होति, "स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही, ति।"

[३] संघे अवेच्च पसादेन समन्नागतो होति, "सुप्पटिपन्नो भगवतो सावक संघो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावक संघो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावक संघो, सामिचिप्पटिपन्नो भगवतो सावक संघो, यदिदं चत्तारि पुरिस युगानि अट्ठ पुरिस पुग्गला एस भगवतो सावक संघो, आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जली करणीयो अनुत्तरं पुञ्ञखेत्तं लोकस्सा, ति।"

[४] अरिय कन्ते हि सीले हि समन्नागतो होति। अखण्डे हि अछिद्देहि असबलेहि अकम्मासे हि भुजिस्सो हि विञ्ञूपसट्ठे हि अपरामट्ठे हि समाधि संवत्तनिके हि। अयं खो सो आनन्द! धम्मदासो धम्म-परियायो येन समन्नागतो अरिय सावको आकङ्खमानो अत्तनाव अत्तानं ब्याकरेय्य, खीण निरयोम्हि, खीण तिरच्छान योनि, खीण पित्ति-

[२] ० धर्ममें अत्यन्त श्रद्धासे युक्त होता है—'भगवान्का धर्म स्वाख्यात (=सुन्दर रीतिसे कहा गया) है, वह सांदृष्टिक (=इसी शरीरमें फल देनेवाला), अकालिक (=कालान्तरमें नहीं सद्यः फलप्रद), एहिपस्सिक (=यहीं दिखाई देनेवाला), औपनयिक (=निर्वाणके पास ले जानेवाला), विज्ञ (पुरुषों) को अपने अपने भीतर (ही) विदित होनेवाला है।' [३] ० संघमें अत्यन्त श्रद्धासे युक्त होता है—'भगवान्का श्रावक (=शिष्य)-संघ सुमार्गारूढ़ है, भगवान्का श्रावक-संघ सरल मार्गपर आरूढ़ है, ० न्याय मार्गपर आरूढ़ है, ० ठीक मार्गपर आरूढ़ है, यह चार पुरुष-युगल (स्रोत-आपन्न, सकृदागामी, अनागामी और अर्हत्) और आठ पुरुष=पुद्गल हैं, यही भगवान्का श्रावक-संघ है, (जोकि) आह्वान करने योग्य है, पाहुना बनाने योग्य है, दान देने योग्य है, हाथ जोड़ने योग्य है, और लोकके लिये पुण्य (बोने) का क्षेत्र है।' [४] और अखंडित, निर्दोष, निर्मल, निष्कल्मष, सेवनीय, विज्ञ-प्रशंसित, आर्य

विसयो, खीणापाय, दुग्गति विनिपातो, सोतापन्नो हमस्मि, अविनिपात धम्मो, नियतो सम्बोधि परायनो, ति।

तत्र पि सुदं भगवा नातिके विहरन्तो गिञ्जकावसथे एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मिं कथं करोति। 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावित चित्तं सम्पदेव आसवे हि विमुच्चति। सेय्यथिदं,—कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति'।

(५६) अथ खो भगवा नातिके यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द ! येन वेसाली, तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति'।

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

(५७) अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन वेसाली, तदवसरि। तत्र सुदं भगवा वेसालियं विहरति "अम्बपालि-वने"।

तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सतो भिक्खवे ! भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी"। कथञ्च भिक्खवे !

(=उत्तम) कान्त, शीलों (=सदाचारों) से युक्त होता है। आनन्द ! यह धर्मादर्श धर्मपर्याय है ०।"

वहाँ नातिका में विहार करते भी भगवान् भिक्षुओं को यही धर्मकथा ०।

(५६) तब भगवान्‌ने नातिका में इच्छानुसार विहारकर आयुष्मान् आनन्दको आमंत्रित किया—"आओ आनन्द ! जहाँ वैशाली है, वहाँ चलें ! अच्छा, भन्ते !"

अम्बपाली गणिका का भोजन

(५७) ० तब भगवान् महाभिक्षु-संघके साथ जहाँ वैशाली थी वहाँ गये। वहाँ वैशालीमें अम्बपाली-वन में विहार करते थे।

वहाँ भगवान्‌ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

"भिक्षुओ ! स्मृति और संप्रजन्यके साथ विहार करो, यही हमारा अनुशासन है। कैसे...भिक्षु स्मृतिमान् होता है ? जब भिक्षुओ ! भिक्षु कायामें काय-अनुपश्यो

भिक्खु सतो होति ? इध भिक्खवे ! भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झा दोमनस्सं। वेदनासु चित्ते धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झा दोमनस्सं। एवं खो भिक्खवे ! भिक्खु सतो होति।

(५८) कथञ्च भिक्खवे ! भिक्खु सम्पजानो होति ? "इध भिक्खवे ! भिक्खु अभिक्कन्ते पटिक्कन्ते सम्पजान-कारी होति। आलोकिते विलोकिते सम्पजान-कारी होति। समञ्जिते पसारिते सम्पजान-कारी होति। संघाटि पत्त चीवर धारणे सम्पजान-कारी होति। असिते पिते खायिते सायिते सम्पजान-कारी होति। उच्चार पस्साव कम्मे सम्पजान-कारी होति। गते ठिते निसिन्ने सुत्ते जागरिते भासिते तुण्हिभावे सम्पजान-कारी होति। एवं खो भिक्खवे ! भिक्खु सम्पजानो होति। सतो भिक्खवे ! भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी", ति।

(=शरीरको उसकी बनावटके अनुसार केश-नख-मलमूत्र आदि के रूप में देखना) हो, उद्योगशील, अनुभवज्ञान-(=संप्रजन्य) युक्त, स्मृतिमान्, लोकके प्रति लोभ और द्वेष हटाकर विहरता है। वेदनाओं (=सुख दुःख आदि) में वेदनानुपश्यी हो०। चित्तमें चित्तानुपश्यी हो।० धर्मोंमें धर्मानुपश्यी हो०। इस प्रकार भिक्षु स्मृतिमान्, होता है।

(५८) कैसे...संप्रज्ञ (=संपजान) होता है। जब...भिक्षु जानते हुये गमन-आगमन करता है। जानते हुये आलोकन-विलोकन करता है। ० सिकोळना-फैलाना ०। ० संघाटी-पात्र-चीवरको धारण करता है। ० आसन, पान, खादन, आस्वादन करता है। ० पाखाना, पेशाब करता है। चलते, खळे होते, बैठते, सोते, जागते, बोलते, चुप रहते जानकर करनेवाला होता है। इस प्रकार भिक्षुओ! भिक्षु संप्रजानकारी होता है। इस प्रकार...संप्रज्ञ होता है। भिक्षुओ! भिक्षुको स्मृति और संप्रजन्य-युक्त विहरना चाहिये, यही हमारा अनुशासन है।"

(५९) अस्सोसि खो अम्बपाली गणिका—'भगवा किर वेसालिं अनुप्पत्तो वेसालियं विहरति मय्हं अम्बवने, ति'। अथ खो अम्बपाली गणिका भद्दानि भद्दानि यानानि योजापेत्वा भद्दं भद्दं यानं अभिरूहित्वा भद्दे हि भद्दे हि याने हि वेसालिया निय्यासि। येन सको आरामो, तेन पायासि। यावतिका यानस्स भूमि यानेन गन्त्वा याना पच्चोरोहित्वा पत्तिकाव येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि।

एकमन्तं निसिन्नं खो अम्बपालिं गणिकं भगवा धम्मिया कथाय सन्दस्सेसि समादपेसि समुत्तेजेसि संपहंसेसि।

अथ खो अम्बपाली गणिका भगवता धम्मिया कथाय सन्दस्सिता समादपिता समुत्तेजिता संपहंसिता भगवन्तं एतदवोच,—

"अधिवासेतु मे भन्ते! भगवा स्वातनाय भत्तं सद्धिं भिक्खु—संघेना, ति"।

अधिवासेसि भगवा तुण्हिभावेन।

(५९) अम्बपाली गणिकाने सुना—भगवान् वैशाली में आये हैं; और वैशालीमें मेरे आम्रवनमें विहार करते हैं। तब अम्बपाली गणिका सुन्दर सुन्दर (=भद्र) यानोंको जुळवाकर, एक सुन्दर यान पर चढ़ सुन्दर यानोंके साथ वैशाली से निकली; और जहाँ उसका आराम था, वहाँ चली। जितनी यानकी भूमि थी, उतनी यानसे जाकर, यानसे उतर पैदल ही जहाँ भगवान् थे, वहाँ गई। जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठ गई। एक ओर बैठी अम्बपाली गणिकाको भगवान्‌ने धार्मिक-कथासे संदर्शित समुत्तेजित...किया। तब अम्बपाली गणिका भगवान्‌से यह बोली—

"भन्ते! भिक्षु-संघके साथ भगवान् मेरा कलका भोजन स्वीकार करें।"

भगवान्‌ने मौनसे स्वीकार किया।

(६०) अथ खो अम्बपाली गणिका भगवतो अधिवासनं विदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि ।

(६१) अस्सोसुं खो वेसालिका लिच्छवी—'भगवा किर वेसालिं अनुप्पत्तो वेसालियं विहरति अम्बपालिवने, ति'। अथ खो ते लिच्छवी भद्दानि भद्दानि यानानि योजापेत्वा भद्दं भद्दं यानं अभिरूहित्वा भद्दे हि भद्दे हि याने हि वेसालिया निय्यिंसु । तत्र एकच्चे लिच्छवी नीला होन्ति, नीलवण्णा, नीलवत्था, नीला-लङ्कारा । एकच्चे लिच्छवी पीता होन्ति, पीत वण्णा, पीत वत्था, पीता-लङ्कारा । एकच्चे लिच्छवी लोहिता होन्ति, लोहित वण्णा, लोहित वत्था, लोहिता—लङ्कारा । एकच्चे लिच्छवी ओदाता होन्ति, ओदात वण्णा, ओदात वत्था, ओदाता-लङ्कारा ।

अथ खो अम्बपाली गणिका दहरानं दहरानं लिच्छवीनं अक्खेन-अक्खं चक्केन-चक्कं युगेन-युगं पटिवट्टेसि । अथ खो ते लिच्छवी अम्बपालिं गणिकं एतदवोचुं,—'किं जे अम्बपालि ! दहरानं दहरानं लिच्छवीनं अक्खेन-अक्खं चक्केन-चक्कं युगेन-युगं पटिवट्टेसी, ति ?'

(६०) तब अम्बपाली गणिका भगवान्‌की स्वीकृति जान, आसनसे उठ भगवान्‌को अभिवादनकर प्रदक्षिणाकर चली गई।

(६१) वैशालीके लिच्छवियोंने सुना—'भगवान् वैशालीमें आये हैं०'। तब वह लिच्छवि ० सुन्दर यानोंपर आरूढ़ हो ० वैशालीसे निकले। उनमें कोई कोई लिच्छवि नीले=नील-वर्ण नील-वस्त्र नील-अलंकारवाले थे। कोई कोई लिच्छवि पीले ० थे। ० लोहित (=लाल) ०। ० अवदात (=सफेद) ०। अम्बपाली गणिकाने तरुण तरुण लिच्छवियों के धुरोंसे धुरा, चक्कोंसे चक्का, जूयेसे जुआ टकरा दिया। उन लिच्छवियोंने अम्बपाली गणिकासे कहा—

"जे! अम्बपाली! क्यों तरुण तरुण (=दहर) लिच्छवियोंके धुरोंसे धुरा टकराती है। ०"

(६२) "तथा हि पन मे अय्यपुत्ता ! भगवा निमन्तितो स्वातनाय भत्त सद्धिं भिक्खु-संघेना, ति ।"

(६३) "देहि जे अम्बपालि ! एकं भत्तं सत-सहस्सेना, ति ।"

(६४) "सचेपि मे अय्यपुत्त ! वेसालिं साहारं दस्सथ, एवमहं तं भत्तं न दस्सामी, ति ।"

(६५) अथ खो ते लिच्छवी अङ्गुलिं फोटेसुं 'जितम्हा वत भो अम्बकाय !, जितम्हा वत भो अम्बकाया, ति !!'

(६६) अथ खो ते लिच्छवी येन अम्बपालि-वनं, तेन पायिंसु । अद्दस खो भगवा ते लिच्छवी दूरतोव आगच्छन्ते दिस्वा भिक्खू आमन्तेसि—"येसं भिक्खवे ! भिक्खून देवा तावतिंसा अदिट्ठा । ओलोकेथ भिक्खवे ! लिच्छवी परिसं, अपलोकेथ भिक्खवे ! लिच्छवी परिसं !!, उपसंहरथ भिक्खवे ! लिच्छवी परिसं तावतिंसा सदिसन्ति !!!

(६२) "आर्यपुत्रो ! क्योंकि मैंने भिक्षु-संघके साथ कलके भोजनके लिये भगवान् को निमन्त्रित किया है ।"

(६३) "जे ! अम्बपाली ! सौ हजार (कार्षापण)से भी इस भात (भोजन)को (हमें करनेके लिये) देदे ।"

(६४) "आर्यपुत्रो ! यदि वैशाली जनपद भी दो, तो भी इस महान् भातको न दूँगी ।"

(६५) तब उन लिच्छवियोंने अँगुलियाँ फोळीं—

"अरे ! हमें अम्बिकाने जीत लिया, अरे ! हमें अम्बिकाने वंचित कर दिया ।"

(६६) तब वह लिच्छवि जहाँ अम्बपाली-वन था, वहाँ गये । भगवान्ने दूरसे ही लिच्छवियोंको आते देखा । देखकर भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

"अवलोकन करो भिक्षुओ ! लिच्छवियोंकी परिषद्को । अवलोकन करो भिक्षुओ ! लिच्छवियोंकी परिषद्को । भिक्षुओ ! लिच्छवि-परिषद्को त्रायस्त्रिंश (देव)-परिषद् समझो (=उप-संहरथ) ।"

(६७) अथ खो ते लिच्छवी यावतिका यानस्स भूमि यानेन गन्त्वा याना पच्चो-रोहित्वा पत्तिकाव येन भगवा, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते लिच्छवी भगवा धम्मिया कथाय सन्दस्सेसि, समादपेसि समुत्तेजेसि संपहंसेसि। अथ खो ते लिच्छवी भगवता धम्मिया कथाय सन्दस्सिता समादपिता समुत्तेजिता संपहंसिता भगवन्तं एतदवोचुं—

"अधिवासेतु नो भन्ते! भगवा स्वातनाय भत्तं सद्धिं भिक्खु-संघेना, ति।"

(६८) अथ खो भगवा ते लिच्छवी एतदवोच,—"अधिवुत्तं खो मे लिच्छवी स्वातनाय अम्बपालिया गणिकाय भत्तन्ति।"

(६९) अथ खो ते लिच्छवी अङ्गुलिं फोटेसुं—'जितम्हा वत भो अम्बकाय! जितम्हा वत भो अम्बकाया, ति!!'

अथ खो ते लिच्छवी भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमिंसु।

(६७) तब वह लिच्छवि ० रथसे उतरकर पैदल ही जहाँ भगवान् थे, वहाँ... जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे लिच्छवियोंको भगवान्‌ने धार्मिक-कथासे ० समुत्तेजित ० किया। तब वह लिच्छवि ० भगवान् से बोले—

"भन्ते! भिक्षु-संघके साथ भगवान् हमारा कलका भोजन स्वीकार करें।"

(६८) "लिच्छवियो! कल तो, मैंने अम्बपाली-गणिका का भोजन स्वीकार कर दिया है।"

(६९) तब उन लिच्छवियोंने अँगुलियाँ फोळीं—

"अरे! हमें अम्बिकाने जीत लिया। अरे! हमें अम्बिकाने वंचित कर दिया।"

तब वह लिच्छवि भगवान्‌के भाषणको अभिनन्दितकर अनुमोदितकर, आसनसे उठ भगवान्‌को अभिवादनकर प्रदक्षिणाकर चले गये।

(७०) अथ खो अम्बपाली गणिका तस्सा रत्तिया अच्चयेन सके आरामे पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादापेत्वा भगवतो कालं आरोचापेसि—"कालो भन्ते! निट्ठितं भत्तन्ति!"

(७१) अथ खो भगवा पुब्बण्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवर-मादाय सद्धिं भिक्खु-संघेन येन अम्बपालिया गणिकाय निवेसनं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो अम्बपाली गणिका बुद्ध-पमुखं भिक्खु-संघं पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसि संपवारेसि। अथ खो अम्बपाली गणिका भगवन्तं भुत्ताविं ओणीथ पत्त पाणिं अञ्ञतरं नीचं आसनं गहेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्ना खो अम्बपाली गणिका भगवन्तं एतदवोच—"इमाहं भन्ते! आरामं बुद्ध-पमुखस्स भिक्खु संघस्स दम्मी, ति। पटिग्गहेसि भगवा आरामं।"

अथ खो भगवा अम्बपालिं गणिकं धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा संपहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कमि।

(७०) अम्बपाली गणिकाने उस रातके वीतनेपर, अपने आराममें उत्तम खाद्य-भोज्य तैयारकर, भगवान्‌को समय सूचित किया...।

(७१) भगवान् पूर्वाह्न समय पहिनकर पात्र चीवर ले भिक्षु-संघके साथ जहाँ अम्बपालीका परोसनेका स्थान था, वहाँ गये। जाकर बिछे आसन पर बैठे। तब अम्बपाली गणिकाने बुद्ध-प्रमुख भिक्षु-संघको अपने हाथसे उत्तम खाद्य-भोज्य द्वारा संतर्पित=संप्रवारित किया। तब अम्बपाली गणिका भगवान्‌के भोजनकर पात्रसे हाथ खींच लेनेपर, एक नीचा आसन ले, एक ओर बैठ गई। एक ओर बैठी अम्बपाली गणिका भगवान्‌से बोली—"भन्ते! मैं इस आरामको बुद्ध-प्रमुख भिक्षु-संघको देती हूँ।"

भगवान्‌ने आरामको स्वीकार किया। तब भगवान् अम्बपाली ० को धार्मिक-कथासे० समुत्तेजित-कर, आसनसे उठकर चले गये।

(७२) तत्र सुदं भगवा वेसालियं विहरन्तो अम्बपालिवने एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति, 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा। सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति। सेय्यथिदं,—कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति'॥

(७३) अथ खो भगवा अम्बपालिवने यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द! येन वेलुवगामको तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति'।

'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन वेलुवगामको, तदवसरि। तत्र सुदं भगवा वेलुवगामके विहरति। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"एथ तुम्हे भिक्खवे! समन्ता वेसालिं यथा मित्तं यथा सन्दिट्ठं यथा सम्भत्तं वस्सं उपेथ। अहं पन इधेव वेलुवगामके वस्सं उपगच्छामी, ति"!

'एवं भन्ते', ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा समन्ता वेसालिं यथा मित्तं यथा सन्दिट्ठं यथा सम्भत्तं वस्सं उपगच्छिंसु। भगवा पन तत्थेव वेलुवगामके वस्सं उपगच्छि।

(७२) वहाँ वैशालीमें विहार करते भी भगवान् भिक्षुओंको बहुत करके यही धर्म-कथा कहते थे ०।

वेलुव-ग्राम—

(७३) ० तब भगवान् महाभिक्षु-संघके साथ जहाँ वेलुव-गामक (=वेणु-ग्राम) था, वहाँ गये। वहाँ भगवान् वेलुव-गामकमें विहरते थे। भगवान्ने वहाँ भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

"आओ भिक्षुओ! तुम वैशालीके चारों ओर मित्र, परिचित...देखकर वर्षावास करो। मैं यहीं वेलुव-ग्रामकमें वर्षावास करूँगा।" "अच्छा, भन्ते!"... भगवान् भी उसी वेलुव ग्राम में वर्षावास करने लगे।

(७४) अथ खो भगवतो वस्सुपगतस्स खरो आबाधो उपज्जि बाल्हा वेदना वत्तन्ति मारणन्तिका। तत्र सुदं भगवा सतो सम्पजानो अधिवासेसि अविहञ्ञमानो। अथ खो भगवतो एतदहोसि, "न खो मे तं पतिरूपं स्वाहं अनामन्तेत्वा उपट्ठाके अनपलोकेत्वा भिक्खु-संघं परिनिब्बायेय्यं। यं नूनाहं इमं आबाधं वीरियेन पटिपणामेत्वा जीवित सङ्खारं अधिट्ठाय विहरेय्यन्ति"॥

अथ खो भगवा तं आबाधं वीरियेन पटिपणामेत्वा जीवित-सङ्खारं अधिट्ठाय विहासि। अथ खो भगवतो सो आबाधो पटिप्पस्सम्भि।

(७५) अथ खो भगवा गिलानावुट्ठितो अचिर वुट्ठितो गेलञ्ञा विहारा निक्खम्म विहार पच्छाया यं पञ्ञत्ते आसने निसीदि।

अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच,

सख्त बीमारी

(७४) वर्षावासमें भगवान्‌को कळी बीमारी उत्पन्न हुई। भारी मरणान्तक पीळा होने लगी। उसे भगवान्‌ने स्मृति-संप्रजन्यके साथ विना दुःख करते, स्वीकार (=सहन) किया। उस समय भगवान्‌को ऐसा हुआ—'मेरे लिये यह उचित नहीं, कि मैं उपस्थाकों (=सेवकों) को विना जतलाये, भिक्षु-संघको विना अवलोकन किये, परिनिर्वाण प्राप्त करूँ। क्यों न मैं इस आबाधा (=व्याधि) को हटाकर, जीवन-संस्कार (=प्राणशक्ति) को दृढ़तापूर्वक धारणकर, विहार करूँ। भगवान् उस व्याधिको वीर्य (=मनोबल) से हटाकर प्राण-शक्तिको दृढ़तापूर्वक धारणकर, विहार करने लगे। तब भगवान्‌को वह बीमारी शान्त हो गई।

(७५) भगवान् बीमारीसे उठ, रोगसे अभी अभी मुक्त हो, विहारसे (बाहर) निकलकर विहारकी छायामें बिछे आसनपर बैठे। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह कहा—

(७६) "दिट्ठो मे भन्ते! भगवतो फासु, दिट्ठं मे भन्ते! भगवतो खमनियं, अपि च मे भन्ते! मधुरकजातोविय कायो, दिसा पि मे न पक्खायन्ति। धम्मा पि मं नप्पटिभन्ति भगवतो गेलञ्ञेन। अपि च मे भन्ते! अहोसि काचिदेव अस्सास-मत्ता न ताव भगवा परिनिब्बायिस्सति। न यात्र भगवा भिक्खु संघं आरब्भ किञ्चिदेव उदाहरती, ति"॥

(७७) किंपनानन्द! भिक्खु संघो मयि पच्चासिंसति? देसितो आनन्द! मया धम्मो अनन्तरं अबाहिरं करित्वा, नत्थानन्द! तथागतस्स धम्मेसु **आचरिय मुट्ठि**। यस्स नुन आनन्द! एवमस्स अहं भिक्खु-संघं परिहरिस्सामी, ति वा ममुद्देसिको भिक्खु-संघो, ति वा सो नुन आनन्द! भिक्खु-संघं आरब्भ किञ्चिदेव उदाहरेय्य। तथागतस्स खो आनन्द! न एवं होति। "अहं भिक्खु-संघं परिहरिस्सामी, ति वा ममुद्देसिको भिक्खु-संघो, ति वा"। स किं आनन्द! तथागतो भिक्खु-संघं आरब्भ किञ्चिदेव उदाहरिस्सति?

(७६) "भन्ते! भगवान्‌को सुखी देखा! भन्ते! मैंने भगवान्‌को अच्छा हुआ देखा! भन्ते! मेरा शरीर शून्य हो गया था। मुझे दिशायें भी सूझ न पळती थीं। भगवान्‌की बीमारीसे (मुझे) धर्म (=बात) भी नहीं भान होते थे। भन्ते! कुछ आश्वासनमात्र रह गया था, कि भगवान् तबतक परिनिर्वाण नहीं प्राप्त करेंगे; जबतक भिक्षु-संघको कुछ कह न लेंगे।"

(७७) "आनन्द! भिक्षु-संघ मुझसे क्या चाहता है? आनन्द! मैंने न-अन्दर न-बाहर करके धर्म-उपदेश कर दिये। आनन्द! धर्मोंमें तथागतको (कोई) **आ चा र्य मु ष्टि** (=रहस्य) नहीं है। आनन्द! जिसको ऐसा हो कि मैं भिक्षु-संघको धारण करता हूँ, भिक्षु-संघ मेरे उद्देश्यसे है, वह जरूर आनन्द! भिक्षु-संघके लिये कुछ कहे। आनन्द! तथागतको ऐसा नहीं है...आनन्द! तथागत भिक्षु-संघ के लिये क्या कहेंगे? आनन्द! मैं जीर्ण=वृद्ध=महल्लक=अध्वगत=वय:प्राप्त हूँ। अस्सी वर्षकी मेरी उम्र है। आनन्द! जैसे पुरानी गाळी (=शकट) बाँध-बूँधकर चलती है, ऐसे ही आनन्द! मानों तथागतका

अहं खो पनानन्द ! एतरहि जिएणो वुड्ढो महल्लको अद्धगतो वयो अनुप्पत्तो। असीतिको मे वयो वत्तति। सेय्यथापि आनन्द ! जज्जर सकट वेध मिस्सकेन यापेति, एवमेव खो आनन्द ! वेध मिस्सकेन मञ्ञे तथागतस्स कायो यापेति। यस्मि आनन्द ! समये तथागतो सब्ब निमित्तानं अमनसिकारा एकच्चानं वेदनानं निरोधा अनिमित्तं चेतो समाधिं उपसम्पज्ज विहरति। फासुतरो आनन्द ! तस्मि समये तथागतस्स कायो होति। तस्मातिहानन्द ! अत्त-दीपा विहरथ अत्त-सरणा अनञ्ञ-सरणा। धम्म-दीपा धम्म-सरणा अनञ्ञ-सरणा।

कथञ्चानन्द ! भिक्खु अत्त-दीपो विहरति अत्त-सरणो अनञ्ञ-सरणो ? धम्म-दीपो धम्म-सरणो अनञ्ञ-सरणो ?

इधानन्द ! भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झा दोमनस्सं वेदनासु चित्तेसु। धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झा दोमनस्सं। एवं खो आनन्द ! भिक्खु अत्त-दीपो विहरति अत्त-सरणो अनञ्ञ-सरणो। येहि केचि आनन्द ! एतरहि वा मम वा अच्चयेन अत्त-दीपा विहरिस्सन्ति अत्त-सरणा अनञ्ञ-सरणा,

शरीर बाँध-बूँधकर चल रहा है। आनन्द ! जिस समय तथागत सारे निमित्तों (=लिंगों) को मनमें न करनेसे, किन्हीं किन्हीं वेदनाओंके निरुद्ध होनेसे, निमित्त-रहित चित्तकी समाधि (=एकाग्रता) को प्राप्त हो विहरते हैं, उस समय...तथागतका शरीर अच्छा (=फासुकत) होता है। इसलिये आनन्द ! आत्मदीप = आत्मशरण =

धम्मदीपा धम्म-सरणा अनञ्ञ-सरणा तम-तग्गे मे ते आनन्द ! भिक्खू भविस्सन्ति ये केचि सिक्खा-कामा, ति" ॥

दुतिय भाणवारं ॥२॥

(७८) अथ खो भगवा पुब्बन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसि। वेसालियं पिण्डाय चरित्वा पच्छा भत्तं पिण्डपात पटिक्कन्तो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'गण्हाहि आनन्द ! निसीदनं। येन चापाल चेतियं, तेनुपसङ्कमिस्साम दिवा विहाराया, ति' ॥

(७९) 'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा निसीदनं आदाय भगवन्तं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धि। अथ खो भगवा येन चापाल चेतियं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। आयस्मा पि खो आनन्दो भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि।

अनन्यशरण, धमदीप=धर्म-शरण=अनन्य-शरण होकर विहरो। कैसे आनन्द ! भिक्षु आत्मशरण ० होकर विहरता है ? आनन्द ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी ०*।"

(इति) द्वितीय भाणवार ॥२॥

(७८) तब भगवान् पूर्वाह्न समय पहनकर पात्र चीवर ले वैशालीमें भिक्षाके लिये प्रविष्ट हुए। वैशालीमें पिंडचारकर, भोजनोपरान्त......आयुष्मान् आनन्दसे बोले—

"आनन्द ! आसनी उठाओ, जहाँ चापाल-चैत्य है, वहाँ दिनके विहारके लिये चलेंगे।"

(७९) "अच्छा भन्ते।"—कह...आयुष्मान् आनन्द आसनी ले भगवान्के पीछे पीछे चले। तब भगवान् जहाँ चापाल-चैत्य था, वहाँ गये। जाकर बिछे आसनपर बैठे। आयुष्मान् आनन्द भी अभिवादन कर......। एक ओर बैठे

---

* देखो महासतिपट्टान-सुत्त २२ पृष्ठ १९० (दीघनिकाय)।

एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच,—"रम्मणीया आनन्द ! वेसाली, रम्मणीयं उदेन चेतियं, रम्मणीयं गोतमक चेतियं, रम्मणीयं सत्तम्ब चेतियं, रम्मणीयं बहुपुत्त चेतियं, रम्मणीयं आनन्द चेतियं, रम्मणीयं चापाल चेतियं" ॥

(८०) "यस्स कस्सचि आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकङ्खमानो कप्पं वा तिट्ठेय्य, कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो पन आनन्द ! चत्तारो इद्धि-पादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकङ्खमानो आनन्द ! तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य, कप्पावसेसं वा ति" ॥

(८१) एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओळारिके निमित्ते करियमाने, ओळारिके ओभासे करियमाने नासक्खि पटिविज्झितुं। न भगवन्तं याचि,—"तिट्ठतु भन्ते भगवा ! कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति" ॥ यथा तं मारेन परियुट्ठित चित्तो ॥

आयुष्मान् आनन्दसे भगवान्ने यह कहा—आनन्द ! वैशाली रमणीय है, ०।० चापाल चैत्य रमणीय है।

(८०) "आनन्द ! जिसने चार ऋद्धिपाद (=योगसिद्धियाँ) साधे हैं, बढ़ा लिये हैं, रास्ता कर लिये हैं, घर कर लिये हैं; अनुत्थित, परिचित और सुसमारब्ध कर लिये हैं, यदि वह चाहे तो कल्प भर ठहर सकता है, या कल्प के बचे (काल) तक। तथागतने भी आनन्द ! चार ऋद्धिपाद साधे हैं ०, यदि तथागत चाहें तो कल्प भर ठहर सकते हैं या कल्पके बचे (काल) तक।"

(८१) ऐसे स्थूल संकेत करनेपर भी, स्थूलतः प्रकट करनेपर आयुष्मान् आनन्द न समझ सके, और उन्होंने भगवान्से न प्रार्थना की—"भन्ते ! भगवान् बहुजन-हितार्थ बहुजन-सुखार्थ, लोकानुकम्पार्थ देव-मनुष्योंके अर्थ-हित-सुखके लिये कल्प भर ठहरें"; क्योंकि मारने उनके मनको फेर दिया था।

भगवता वाचा,—'न तावाहं पापिम ! परिनिब्बायिस्सामि याव मे भिक्खुनियो न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती, ति' ॥ एतरहि खो पन भन्ते ! भिक्खुनियो भगवतो साविका वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानिं करोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति" ॥

"परिनिब्बातु दानि भन्ते ! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो, परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवतो। भासितो खो पनेसा भन्ते ! भगवता वाचा,—'न तावाहं पापिम ! परिनिब्बायिस्सामि याव मे उपासका न सावका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति, उप्पन्नं

व्यक्त (=पंडित), विनययुक्त, विशारद, बहुश्रुत, धर्म-धर, धर्मानुसार धर्म मार्गपर आरूढ़, ठीक मार्गपर आरूढ़, अनुधर्मचारी न होंगे, अपने सिद्धान्त (=आचार्यक) को सीखकर उपदेश, आख्यान, प्रज्ञापन (=समझाना), प्रतिष्ठापन, विवरण= विभजन, सरलीकरण न करने लगेंगे, दूसरेके उठाये आक्षेपको धर्मानुसार खंडन करके प्रातिहार्य (=युक्ति) के साथ धर्मका उपदेश न करने लगेंगे।' इस समय भन्ते ! भगवान्के भिक्षु श्रावक० प्रातिहार्यके साथ धर्मका उपदेश करते हैं। भन्ते ! भगवान्

परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती, ति ॥'

एतरहि खो पन भन्ते! उपासका भगवतो सावका वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानिं करोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति" ॥

परिनिब्बातु दानि भन्ते! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते! भगवतो। भासिता खो पनेसा भन्ते! भगवतो वाचा,–'न तावाहं पापिम! परिनिब्बायिस्सामि याव मे उपासिका न साविका भविस्सन्ति, वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्म-प्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती, ति' ॥ एतरहि खो पन भन्ते! उपासिका भगवतो साविका वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारि-नियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति पट्ठपेन्ति

अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों ०। भन्ते! भगवान् यह बात कह चुके हैं—'पापी! मैं तब तक परिनिर्वाणको नहीं प्राप्त होऊँगा, जब तक मेरी भिक्षुणी श्राविकायें० प्रातिहार्यके साथ धर्मका उपदेश न करने लगेंगी।' इस समय ०। भन्ते! भगवान् यह बात कह चुके हैं—'पापी! मैं तब तक परिनिर्वाणको नहीं प्राप्त होऊँगा, जब तक मेरे उपासक श्रावक ०।' इस समय ०। भन्ते! भगवान् यह बात कह चुके हैं—

विवरन्ति विभजन्ति उत्तानिं करोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति ॥"

"परिनिब्बातु दानि भन्ते ! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो ! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवतो भासिता खो पनेसा भन्ते ! भगवता वाचा,—'न तावाहं पापिम ! परिनिब्बायिस्सामि याव मे इदं ब्रह्मचरियं इद्धञ्चेव भविस्सति फितञ्च वित्थारितं बहु जञ्ञं पुथुभूतं याव देव मनुस्से हि सुप्पकासितन्ति"। एतरहि खो पन भन्ते ! भगवतो ब्रह्मचरियं इद्धञ्चेव फितञ्च वित्थारितं बहु जञ्ञं पुथु-भूतं याव देव मनुस्से हि सुप्पकासितं ।

परिनिब्बातु दानि भन्ते ! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवता, ति ।'

(८६) एवं वुत्ते भगवा मारं पापिमन्तं एतदवोच,—"अप्पोसुक्को त्वं पापिम ! होहि, न चिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति, इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती, ति ।"

(८७) अथ खो भगवा चापाले चेतिये सतो सम्पजानो आयु-सङ्खार ओस्सज्जि, ओस्सट्ठे च भगवता आयुसङ्खारे महा-भूमिचालो अहोसि

'पापी ! मैं तब तक परिनिर्वाणको नहीं प्राप्त होऊँगा, जब तक मेरी उपासिका श्राविकायें ०।' इस समय ०। भन्ते ! भगवान् यह बात कह चुके हैं—'पापी ! मैं तब तक परिनिर्वाणको नहीं प्राप्त होऊँगा, जब तक कि यह ब्रह्मचर्य (=बुद्धधर्म) ऋद्ध (=उन्नत) =स्फीत, विस्तारित, बहुजनगृहीत, विशाल, देवताओं और मनुष्यों तक सुप्रकाशित न हो जायेगा।' इस समय भन्ते ! भगवान्‌का ब्रह्मचर्य ०।"

(८६) ऐसा कहनेपर भगवान्‌ने पापी मारसे यह कहा—"पापी ! बेफिक्र हो, न-चिर ही तथागतका परिनिर्वाण होगा। आजसे तीन मास बाद तथागत परिनिर्वाणको प्राप्त होंगे।"

(८७) तब भगवान्‌ने चापाल-चैत्यमें स्मृति-संप्रजन्यके साथ आयुसंस्कार (=प्राण-शक्ति) को छोळ दिया। जिस समय भगवान्‌ने आयु-संस्कार छोळा उस

भिंसनको सलोमहंसो। देव-दुद्रभियो च फलिंसु। अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा ताय' वेलाय' इमं उदानं उदानेसि—

(८८) तुल-मतुलञ्च सम्भवं, भव-सङ्खार-मवस्सजि मुनि।
अज्झत्त रतो समाहितो, अभिन्दिक वच-मिवत्त सम्भवन्ति ॥

(८९) अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि,—अच्छरियं वत भो! अब्भुतं वत भो!! महावताय' भूमिचालो सुमहावताय' भूमिचालो भिंसनको स-लोमहंसो। देव-दुद्रभियो च फलिंसु। कोनु खो हेतु को पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाया, ति! अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवो च,—

(९०) "अच्छरियं भन्ते! अब्भुतं भन्ते! महावताय' भन्ते! भूमि-चालो। सु-महावताय' भन्ते! भूमिचालो भिंसनको स-लोमहंसो।

समय भीषण रोमांचकारी महान् भूचाल हुआ, देवदुन्दुभियाँ वजीं। इस बातको जानकर भगवान्‌ने उसी समय यह उदान कहा—

(८८) "मुनिने अतुल-तुल उत्पन्न भव-संस्कार (=जीवन-शक्ति) को छोळ दिया। अपने भीतर रत और एकाग्रचित्त हो (उन्होंने) अपने साथ उत्पन्न कवचको तोळ दिया।"

(८९) तव आयुष्मान् आनंदको ऐसा हुआ—"आश्चर्य है! अद्भुत है!! यह महान् भूचाल है। सु-महान् भूचाल है। भीषण रोमांचकारी है। देव-दुन्दुभियाँ वज रही हैं। (इस) महान् भूचालके प्रादुर्भावका क्या हेतु=क्या प्रत्यय है?" तव आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर वैठ गये। एक ओर वैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह कहा—

(९०) "आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते! यह महान् भूचाल आया ० क्या हेतु=क्या प्रत्यय है?"

देवदुद्रभियो च फलिंसु कोनु खो भन्ते ! हेतु, को पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाया, ति ?

अट्ठ खो इमे आनन्द ! हेतू, अट्ठ पच्चया महतो भूमिचालस्स पातुभावाय। कतमे अट्ठ ?

[१] अयं आनन्द ! महापथवी उदके पतिट्ठिता। उदकं वाते पतिट्ठितं। वातो आकासट्ठो होति। सा खो आनन्द ! समयो यं महावाता वायन्ति। महावाता वायन्ता उदकं कम्पेन्ति। उदकं कम्पितं पथविं कम्पेति। अयं पठमो हेतु पठमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[२] पुन च परं आनन्द ! समणो वा होति ब्राह्मणो वा इद्धिमा चेतो-वसिप्पत्तो देवो वा महद्धिको महानुभावो। तस्स परित्ता पथवी-सञ्ञा भाविता होति। अप्पमाणा आपो-सञ्ञा। सो इमं पथविं कम्पेति संकम्पेति संपकम्पेति संपवेधेति। अयं दुतियो हेतु दुतियो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[३] पुन च परं आनन्द ! यदा बोधिसत्तो तुस्सिता काया चवित्वा सतो सम्पजानो मातु कुच्छिं ओक्कमति, तदा-यं पथवी कम्पति

"आनन्द ! महान् भूचालके प्रादुर्भावके ये आठ हेतु = आठ प्रत्यय होते हैं। कौनसे आठ ? [१] आनन्द ! यह महापृथिवी जलपर प्रतिष्ठित है, जल वायुपर प्रतिष्ठित है, वायु आकाशमें स्थित है। किसी समय आनन्द ! महावात (= तूफान) चलता है। महावातके चलनेपर पानी कंपित होता है। हिलता पानी पृथिवीको डुलाता है। आनन्द ! महाभूचालके प्रादुर्भावका यह प्रथम हेतु = प्रथम प्रत्यय है। [२] और फिर आनन्द ! कोई श्रमण या ब्राह्मण ऋद्धिमान् चेतोवशित्व (=योग-बल) को प्राप्त होता है, अथवा कोई दिव्यबलधारी=महानुभाव देवता होता है; उसने पृथिवी-संज्ञाकी थोळीसी भावना की होती है, और जल-संज्ञाकी बळी भावना। वह (अपने योगबलसे) पृथिवीको कंपित = संकंपित = संप्रकंपित=संप्रवेपित करता है।० यह द्वितीय हेतु है। [३]० जब बोधिसत्व तुषित देवलोकसे च्युत हो

संकम्पति संपकम्पति संपवेधति। अयं ततियो हेतु ततियो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[४] पुन च परं आनन्द! यदा बोधिसत्तो सतो सम्पजानो मातु कुच्छिस्मा निक्खमति, तदा-यं पथवी कम्पति संकम्पति संपकम्पति संपवेधति। अयं चतुत्थो हेतु चतुत्थो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[५] पुन च परं आनन्द! यदा तथागतो अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झति, तदा-यं पथवी कम्पति संकम्पति संपकम्पति संपवेधति। अयं पञ्चमो हेतु पञ्चमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[६] पुन च परं आनन्द! यदा तथागतो अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तेति, तदा-यं पथवी कम्पति संकम्पति संपकम्पति संपवेधति। अयं छट्ठो हेतु छट्ठो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[७] पुन च परं आनन्द! यदा तथागतो सतो सम्पजानो आयु-सङ्खारं ओस्सज्जति, तदा-यं पथवी कम्पति संकम्पति संपकम्पति संपवेधति। अयं सत्तमो हेतु सत्तमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय॥

[८] पुन च परं आनन्द! यदा तथागतो अनुपादिसेसाय निब्बान-धातुया परिनिब्बायति, तदा-यं पथवी कम्पति संकम्पति संपकम्पति

होश-चेतके साथ माताकी कोखमें प्रविष्ट होते हैं। ० यह तृतीय ०। [४] ० जब बोधिसत्व होश-चेतके साथ माताके गर्भसे बाहर आते हैं। ० यह चतुर्थ हेतु है। [५] ० जब तथागत अनुपम बुद्धज्ञान (=सम्यक् संबोधि) का साक्षात्कार करते हैं। ० यह पंचम हेतु है। [६] ० जब तथागत अनुपम धर्मचक्र (=धर्मोपदेश) को (प्रथम) प्रवर्तित करते हैं। ० यह षष्ठ हेतु है। [७] और आनन्द! जब तथागत होश-चेतके साथ जीवन-शक्तिको छोड़ते हैं। आनन्द! यह महाभूचालके प्रादुर्भावका सप्तम हेतु = सप्तम प्रत्यय है। [८] और फिर आनन्द! जब तथागत

संपवेधति । अयं अट्ठमो हेतु अट्ठमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय ॥

"इमे खो आनन्द ! अट्ठ हेतू, अट्ठ पच्चया, महतो भूमिचालस्स पातुभावाया,ति" ॥

(९१) अट्ठ खो इमा आनन्द ! परिसा; कतमा अट्ठ ? [१] खत्तिय-परिसा । [२] ब्राह्मण-परिसा । [३] गहपति-परिसा । [४] समण-परिसा । [५] चातुमहाराजिक-परिसा । [६] तावतिंस-परिसा । [७] मार-परिसा । [८] ब्रह्म-परिसा ॥

(९२) अभिजानामि खो पनाहं आनन्द ! अनेक सतं खत्तिय-परिसं उपसङ्कमित्वा, तत्र पि मया सन्निसिन्न पुब्बश्चेव सल्लपित पुब्बश्च साकच्छा च समापज्जित पुब्बा । तत्थ यादिसको तेसं वण्णो होति, तादिसको मय्हं वण्णो होति । यादिसको तेसं सरो होति, तादिसको मय्हं सरो होति । धम्मिया कथाय सन्दस्सेमि समादपेमि समुत्तेजेमि संपहंसेमि । भासमानञ्च मं न जानन्ति 'कोनु खो अयं भासति देवो वा मनुस्सो वा, ति ।' धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्ते-

संपूर्ण निर्वाणको प्राप्त होते हैं । ० यह अष्टम हेतु है । आनन्द ! महा-भूचालके यह आठ हेतु = प्रत्यय हैं ।

(९१) "आनन्द ! यह आठ (प्रकारकी) परिषद् (=सभा) होती हैं । कौनसी आठ ? [१] क्षत्रिय-परिषद्, [२] ब्राह्मण-परिषद्, [३] गृहपति-परिषद्, [४] श्रमण-परिषद्, [५] चातुर्महाराजिक-परिषद्, [६] त्रायस्त्रिंश-परिषद्, [७] मार-परिषद्, और [८] ब्रह्म-परिषद् ।

(९२) आनन्द ! मुझे अपना सैकळों क्षत्रिय-परिषदोंमें जाना याद है । और वहाँ भी (मेरा) पहिले भाषण किये जैसा, पहिले आये जैसा साक्षात्कार (होता है) । आनन्द ! ऐसी कोई बात देखनेका कारण नहीं मिला, जिससे कि

जेत्वा संपहंसेत्वा अन्तरधायामि। अन्तरहितञ्च मं न जानन्ति, 'कोनु खो अयं अन्तरहितो देवो वा मनुस्सो वा ति' ॥

(९३) अभिजानामि खो पनाहं आनन्द! अनेक सतं ब्राह्मण-परिसं०। गहपति-परिसं, समणपरिसं, चातुमहाराजिक-परिसं, तावतिंस-परिसं, मार-परिसं, ब्रह्म-परिसं उपसङ्कमित्वा तत्र पि मया सन्निसिन्न पुब्बञ्चेव सल्लपित पुब्बञ्च साकच्छा च समापज्जित पुब्बा। तत्थ यादिसको तेसं वण्णो होति, तादिसको मय्हं वण्णो होति। यादिसको तेसं सरो होति, तादिसको मय्हं सरो होति। धम्मिया कथाय संदस्सेमि समादपेमि समुत्तेजेमि संपहंसेमि। भासमानञ्च मं न जानन्ति, 'कोनु खो अयं भासति देवो वा मनुस्सो वा, ति?' । धम्मिया कथाय संदस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा संपहंसेत्वा अन्तरधायामि। अन्तरहितञ्च मं न जानन्ति, 'कोनु खो अयं अन्तरहितो देवो वा मनुस्सो वा, ति'। इमा खो आनन्द! अट्ठ परिसा ॥

(९४) अट्ठ खो इमानि आनन्द! **अभिभायतनानि**। कतमानि अट्ठ?

[१] अज्झत्तं रूप-सञ्ञी एको वहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्ण दुब्बण्णानि। तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी,ति एवं सञ्ञी होति। इदं पठमं अभिभायतनं ॥

मुझे वहाँ भय या घबराहट हो। क्षेमको प्राप्त हो, अभयको प्राप्त हो, वैशारद्यको प्राप्त हो, मैं विहार करता हूँ।

(९३) आनंद! मुझे अपना सैकड़ों ब्राह्मण-परिषदोंमें जाना याद है ०। ० गृहपति-परिषदोंमें ०। ० श्रमण-परिषदोंमें ०। ० चातुर्महाराजिक-परिषदोंमें ०। ० त्रायस्त्रिंश-परिषदोंमें ०। ० मार-परिषदोंमें ०। ० ब्रह्मपरिषदोंमें ०।

(९४) 'आनन्द! यह आठ अभिभू-आयतन (=एक प्रकारकी योग-क्रिया) है। कौनसे आठ? [१] अपने भीतर अकेला रूपका ख्याल रखनेवाला होता है, और बाहर स्वल्प सुवर्ण या दुवर्ण रूपोंको देखता है। 'उन्हें दबाकर (=अभिभूय)

[२] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्ण दुब्बण्णानि। तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी,ति एवं सञ्ञी होति। इदं दुतियं अभिभायतनं॥

[३] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्ण दुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी',ति एवं सञ्ञी होति। इदं ततियं अभिभायतनं॥

[४] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्ण दुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी',ति एवं सञ्ञी होति। इदं चतुत्थं अभिभायतनं॥

[५] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि नीलनिदस्सनानि नील निभासानि।—सेय्यथा पि नाम, उम्मा पुप्फं नीलं नील वण्णं नील निदस्सनं नील निभासं।—सेय्यथा वा पन, तं वत्थं बाराणसेय्यकं उभतो भाग विमट्ठं नीलं नील वण्णं नील निदस्सनं नील निभासं। एवमेव अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि नील निदस्सानि नील निभासानि॥ 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामीति', एवं सञ्ञी होति। इदं पञ्चमं अभिभायतनं॥

जानूँ देखूँ'—ऐसा ख़्याल रखनेवाला होता है। यह प्रथम अभिभूय-आयतन है। [२] अपने भीतर अकेला अ-रूपका ख़्याल रखनेवाला होता है, और बाहर अपरिमित सुवर्ण या दुवर्ण रूपोंको देखता है। 'उन्हें दबाकर जानूँ देखूँ'—ऐसा ख़्याल रखनेवाला होता है। यह द्वितीय ०। [३] अपने भीतर अकेला अ-रूपका ख़्याल रखनेवाला बाहर स्वल्प सुवर्ण या दुवर्ण रूपोंको देखता है ०। [४] अपने भीतर अ-रूपका ख़्याल ० बाहर सुवर्ण या दुवर्ण अपरिमित रूपोंका देखता है ०। [५] अपने भीतर अरूपका ख़्याल० बाहर नीले, नीले जैसे, नीलवर्ण, नीलनिदर्शन, नीलनिभास रूपोंको देखता है। जैसे कि अलसीका फूल नील=

[६] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति पीतानि पीत वण्णानि पीत निदस्सनानि पीत निभासानि। सेय्यथा पि नाम— कणिकार पुप्फं पीतं पीतवण्णं पीत निदस्सनं पीत निभासं। सेय्यथा वा पन, तं वत्थं बाराणसेय्यकं उभतो भाग विमट्ठं पीतं पीत वण्णं पीत निदस्सनं पीत निभासं। एव-मेव अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति पीतानि पीत वण्णानि पीत निदस्सनानि पीत निभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी',ति एवं सञ्ञी होति॥ इदं छट्ठं अभिभायतनं॥

[७] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति लोहितकानि लोहितक वण्णानि लोहितक निदस्सनानि लोहितक निभासानि। सेय्यथा पि नाम,—बन्धुजीवक पुप्फं लोहितकं लोहितक वण्णं लोहितक निदस्सनं लोहितक निभासं। सेय्यथा पि वा पन, तं वत्थं बाराणसेय्यकं उभतो भाग विमट्ठं लोहितकं लोहितक वण्णं लोहितक निदस्सनं लोहितक निभासं। एवमेव अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति लोहितकानि लोहितक वण्णानि लोहितक निदस्सनानि लोहितक निभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी', ति, एवं सञ्ञी होति। इदं सत्तमं अभिभायतनं।

नीलवर्ण = नीलनिदर्शन = नीलनिभास होता है; (वैसा) रूपोंको देखता है। जैसे दोनों ओरसे चिकना नील० बनारसी वस्त्र हो, ऐसे ही अपने भीतर अ-रूप ०।
[६] अपने भीतर अरूप ०, बाहर पीत (=पीले) ० देखता है। जैसे कि कर्णिकारका फूल पीत ०; जैसे कि दोनों ओरसे चिकना पीत ० काशीका वस्त्र ०।
[७] अपने भीतर अरूप ०, बाहर लोहित (=लाल) ० देखता है। जैसे कि बंधुजीवक (=अँड्हुल) का फूल लोहित ०; जैसे कि ० लाल ० काशीका वस्त्र ०।

[८] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदात वण्णानि ओदात निदस्सनानि ओदात निभासानि। सेय्यथा पि नाम—ओसधितारका ओदाता ओदात वण्णा ओदात निदस्सना ओदात निभासा। सेय्यथा वा पन,—तं वत्थं बाराणसेय्यकं उभतो भाग विमट्ठं ओदातं ओदात वण्णं ओदात निदस्सनं ओदात निभासं। एवमेव अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदात वण्णानि ओदात निदस्सनानि ओदात निभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी', ति, एवं सञ्ञी होति। इदं अट्ठमं अभिभायतनं। इमानि खो आनन्द! अट्ठ अभिभायतनानि।

(९५) अथ खो इमे आनन्द! "विमोक्खा।" कतमे अट्ठ?

[१] रूपी रूपानि पस्सति, अयं पठमो विमोक्खो॥

[२] अज्झत्तं अरूप-सञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति, अयं दुतियो विमोक्खो॥

[३] सुभन्तेव अधिमुत्तो होति, अयं ततियो विमोक्खो।

[४] सब्बसो रूप-सञ्ञानं समतिक्कम्मा पटिघ-सञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्त-सञ्ञानं अ-मनसिकारा अनन्तो आकासो, तिं आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति, अयं चतुत्थो विमोक्खो॥

[८] अपने भीतर अरूप ०, बाहर सफेद ० देखता है। जैसे कि शुक्रतारा सफेद ०; जैसे कि ० सफेद ० काशीका वस्त्र ०। आनन्द! यह आठ अभिभू-आयतन हैं।

(९५) "और फिर आनन्द! यह आठ विमोक्ष हैं। कौनसे आठ? [१] रूपी (=रूपवाला) रूपोंको देखता है, यह प्रथम विमोक्ष है। [२] शरीरके भीतर अरूपका ख्याल रखनेवाला हो बाहर रूपोंको देखता है ०। [३] सुभ (=शुभ्र) ही अधिमुक्त (=मुक्त) होते हैं ०। [४] सर्वथा रूपके ख्यालको अतिक्रमणकर, प्रतिहिंसाके ख्यालके लुप्त होनेसे, नानापनके ख्यालको मनमें न करनेसे 'आकाश

[५] सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म अनन्तं विञ्ञाणन्ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति, अयं पञ्चमो विमोक्खो ॥

[६] सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म नत्थि किञ्चीʼ ति, आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति; अयं छट्ठो विमोक्खो ॥

[७] सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञा-नासञ्ञा-यतनं उपसम्पज्ज विहरति; अयं सत्तमो विमोक्खो ॥

[८] सब्बसो नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञा वेदयित निरोधं उपसम्पज्ज विहरति; अयं अट्ठमो विमोक्खो। इमे खो आनन्द ! अट्ठ विमोक्खा ॥

(९६) एकमिदाहं आनन्द ! समयं उरुवेलायं विहरामि नज्जा नेरञ्जराय तीरे अजपाल-निग्रोधे पठमाभिसम्बुद्धो। अथ खो आनन्द ! मारो पापिमा येनाहं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो आनन्द ! मारो पापिमा मं एतदवोच, "परिनिब्बातु दानि भन्ते ! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो ! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवतो,ति॥"

अनन्त है'—इस आकाश-आनन्त्य-आयतनको प्राप्त हो विहरता है०। [५] सर्वथा आकाश-आनन्त्य-आयतनको अतिक्रमण कर 'विज्ञान (=चेतना) अनन्त है,—इस विज्ञान-आनन्त्य-आयतनको प्राप्त हो विहरता है ०। [६] सर्वथा विज्ञान-आनन्त्यको अतिक्रमणकर 'कुछ नहीं है'—इस आकिंचन्य-आयतनको प्राप्त हो विहरता है ०। [७] सर्वथा आकिंचन्य-आयतनको अतिक्रमणकर, नैवसंज्ञा-नासंज्ञा-आयतन (=जिस समाधिके आभासको न चेतना ही कहा जा सके, न अचेतना ही) को प्राप्त हो विहरता है ०। [८] सर्वथा नैवसंज्ञा-नासंज्ञा-आयतनको अतिक्रमणकर प्रज्ञावेदितनिरोध (=प्रज्ञाकी वेदनाका जहाँ निरोध हो) को प्राप्त हो विहरता है, यह आठवाँ विमोक्ष है।

(९६) "एक बार आनन्द ! मैं प्रथम प्रथम बुद्धत्वको प्राप्त हो उरुवेलामें नेरंजरा नदीके तीर अजपाल बर्गदके नीचे विहार करता था। तब आनन्द ! दुष्ट (=पापी) मार जहाँ मैं था वहाँ आया। आकर एक ओर खळा हो गया। और बोला—'भन्ते ! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों, सुगत ! परिनिर्वाणको प्राप्त हों।'

(९७) एवं वुत्ते अहं आनन्द! मारं पापिमन्तं एतदवोचं,—"न तावाहं पापिम! परिनिब्बायिस्सामि, याव मे भिक्खू न सावका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ति ॥

(९८) न तावाहं पापिम! परिनिब्बायिस्सामि, याव मे भिक्खुनियो न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ति ॥

(९९) न तावाहं पापिम! परिनिब्बायिस्सामि, याव मे उपासका न

(९७) ऐसा कहने पर आनन्द! मैंने दुष्ट मारसे कहा - 'पापी! मैं तब तक परिनिर्वाणको नहीं प्राप्त होऊँगा, जब तक मेरे भिक्षु श्रावक निपुण (=व्यक्त), विनय-युक्त, विशारद, बहुश्रुत, धर्मधर (=उपदेशोंको कंठस्थ रखनेवाले), धर्मके मार्गपर आरूढ़, ठीक मार्गपर आरूढ़, धर्मानुसार आचरण करनेवाले, अपने सिद्धान्त (=आचार्यक) को ठीकसे पढ़कर न व्याख्यान करने लगेंगे, न उपदेश करेंगे, न प्रज्ञापन करेंगे, न स्थापन करेंगे, न विवरण करेंगे, न विभाजन करेंगे, न स्पष्ट करेंगे; दूसरों द्वारा उठाये अपवादको धर्मके साथ अच्छी तरह पकळकर युक्ति (=प्रतिहार्य) के साथ धर्मका उपदेश न करेंगे।

(९८) जब तक कि मेरी भिक्षुणी श्राविकायें (=शिष्या) निपुण ०।०

(९९) उपासक श्रावक ०।०

सावका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ति ॥

(१००) न तावाहं पापिम ! परिनिब्बायिस्सामि, याव मे उपासिका न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनिता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानिं करिस्सन्ति उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ति ॥

(१०१) न तावाहं पापिम ! परिनिब्बायिस्सामि, याव मे इदं ब्रह्म-चरियं न इद्धञ्चेव भविस्सति फितञ्च वित्थारितं बाहुजञ्ञं पुथु भूतं याव देव मनुस्सेहि सुप्पकासितन्ति ।

(१०२) इदानेव खो आनन्द ! अज्ज चापाले चेतिये मारो पापिमा येनाहं, तेनुपसङ्कमि । उपसङ्कमित्वा एकमन्तं अट्ठासि । एकमन्तं ठितो खो आनन्द ! मारो पापिमा मं एतदवोच,—"परिनिब्बातु भन्ते ! भगवा परिनिब्बातु सुगतो ! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवतो । भासिता खो पनेसा भन्ते ! भगवता वाचा,—"न तावाहं पापिम !

(१००) उपासिका श्राविकायें ० ।

(१०१) जब तक यह ब्रह्मचर्य (=बुद्धधर्म) समृद्ध=वृद्धिगत, विस्तारको प्राप्त, बहुजन-संमानित, विशाल और देव-मनुष्यों तक सुप्रकाशित न हो जायगा ।

(१०२) आनन्द ! अभी आज इस चापाल-चैत्यमें मार पापी मेरे पास

भिक्खुनियो न साविका भविस्सन्ति० । याव मे उपासका न सावका भविस्सन्ति० । याव मे उपासिका न साविका भविस्सन्ति० । याव मे इदं ब्रह्मचरियं इद्धञ्चेव न भविस्सति फितञ्च वित्थारितं बाहु जञ्ञं पुथु भूतं याव देव मनुस्से हि सुप्पकासितन्ति ।" एतरहि खो भन्ते ! भगवतो ब्रह्मचरियं इद्धञ्चेव फितञ्च वित्थारितं बाहु जञ्ञं पुथु भूतं याव देव मनुस्से हि सुप्पकासितं । परिनिब्बातु दानि भन्ते ! भगवा, परिनिब्बातु सुगतो !! परिनिब्बान-कालो दानि भन्ते ! भगवतो, ति !!!

(१०३) एवं वुत्ते अहं आनन्द ! मारं पापिमन्तं एतदवोचं,—"अप्पो सुक्को त्वं पापिम ! होहि । न चिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति । इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती, ति ।" इदानि खो आनन्द ! अज्ज चापाले-चेतिये तथागतेन सतेन सम्पजानेन आयुसङ्खारो ओस्सट्ठो, ति ॥

(१०४) एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच,—"तिट्ठतु भन्ते ! भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति ।

आया । आकर एक ओर खळा...हो बोला—'भन्ते ! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों ० ।

(१०३) ऐसा कहने पर मैंने आनन्द ! पापी मारसे यह कहा—'पापी ! वेफिक्र हो, आजसे तीन मास बाद तथागत परिनिर्वाणको प्राप्त होंगे ।' अभी आनन्द ! इस चापाल-चैत्यमें तथागतने होश-चेतके साथ जीवन-शक्तिको छोळ दिया ।"

(१०४) ऐसा कहने पर आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह कहा—"भन्ते ! भगवान् बहुजन-हितार्थ, बहुजन-सुखार्थ, लोकानुकम्पार्थ, देव-मनुष्योंके अर्थ-हित-सुख के लिये कल्प भर ठहरें ।"

(१०५) "अलं दानि आनन्द! मा तथागतं याचि। अकालो दानि आनन्द! तथागतं याचनाया, ति" ॥

(१०६) दुतियम्पि खो आयस्मा आनन्दो०। ततियम्पि खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच,—"तिट्ठतु भन्ते! भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो! कप्पं बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति।"

(१०७) सद्दहसि त्वं आनन्द! तथागतस्स बोधिन्ति?

(१०८) 'एवं भन्ते ॥'

(१०९) अथ किञ्च रहि त्वं आनन्द! तथागतं याव ततियकं अभिनिप्पिलेसी, ति?

(११०) संमुखा मे तं भन्ते! भगवतो सुतं संमुखा पटिग्गहितं—"यस्स कस्सचि आनन्द! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। सो आकङ्खमानो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो आनन्द! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानी-कता वत्थु-कता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। सो आकङ्खमानो आनन्द! तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा, ति" ॥

(१०५) "बस आनंद! मत तथागतसे प्रार्थना करो! आनंद! तथागतसे प्रार्थना करनेका समय नहीं रहा।"

(१०६) दूसरी बार भी आयुष्मान् आनन्दने ०। तीसरी बार भी ०।

(१०७) "आनंद! तथागतकी बोधि (=परमज्ञान) पर विश्वास करते हो?"

(१०८) "हाँ, भन्ते!"

(१०९) "तो आनंद! क्यों तीन बार तक तथागतको दबाते हो?"

(११०) "भन्ते! मैंने यह भगवान्‌के मुखसे सुना, भगवान्‌के मुखसे ग्रहण किया—'आनंद! जिसने चार ऋद्धिपाद साधे हैं ०।'"

(१११) सद्दहसि त्वं आनन्दा, ति ?

(११२) 'एवं भन्ते !'

(११३) तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कटं तुय्हेवेतं अपरद्धं । यं त्वं तथागतेन एवं ओलारिके निमित्ते करियमाने, ओलारिके ओभासे करियमाने, ना सक्खि पटिविज्झितुं । न तथागतं याचि—'तिट्ठतु भन्ते ! भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति ।।' सचे त्वं आनन्द ! तथागतं याचेय्यासि, द्वेवते वाचा तथागतो पटिपक्खिपेय्य । अथ ततियकं अधिवासेय्य । तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कटं तुय्हेवेतं अपरद्धं ।

(११४) एकमिदाहं आनन्द ! मयं राजगहे विहरामि गिज्झकूटे पब्बते । तत्रापि खो ताहं आनन्द ! आमन्तेसिं,—'रम्मणीयं आनन्द ! राजगहं, रम्मणीयो आनन्द ! गिज्झकूटो पब्बतो, यस्स कस्सचि आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा । सो आकङ्खमानो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पाव-

(१११) "विश्वास करते हो आनन्द !"

(११२) "हाँ, भन्ते !"

(११३) "तो आनंद ! यह तुम्हारा ही दुष्कृत है, तुम्हारा ही अपराध है; जो कि तथागतके वैसा उदार-(=स्थूल) भाव प्रकट करने पर, उदार भाव दिखलानेपर भी तुम नहीं समझ सके । तुमने तथागतसे नहीं याचना की—'भन्ते ! भगवान् ० कल्प भर ठहरें' । यदि आनंद ! तुमने याचना की होती, तो तथागत दो ही वार तुम्हारी बातको अस्वीकृत करते, तीसरी वार स्वीकार कर लेते । इसलिये, आनंद ! यह तुम्हारा ही दुष्कृत (=दुक्कट) है, तुम्हारा ही अपराध है ।

(११४) "आनंद ! एक बार मैं **राजगृहके** **गृध्रकूट-पर्वत** पर विहार करता था । वहाँ भी आनंद ! मैंने तुमसे कहा—आनंद ! राजगृह रमणीय है । गृध्रकूट-पर्वत रमणीय है । आनंद ! जिसने चार ऋद्धिपाद साधे हैं ० । तथागतके

सेसंवा ॥ तथागतस्स खो आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकङ्खमानो आनन्द ! तथागतो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा, ति'। एवं पि खो त्वं आनन्द ! तथागतेन ओलारिके निमित्ते करियमाने, ओलारिके ओभासे करियमाने नासक्खि पटिविज्झितुं, न तथागतं याचि,—'तिट्ठतु भन्ते ! भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति' ॥ सचे त्वं आनन्द ! तथागतं याचेय्यासि, द्वेवते वाचा तथागतो पटिक्खीपेय्य, अथ ततियकं अधिवासेय्य; तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कटं तुय्हेवेतं अपरद्धं ॥

(११५) एकमिदाहं आनन्द ! समयं तत्थेव राजगहे विहरामि **गोतम-निग्रोधे** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि **चोर-पपाते** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि वेभार-पस्से **सत्तपण्णि-गुहायं** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि इसिगिलि-पस्से **काल-सिलायं** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि सितवने **सप्पसोण्डिक-पब्भारे** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि **तपोदारामे** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि **वेलुवने-कलन्दक-निवापे** ०। तत्थेव राजगहे विहरामि **जीवकम्बवने** ०।

ऐसा उदार भाव प्रकट करने पर ० भी तुम नहीं समझ सके ०। आनंद ! यह तुम्हारा ही दुष्कृत है, तुम्हारा ही अपराध है।

(११५) "आनंद ! एक बार मैं वहीं राजगृहके गौतम-न्यग्रोधमें विहार करता था ०। ० राजगृहके चोरपपात पर ०। ० राजगृहमें वैभार-पर्वतकी बगलमेंकी सप्तपर्णी (=सत्तपण्णी) गुहामें ०। ० ऋषिगिरिकी बगलमें कालशिलापर ०। ० शीतवनके सर्पशौंडिक (=सप्पसोंडिक) पहाळ (=पब्भार) पर ०। ० तपोदारामें ०। ० वेणुवनमें कलन्दक-निवापमें ०। ० जीवकाम्रवनमें ०। ०

तत्थेव राजगहे विहरामि मद्दकुच्छिस्मिं-मिगदाये ॥ तत्रापि खो ताहं आनन्द ! आमन्तेसिं,—"रम्मणीयं आनन्द ! राजगहं, रम्मणीयो गिज्झकूटो पब्बतो, रम्मणीयो गोतम निग्रोधो, रम्मणीयो चोर-पपातो, रम्मणीया वेभार-पस्से सत्तपण्णि-गुहा, रम्मणीया इसिगिलि-पस्से काल-सिला, रम्मणीयो सितवने सप्पसोण्डिक-पब्भारो, रम्मणीयो तपोदारामो, रम्मणीयो वेलुवने कलन्दक-निवापो, रम्मणीयं जीवकम्ब-वनं, रम्मणीयो मद्दकुच्छिस्मिं मिगदायो; यस्स कस्सचि आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा ०, सो आकङ्खमानो आनन्द ! तथागतो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा, ति' ॥

"एवं पि खो त्वं आनन्द ! तथागतेन ओलारिके निमित्ते करिय-माने ओलारिके ओभासे करियमाने नासक्खि पटिविज्झितुं ।" न तथागतं याचि—'तिट्ठतु भगवा ! कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति' । सचे त्वं आनन्द ! तथागतं याचेय्यासि, द्वेवते वाचा तथागतो पटिक्खीपेय्य, अथ ततियकं अधिवासेय्य । तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कतं तुय्हेवेतं अपरद्धं ।

(११६) एकमिदाहं आनन्द ! समयं इधेव वेसालियं विहरामि उदेने-चेतिये । तत्रा पि खो ताहं आनन्द ! आमन्तेसिं,—'रम्मणीया

मद्रकुक्षिमृगदावमें विहार करता था। वहाँ भी आनंद ! मैंने तुमसे कहा—आनन्द ! रमणीय है राजगृह । रमणीय है गौतमन्यग्रोध ०। तुम्हारा ही अपराध है ।

(११६) "आनन्द ! एक वार मैं इसी वैशालीके उदयनचैत्यमें विहार

आनन्द ! वेसाली, रम्मणीयं उदेन-चेतियं यस्स कस्सचि आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; सो आकङ्खमानो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा। तथागतस्स खो आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; सो आकङ्खमानो आनन्द ! तथागतो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा, ति'। एवं पि खो त्वं आनन्द ! तथागतेन ओलारिके निमित्ते करियमाने ओलारिके ओभासे करियमाने नासक्खि पटिविज्झितुं। न तथागतं याचि—'तिट्ठतु भगवा ! कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति'। सचे त्वं आनन्द ! तथागतं याचेय्यासि, द्वेवते वाचा तथागतो पटिक्खीपेय्य, अथ ततियकं अधिवासेय्य। तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कतं तुय्हेवेतं अपरद्धं।

एकमिदाहं आनन्द ! समयं इधेव वेसालियं विहरामि **गोतमके** चेतिये०। इधेव वेसालियं विहरामि **सत्तम्बे-चेतिये**०। इधेव वेसालियं विहरामि **बहुपुत्ते-चेतिये**०। इधेव वेसालियं विहरामि **सानन्दरे**[1] चेतिये०। इदानेव खो ताहं आनन्द ! अज्ज **चापाले-चेतिये**। आमन्तेसिं—'रम्मणीया आनन्द ! वेसाली, रम्मणीयं उदेनं-चेतियं, रम्मणीयं गोतमक-चेतियं, रम्मणीयं सत्तम्ब-चेतियं, रम्मणीयं बहुपुत्त-चेतियं, रम्मणीयं सानन्दरं-चेतियं, रम्मणीयं चापालं-चेतियं। यस्स कस्सचि आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; सो आकङ्खमानो कप्पंवा

करता था ०। ० गोतमक-चैत्य ०। ० सप्ताम्र (= सत्तम्ब) चैत्य ०। ० बहुपुत्रक-चैत्य ०। ० सारन्दद-चैत्य ०। अभी आज मैंने आनन्द ! तुम्हें इस चापाल-चैत्यमें कहा—आनन्द ! रमणीय है वैशाली ०। तुम्हारा ही अपराध है।

१. किसी २ में 'सारन्ददे' पाठ है।

तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा ; तथागतस्स खो आनन्द ! चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; सो आकङ्खमानो आनन्द ! तथागतो कप्पंवा तिट्ठेय्य कप्पावसेसंवा, ति'।

एवं पि खो त्वं आनन्द ! तथागतेन ओळारिके निमित्ते करियमाने, ओळारिके ओभासे करियमाने नासक्खि पटिविज्झितुं। न तथागतं याचि—'तिट्ठतु भगवा ! कप्पं, तिट्ठतु सुगतो ! कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति !!' सचे त्वं आनन्द ! तथागतं याचेय्यासि। द्वेव ते वाचा तथागतो पटिक्खीपेय्य। अथ ततियकं अधिवासेय्य। तस्मातिहानन्द ! तुय्हेवेतं दुक्कटं तुय्हेवेतं अपरद्धं।

(११७) "ननु एतं आनन्द ! मया पटिकच्चेव अक्खातं सब्बेहेव पियेहि मनापेहि नाना-भावो विना-भावो अञ्ञथा-भावो। तं कुतेत्थ आनन्द ! लब्भा। यन्तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं तं वतमापलुज्जी, ति। नेतं ठानं विज्जति। यं खो पनेतं आनन्द ! तथागतेन चत्तं वन्तं मुत्तं पहीनं पटिनिस्सट्ठं ओस्सट्ठो आयुसङ्खारो। एकंसेन वाचा तथागतेन भासिता। न चिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती, ति"। तञ्च तथागतो जीवितहेतु पुन पच्चा गमिस्सती, ति नेतं ठानं विज्जति।

(११७) "आनन्द ! क्या मैंने पहिले ही नहीं कह दिया—सभी प्रियों=मनापोंसे जुदाई वियोग=अन्यथाभाव होता है। सो वह आनन्द ! कहाँ मिल सकता है, कि जो उत्पन्न=भूत=संस्कृत, नाशमान है, वह न नष्ट हो। यह संभव नहीं। आनन्द ! जो यह तथागतने जीवन-संस्कार छोळा, त्यागा, प्रहीण=प्रतिनिःसृष्ट किया, तथागतने बिल्कुल पक्की बात कही है—जल्दी ही ० आजसे तीन मास बाद तथागतका परिनिर्वाण होगा। जीवनके लिए तथागत क्या फिर वमन कियेको निगलेंगे ! यह संभव नहीं।

(११८) आयामानन्द ! येन महावनं-कूटागार-साला, तेनुपसङ्कमिस्साम, ति ।

'एवं भन्ते,' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि ।

(११९) अथ खो भगवा आयस्मता आनन्देन सद्धिं येन महावनं कूटागार साला, तेनुपसङ्कमि । उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'गच्छ त्वं आनन्द ! यावतिका भिक्खू वेसालिं उपनिस्साय विहरन्ति, ते सब्बे उपट्ठान-सालायं सन्निपातेही, ति' ॥ 'एवं भन्ते,' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा यावतिका भिक्खू वेसालिं उपनिस्साय विहरन्ति, ते सब्बे उपट्ठान-सालायं सन्निपातेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि । उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि । एकमन्तं ठितो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच,—"सन्निपतितो भन्ते ! भिक्खु-संघो, यस्स दानि भन्ते ! भगवा कालं मञ्ञसी, ति ॥"

(१२०) अथ खो भगवा येनुपट्ठान-साला, तेनुपसङ्कमि । उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि । निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—'तस्मातिह भिक्खवे ! ये ते मया धम्मा अभिञ्ञा देसिता । ते वो साधुकं उग्गहेत्वा आसेवितब्बा भावेतब्बा बहुलीकातब्बा । यथयिदं ब्रह्मचरियं अद्धनियं अस्स चिर-ट्ठितिकं । तदस्स बहुजनहिताय बहुजनसुखाय

(११८) "आओ आनन्द ! जहाँ महावन-कूटागारशाला है, वहाँ चलें ।"

"अच्छा भन्ते ।" ० ।

(११९) भगवान् आयुष्मान् आनन्दके साथ जहाँ महावन कूटागार-शाला थी, वहाँ गये । जाकर आयुष्मान् आनन्दसे बोले—"आनन्द ! जाओ वैशालीके पास जितने भिक्षु विहार करते हैं, उनको उपस्थानशालामें एकत्रित करो ।" ० ।

(१२०) तब भगवान् जहाँ उपस्थानशाला थी वहाँ गये । जाकर बिछे आसनपर बैठे । बैठकर भगवान्ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—

लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानं'। कतमे च ते भिक्खवे! धम्मा मया अभिञ्ञा देसिता? ते वो साधुकं उग्गहेत्वा आसेवितब्बा भावितब्बा बहुलीकातब्बा। यथयिदं ब्रह्मचरियं अद्धनियं अस्स चिरट्ठितिकं। तदस्स बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानं? सेय्यथिदं,— [१] चत्तारो सतिपट्ठाना, [२] चत्तारो सम्मप्पधाना, [३] चत्तारो इद्धिपादा, [४] पञ्चिन्द्रियानि, [५] पञ्च बलानि, [६] सत्त बोज्झङ्गा, [७] अरियो-अट्ठङ्गिको-मग्गो। इमे खो भिक्खवे! धम्मा मया अभिञ्ञा देसिता। ते वो साधुकं उग्गहेत्वा आसेवितब्बा भावेतब्बा बहुलीकातब्बा। यथयिदं ब्रह्मचरियं अद्धनियं अस्स चिरट्ठितिकं। तदस्स बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देव मनुस्सानन्ति॥

(१२१) अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि,—"हन्द दानि भिक्खवे! आमन्तयामि वो वय धम्मा सङ्खारा अप्पमादेन सम्पादेथ। न चिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती,ति॥"

"इसलिए भिक्षुओ! मैंने जो धर्म उपदेश किया है, तुम अच्छी तौरसे सीखकर उसका सेवन करना, भावना करना, बढ़ाना; जिसमें कि यह ब्रह्मचर्य अध्वनीय = चिरस्थायी हो; यह (ब्रह्मचर्य) बहुजन-हितार्थ, बहुजन-सुखार्थ, लोकानुकंपार्थ; देव-मनुष्योंके अर्थ-हित-सुखके लिए हो। भिक्षुओ! मैंने यह कौनसे धर्म, अभिज्ञानकर, उपदेश किये हैं, जिन्हें अच्छी तरह सीखकर ०? जैसे कि [१] चार स्मृति-प्रस्थान, [२] चार सम्यक-प्रधान, [३] चार ऋद्धिपाद, [४] पाँच इन्द्रिय, [५] पाँच बल, [६] सात बोध्यंग, [७] आर्य अष्टांगिक-मार्ग।...।

(१२१) "हन्त! भिक्षुओ! तुम्हें कहता हूँ—संस्कार (=कृतवस्तु), नाश होनेवाले (=वयधम्मा) हैं, प्रमादरहित हो (आदर्शको) सम्पादन करो। अचिर-

(१२२) इदमवोच भगवा, इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

परिपक्को वयो मय्हं, परित्तं मम जीवितं।
पहाय वो गमिस्सामि, कतं मे सरणमत्तनो ॥
अप्पमत्ता सती-मन्तो, सुसीला होथ भिक्खवो! ।
सुसमाहित सङ्कप्पा, स-चित्त-मनुरक्खथ ॥
यो इमस्मिं धम्म-विनये, अप्पमत्तो विहस्सति।
पहाय जाति संसारं, दुक्खस्सन्तं करिस्सती, ति ॥

भाणवारं ततियं ॥ ३ ॥

(१२३) अथ खो भगवा पुब्बन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवर-मादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसि। वेसालियं पिण्डाय चरित्वा पच्छा भत्तं पिण्डपात पटिक्कन्तो नागापलोकितं वेसालिं अपलोकेत्वा आयस्मन्तं

कालमें ही तथागतका परिनिर्वाण होगा। आजसे तीन मास बाद तथागत परिनिर्वाण पायेंगे।"

(१२२) भगवान्ने यह कहा। सुगत शास्ताने यह कहकर फिर यह भी कहा—
"मेरी आयु परिपक्व हो गयी, मेरा जीवन थोड़ा है।
"तुम्हें छोड़कर जाऊँगा, मैंने अपने करने लायक (काम) को कर लिया ॥
भिक्षुओ! निरालस, सावधान, सुशील होओ।
संकल्पको अच्छी तरह समाधान कर अपने चित्तकी रक्षा करो ॥
जो इस धर्ममें प्रमादरहित हो उद्योग करेगा;
वह आवागमनको छोड़ दुःख का अन्त करेगा ॥

(इति) तृतीय भाणवारं ॥३॥

कुसीनारा की ओर—

(१२३) तब भगवान्ने पूर्वाह्ण समय पहिनकर पात्र चीवर ले वैशालीमें विहार कर, भोजनोपरान्त नागावलोकन (=हाथीकी तरह सारे शरीरको घुमाकर

आनन्दं आमन्तेसि,—'इदं पच्छिमकं आनन्द ! तथागतस्स वेसालिया दस्सनं भविस्सति।' आयामानन्द ! येन भण्डुगामो, तेनुपसङ्कमिस्साम,ति॥ 'एवं भन्ते',ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि॥

(१२४) अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन भण्डुगामो, तदवसरि। तत्र सुदं भगवा भण्डुगामे विहरति। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि,—'चतुन्नं भिक्खवे ! धम्मानं अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च। कतमे सं चतुन्नं ?

(१२५) [१]—अरियस्स भिक्खवे ! **सीलस्स** अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च॥

[२]—अरियस्स भिक्खवे ! **समाधिस्स** अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च॥

[३]—अरियाय भिक्खवे ! **पञ्ञाय** अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च॥

[४]—अरियाय भिक्खवे ! **विमुत्तिया** अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च॥

देखना) से वैशालीको देखकर, आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"आनन्द ! तथागतका यह अन्तिम वैशाली-दर्शन होगा। आओ आनंद ! जहाँ भण्डुगाम है, वहाँ चलें।" "अच्छा भन्ते !"...

भण्डुगाम—

(१२४) तब भगवान् महाभिक्षु-संघके साथ जहाँ भंडुग्राम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् भण्डुग्राममें विहार करते थे।

भिक्षुओ ! चार धर्मों का अवबोध न होनेसे प्रतिवेध न होनेसे ही इस प्रकार दीर्घकाल तक मेरा और तुम्हारा पैदा होना तथा मरना चलता रहा। कौनसे चार ?

(१२५) [१] भिक्षुओ ! आर्यशील का ज्ञान न होनेसे, प्रतिवेध न होनेसे०। [२] भिक्षुओ ! आर्य समाधिका......। [३] भिक्षुओ ! आर्य प्रज्ञाका...। [४] भिक्षुओ। आर्य विमुक्तिका...।

(१२६) तयिदं भिक्खवे ! अरियं सीलं अनुबुद्धं पटिविद्धं । अरियो समाधि अनुबोधो पटिविद्धो । अरिया पञ्ञा अनुबुद्धा पटिविद्धा । अरिया विमुत्ति अनुबुद्धा पटिविद्धा । उच्छिन्ना भव—तण्हा, खीणा भव नेत्ति, नत्थि दानि पुनब्भवोति । इदमवोच भगवा, इदं वत्वान सुगतो; अथापरं एतदवोच सत्था :—

(१२७) सीलं समाधि पञ्ञा च, विमुत्ति च अनुत्तरा ।
अनुबुद्धा इमे धम्मा, गोतमेन यसस्सिना ॥
इति बुद्धो अभिञ्ञाय, धम्ममक्खासि भिक्खुनं ।
दुक्खस्सन्त करो सत्था, चक्खुमा परिनिब्बुतो, ति ॥

(१२८) तत्रा पि सुदं भगवा भण्डुगामे विहरन्तो एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति । 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा; सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो० । पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवे हि विमुच्चति । सेय्यथिदं,—कामासवा भवासवा अविज्जासवा, ति ।

(१२६) भिक्षुओ ! उस आर्य-शीलका ज्ञान हुआ, प्रतिवेध हुआ । उस आर्य-समाधिका० । उस आर्य-प्रज्ञाका० । उस आर्य-विमुक्तिका० । भव-तृष्णा नष्ट हो गई । भव-नेता जाता रहा । अब पुनर्जन्म नहीं होगा । भगवान्ने यह कहा; और यह कहकर आगे भगवान्ने यह कहा—

(१२७) यशस्वी गोतमने शील, समाधि, प्रज्ञा तथा सर्वश्रेष्ठ विमुक्तिका प्रतिवेध प्राप्त किया ॥

बुद्धने इसे जानकर भिक्षुओंको धर्मका उपदेश किया । दुःखका अन्त करनेवाले शास्ता, चक्षुमान् शान्त हो गये ॥

(१२८) वहाँ भंडुग्राममें विहार करते भी भगवान्० ।

(१२९) अथ खो भगवा भण्डुगामे यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि,—'आयामानन्द! येन हत्थिगामो, येन अम्ब-गामो, येन जम्बुगामो, येन भोगनगरे, तेनुपसङ्कमिस्साम, ति'। 'एवं भन्ते', ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन भोगनगरं, तदवसरि।

(१३०) तत्र सुदं भगवा भोगनगरे विहरति सानन्दरे-चेतिये। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—'चत्तारो मे भिक्खवे! महापदेसे देसिस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ, भासिस्सामी, ति'। 'एवं भन्ते' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं।

(१३१) भगवा एतदवोच—

[१] इध भिक्खवे! भिक्खु एवं वदेय्य—'संमुखा मे तं आवुसो! भगवतो सुतं संमुखा पटिग्गहितं; अयं धम्मो, अयं विनयो, इदं सत्थु सासनन्ति'; तस्स भिक्खवे! भिक्खुनो भासितं नेव अभिनन्दितब्बं,

(१२९) ० जहाँ अम्बगाम (=आम्रग्राम) ०। ० जहाँ जम्बूग्राम (=जम्बू-ग्राम) ०। ० जहाँ भोगनगर ०।

भोगनगर—

(७) महाप्रदेश (कसौटी)

(१३०) वहाँ भोगनगरमें भगवान् सानन्दर-चैत्यमें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"भिक्षुओ! चार महाप्रदेश तुम्हें उपदेश करता हूँ, उन्हें सुनो, अच्छी तरह मनमें करो, भाषण करता हूँ।" "अच्छा भन्ते!" कह उन भिक्षुओंने भगवान्को उत्तर दिया।

(१३१) भगवान्ने यह कहा—[१] "भिक्षुओ! यदि (कोई) भिक्षु ऐसा कहे—आवुसो! मैंने इसे भगवान्के मुखसे सुना, मुखसे ग्रहण किया है; यह धर्म है, यह विनय है, यह शास्ताका उपदेश है, तो भिक्षुओ! उस दिन भिक्षुके भाषणका न अभिनन्दन करना, न निन्दा करना। अभिनन्दन न कर, निन्दा न कर, उन पद-व्यंजनोंको अच्छी तरह सीखकर, सूत्रसे तुलना करना, विनयमें देखना।

नप्पटिक्कोसितब्बं। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा तानि पद-ब्यञ्जनानि साधुकं उग्गहेत्वा सुत्ते ओसारेतब्बानि, विनये सन्दस्सेतब्बानि। तानि चे सुत्ते ओसरियमानानि विनये सन्दस्सियमानानि, न चेव सुत्ते ओसरन्ति, न च विनये सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं न चेव तस्स भगवतो वचनं, इमस्स च भिक्खुनो दुग्गहितन्ति।" इति हेतं भिक्खवे! छड्डेय्याथ। तानि चे सुत्ते ओसारियमानानि, विनये सन्दस्सियमानानि, सुत्ते चेव ओसरन्ति, विनये च सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं। "अद्धा इदं तस्स भगवतो वचनं, इमस्स च भिक्खुनो सुग्गहितन्ति"। इदं भिक्खवे! पठमं महापदेसं धारेय्याथ।

[२]—इध पन भिक्खवे! भिक्खु एवं वदेय्य—'अमुकस्मिं नाम आवासे संघो विहरति सथेरो सपामोक्खो। तस्स मे संघस्स संमुखा सुतं, संमुखा पटिग्गहितं, अयं धम्मो, अयं विनयो, इदं सत्थु सासनन्ति'। तस्स भिक्खवे! भिक्खुनो भासितं नेव अभिनन्दितब्बं, नप्पटिक्कोसितब्बं। अनभिनन्दित्वा, अप्पटिक्कोसित्वा, तानि पदब्यञ्जनानि साधुकं उग्गहेत्वा सुत्ते ओसारेतब्बानि, विनये सन्दस्सेतब्बानि; तानि चेव सुत्ते ओसारियमानानि, विनये सन्दस्सियमानानि, न चेव सुत्ते ओसरन्ति; न च विनये सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं। "अद्धा इदं न चेव तस्स भगवतो

यदि वह सूत्रसे तुलना करनेपर, विनयमें देखनेपर, न सूत्रमें उतरते हैं; न विनयमें दिखाई देते हैं; तो विश्वास करना कि अवश्य वह भगवान्‌का वचन नहीं है, इस भिक्षुका ही दुर्गृहीत है। ऐसा (होनेपर) भिक्षुओ! उसको छोळ देना। यदि वह सूत्रसे तुलना करनेपर, विनयमें देखनेपर, सूत्रमें भी उतरता है, विनयमें भी दिखाई देता है, तो विश्वास करना—अवश्य यह भगवान्‌का वचन है, इस भिक्षुका यह सुगृहीत है। भिक्षुओ! इसे प्रथम महाप्रदेश धारण करना।

"[२] और फिर भिक्षुओ! यदि (कोई) भिक्षु ऐसा कहे—आवुसो! अमुक आवास में स्थविर-युक्त प्रमुख-युक्त (भिक्षु)-संघ विहार करता है। मैंने उस

वचनं, तस्स च संघस्स दुग्गहितन्ति।" इति हेतं भिक्खवे! छड्डेय्याथ। तानि चे सुत्ते ओसारियमानानि, विनये सन्दस्सियमानानि, सुत्ते चेव ओसरन्ति, विनये च सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं तस्स भगवतो वचनं, तस्स च संघस्स सुग्गहितन्ति"। इदं भिक्खवे! दुतियं महापदेसं धारेय्याथ।

[३]—इध पन भिक्खवे! भिक्खु एवं वदेय्य—'अमुकस्मिं नाम आवासे सम्बहुला थेरा-भिक्खू विहरन्ति बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा। तेसं मे थेरानं संमुखा सुतं, संमुखा पटिग्गहितं। अयं धम्मो, अयं विनयो, इदं सत्थु सासनन्ति'। तस्स भिक्खवे! भिक्खुनो भासितं नेव अभिनन्दितब्बं०। न च विनये सन्दिस्सन्ति। निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं न चेव तस्स भगवतो वचनं, तेसञ्च थेरानं दुग्गहितन्ति।" इति हेतं भिक्खवे! छड्डेय्याथ। तानि चे सुत्ते ओसारियमानानि०। विनये चे सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं तस्स भगवतो वचनं, तेसञ्च थेरानं सुग्गहितन्ति।" इदं भिक्खवे! ततियं महापदेसं धारेय्याथ॥

[४]—इध पन भिक्खवे! भिक्खु एवं वदेय्य—'अमुकस्मिं नाम आवासे एको थेरो-भिक्खु विहरति बहुस्सुतो आगतागमो धम्मधरो

संघके मुखसे सुना, मुखसे ग्रहण किया है– यह धर्म है, यह विनय है, यह शास्ताका शासन है। ०। तो विश्वास करना, कि अवश्य उन भगवान्‌का वचन है, इसे संघने सुगृहीत किया। भिक्षुओ! यह दूसरा महाप्रदेश धारण करना।

"[३] ० भिक्षु ऐसा कहे—'आवुसो! अमुक आवासमें बहुतसे बहुश्रुत, आगत-आगम—(=आगमज्ञ), धर्म-धर, विनय-धर, मात्रिका-धर, स्थविर भिक्षु विहार करते हैं। यह मैंने उन स्थविरों के मुखसे सुना, मुखसे ग्रहण किया। यह धर्म है। ०। ०।

"[४] भिक्षुओ! (यदि) भिक्षु ऐसा कहे—अमुक आवासमें एक बहुश्रुत ०

विनयधरो मातिकाधरो तस्स मे थेरस्स संमुखा सुतं, संमुखा पटिग्गहितं अयं धम्मो, अयं विनयो, इदं सत्थु-सासनन्ति।' तस्स भिक्खवे! भिक्खुनो भासितं नेव अभिनन्दितब्बं, नप्पटिकोसितब्बं। अनभिनन्दित्वा अप्पटिकोसित्वा, तानि पद-ब्यञ्जनानि साधुकं उग्गहेत्वा सुत्ते ओसारेतब्बानि विनये सन्दस्सेतब्बानि। तानि चे सुत्ते ओसारियमानानि, विनये सन्दस्सियमानानि, न चेव सुत्ते ओसरन्ति, न च विनये सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं न चेव तस्स भगवतो वचनं, तस्स च थेरस्स दुग्गहितन्ति"। इति हेतं भिक्खवे! छड्डेय्याथ। तानि चे सुत्ते ओसारियमानानि विनये सन्दस्सियमानानि, सुत्ते चेव ओसरन्ति विनये च सन्दिस्सन्ति; निट्ठमेत्थ गन्तब्बं, "अद्धा इदं तस्स भगवतो वचनं, तस्स च थेरस्स सुग्गहितन्ति"। इदं भिक्खवे! चतुत्थं महापदेसं धारेय्याथ। इमे खो भिक्खवे! चत्तारो महापदेसे धारेय्याथा,ति॥

(१३२) तत्र पि सुदं भगवा भोगनगरे विहरन्तो सानन्दरे-चेतिये एतदेव बहुलं भिक्खूनं धम्मि-कथं करोति, 'इति सीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा; सील परिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो। समाधि परिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा। पञ्ञा परिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति;—सेय्यथिदं,— कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा, ति'॥

स्थविर भिक्षु विहार करता है। यह मैंने उस स्थविरके मुखसे सुना है, मुखसे ग्रहण किया है। यह धर्म है, यह विनय ०। भिक्षुओ! इसे चतुर्थ महाप्रदेश धारण करना।

भिक्षुओ! इन चार महाप्रदेशोंको धारण करना।"

(१३२) वहाँ भोगनगरमें विहार करते समय भी भगवान् भिक्षुओंको बहुत करके यही धर्म-कथा कहते थे ०।

(१३३) अथ खो भगवा भोगनगरे यथाभिरन्तं विहरित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द ! येन पावा, तेनुपसङ्कमिस्साम, ति'।
'एवं भन्ते !' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन पावा, तदवसरि। तत्र सुदं भगवा पावायं विहरति चुन्दस्स कम्मार-पुत्तस्स अम्बवने।
(१३४) अस्सोसि खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो—'भगवा किर पावं अनुप्पत्तो पावायं विहरति मय्हं अम्बवने, ति'। अथ खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो चुन्दं कम्मार-पुत्तं भगवा धम्मिया-कथाय सन्दस्सेसि समादपेसि समुत्तेजेसि संपहंसेसि। अथ खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो भगवता धम्मिया-कथाय सन्दस्सितो समादपितो समुत्तेजितो संपहंसितो भगवन्तं एतदवोच,—'अधिवासेतु मे भन्ते ! भगवा स्वातनाय भत्तं सद्धिं भिक्खु-संघेना, ति'। अधिवासेसि भगवा तुण्हिभावेन।

पावा—

चुन्दका अन्तिम भोजन

(१३३) ० तब भगवान् भिक्षु-संघके साथ जहाँ पावा थी, वहाँ गये। वहाँ पावामें भगवान् चुन्द कर्मार-(=सोनार) -पुत्रके आम्रवन में विहार करते थे।
(१३४) चुन्द कर्मारपुत्रने सुना—भगवान् पावामें आये हैं; पावामें मेरे आम्रवनमें विहार करते हैं। तब चुन्द कर्मार-पुत्र जहाँ भगवान् थे, वहाँ...जाकर भगवान्‌को अभिवादनकर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे चुन्द कर्मार-पुत्रको भगवान्‌ने धार्मिक-कथासे ० समुत्तेजित ० किया। तब चुन्द ० ने भगवान् की धार्मिक-कथासे ० समुत्तेजित ० हो भगवान्‌से यह कहा—
"भन्ते ! भिक्षु-संघके साथ भगवान् मेरा कलका भोजन स्वीकार करें।"
भगवान्‌ने मौनसे स्वीकार किया।

(१३५) अथ खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो भगवतो अधिवासनं विदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमि। अथ खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो तस्सा रत्तिया अच्चयेन सके निवेसने पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादापेत्वा बहुतञ्च सुकर-मद्दवं। भगवतो कालं आरोचापेसि—'कालो भन्ते! निट्ठितं भत्तन्ति'।

(१३६) अथ खो भगवा पुब्बन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवरमादाय सद्धिं भिक्खु-संघेन येन चुन्दस्स कम्मार-पुत्तस्स निवेसनं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा चुन्दं कम्मार-पुत्तं आमन्तेसि—'यन्ते चुन्द! सुकर-मद्दवं पटियत्तं, तेन मं परिविस; यं पनञ्ञं खादनीयं भोजनीयं पटियत्तं, तेन भिक्खु-संघं परिविसा, ति'।

(१३७) 'एवं भन्ते'! ति खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो भगवतो पटिस्सुत्वा यं अहोसि सुकर-मद्दवं पटियत्तं, तेन भगवन्तं परिविसि। यं पनञ्ञं खादनीयं भोजनीयं पटियत्तं, तेन भिक्खु-संघं परिविसि।

(१३५) तब चुन्द कर्मार-पुत्र भगवान्‌की स्वीकृतिको जान, आसनसे उठ, भगवान्‌को अभिवादन और प्रदक्षिणा करके चला गया। तब चुन्द कर्मार-पुत्रने उस रातके बीतने पर उत्तम खाद्य-भोज्य (और) बहुत सा शूकर-मार्दव (=सूकर-मद्दव)* तैयार करवा, भगवान्‌को कालकी सूचना दी—"भगवान्! भोजनका समय हो गया है।"

(१३६) तब भगवान् पूर्वाह्ण समय पहिन कर पात्र चीवर ले भिक्षु-संघके साथ जहाँ चुन्द कर्मार-पुत्रका घर था, वहाँ गये। जाकर बिछे आसन पर बैठे। बैठे हुए भगवान्‌ने चुन्द कर्मार-पुत्रको आमन्त्रित किया,—"चुन्द! जो शूकर-मार्दव तय्यार किया है, उसे हमें परोस, और जो खाद्य-भोज्य तैयार है, भिक्षु-संघको देना।

(१३७) "अच्छा भन्ते!"........।

---

* सुअरका मांस या शूकरकन्द का पाक। (अट्ठकथा)

(१३८) अथ खो भगवा चुन्दं कम्मार-पुत्तं आमन्तेसि—'यन्ते चुन्द ! सुकर-मद्दवं अवसिट्ठं, तं सोब्भे निखणाहि । नाहं तं चुन्द ! पस्सामि स-देवके लोके स-मारके स-ब्रह्मके स-स्समण ब्राह्मणिया पजाय स-देव मनुस्साय, यस्स तं परिभुत्तं सम्मा परिणामं गच्छेय्य अञ्ञत्र तथागतस्सा, ति' ।

(१३९) 'एवं भन्ते', ति खो चुन्दो कम्मार-पुत्तो भगवतो पटिस्सुत्वा यं अहोसि सुकर-मद्दवं अवसिट्ठं, तं सोब्भे निखणित्वा येन भगवा, तेनुपसङ्कमि । उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि । एकमन्तं निसिन्नं खो चुन्दं कम्मार-पुत्तं भगवा धम्मिया-कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा संपहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कमि ।

(१४०) अथ खो भगवतो चुन्दस्स कम्मार-पुत्तस्स भत्तं भुत्ताविस्स खरो आबाधो उप्पज्जि । लोहित पक्खन्दिका पबाल्हा वेदना वत्तन्ति मारणन्तिका । ता सुदं भगवा सतो सम्पजानो अधिवासेसि अविहञ्ञमानो ।

(१३८) तब भगवान्‌ने चुन्द कर्मार-पुत्रको आमन्त्रित किया,—चुन्द ! जो शूकर-मार्दव बच गया है, उसको गड्ढा खोदकर गाड़ दे । चुन्द ! देव, मार, ब्रह्मा सहित लोकमें और श्रमण-ब्राह्मण, और देवता-मनुष्य सहित इस प्रजामें तथागतको छोड़ कर और कोई नहीं दिखाई देता, जो इस (भोजन) को पचा सकेगा ।

(१३९) "अच्छा भन्ते !"... । एक ओर बैठे चुन्द कर्मार-पुत्रको भगवान् धार्मिक-कथासे ० समुत्तेजित ० कर आसन से उठकर चल दिये ।

(१४०) तब चुन्द कर्मार-पुत्रके भात (=भोजन) को खाकर भगवान्‌को खून गिरनेकी, कड़ी बीमारी उत्पन्न हुई, मरणान्तक सख्त पीड़ा होने लगी । उसे भगवान्‌ने स्मृति-संप्रजन्ययुक्त हो, बिना दुःखित हुए, सहन किया । तब भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दको संबोधित किया—

(१४१) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द! येन कुसिनारा, तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति'। 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

(१४२) चुन्दस्स भत्तं भुञ्जित्वा, कम्मारस्साति मे सुतं।
आबाधं संफुसि धीरो, पबाल्हं मारणन्तिकं॥
भुत्तस्स च सूकर-मद्दवेन, ब्याधि पबाल्हो उदपादि सत्थुनो।
विरेचमानो भगवा अवोच, गच्छामहं कुसिनारं नगरन्ति॥

(१४३) अथ खो भगवा मग्गा ओक्कम्म येन अञ्ञतरं रुक्खमूलं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं आनन्द! चतुगुणं संघाटिं पञ्ञपेहि। किलन्तोस्मि आनन्द! निसीदिस्सामी, ति'।

(१४४) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा चतुगुणं संघाटिं पञ्ञपेसि। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं आनन्द! पानियं आहर, पिपासितोस्मि आनन्द! पिविस्सामी, ति'।

(१४१) ० "आओ आनन्द! जहाँ कुसीनारा है, वहाँ चलें।" "अच्छा भन्ते।"

(१४२) मैंने सुना है—चुन्द कर्मारके भातको भोजनकर,
धीरको मरणान्तक भारी रोग हो गया।
सूकर-मार्दवके खानेपर शास्ताको भारी रोग उत्पन्न हुआ।
विरेचनोंके होते समय ही भगवान्‌ने कहा—चलो, कुसीनारा चलें॥

(१४३) तब भगवान् मार्गसे हटकर एक वृक्षके नीचे गये। जाकर आयुष्मान् आनन्दसे कहा—

"आनन्द! मेरे लिये चौपेती संघाटी बिछा दो, मैं थक गया हूँ, बैठूँगा।

(१४४) "अच्छा भन्ते!"...आयुष्मान् आनन्दने चौपेती संघाटी बिछा दी, भगवान् बिछे आसनपर बैठे। बैठकर भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"आनन्द! मेरे लिये पानी लाओ। प्यासा हूँ, आनंद! पानी पिऊँगा।"

(१४५) एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—'इदानि भन्ते! पञ्चमत्तानि सकट सतानि अतिक्कन्तानि तं चक्कच्छिन्नं उदकं परित्तं लुलितं आविलं सन्दति। अयं भन्ते! ककुधा नदी अविदूरे अच्छोदका सातोदका सीतोदका सेतोदका सुप्पतित्था रम्मणीया। एत्थ भगवा पानियञ्च पिविस्सति, गत्तानि च सीतं करिस्सती, ति'।

(१४६) दुतियम्पि खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं आनन्द! पानियं आहर, पिपासितोस्मि आनन्द! पिविस्सामी, ति'।

दुतियम्पि खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—'इदानि भन्ते! पञ्चमत्तानि सकट सतानि अतिक्कन्तानि तं चक्कच्छिन्नं उदकं परित्तं लुलितं आविलं सन्दति। अयं भन्ते! ककुधा नदी अविदूरे अच्छोदका सातोदका सीतोदका सेतोदका सुप्पतित्था रम्मणीया। एत्थ भगवा पानियञ्च पिविस्सति, गत्तानि च सीतं करिस्सती, ति'।

(१४७) ततियम्पि खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं आनन्द! पानियं आहर, पिपासितोस्मि आनन्द! पिविस्सामी, ति'।

(१४५) ऐसा कहने पर आयुष्मान् आनंदने भगवान् से यह कहा—

"भन्ते! अभी अभी पाँच सौ गाड़ियाँ निकली हैं। चक्कोंसे मथा हिंडा पानी मैला होकर बह रहा है। भन्ते! यह सुंदर जलवाली, शीतल जलवाली, सफेद, सुप्रतिष्ठित रमणीय ककुत्था* नदी करीबमें है। वहाँ (चलकर) भगवान् पानी पीयेंगे, और शरीरको ठंडा करेंगे।

(१४६) दूसरी बार भी भगवान्ने ०।

(१४७) तीसरी बार भी भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"आनन्द! मेरे लिये पानी लाओ ०।"

---

* बर्मी पिटक में 'ककुधा' पाठ है।

(१४८) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा पत्तं गहेत्वा येन सा नदिका, तेनुपसङ्कमि। अथ खो सा नदिका चक्कच्छिन्ना परित्ता लुलिता आविला सन्दमाना आयस्मन्ते आनन्दे उपसङ्कमन्ते अच्छा विप्पसन्ना अनाविला सन्दित्थ। अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—'अच्छरियं वत भो! अब्भूतं वत भो! तथागतस्स महिद्धिकता महानुभावता। अयं हि सा नदिका चक्कच्छिन्ना परित्ता लुलिता आविला सन्दमाना मयि उपसङ्कमन्ते अच्छा विप्पसन्ना अनाविला सन्दती, ति'॥ पत्तेन पानियं आदाय येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं एतदवोच—'अच्छरियं भन्ते! अब्भुतं भन्ते! तथागतस्स महिद्धिकता महानुभावता। इदानि सा भन्ते! नदिका चक्कच्छिन्ना परित्ता लुलिता आविला सन्दमाना मयि उपसङ्कमन्ते अच्छा विप्पसन्ना अनाविला सन्दित्थ। पिवतु भगवा! पानियं, पिवतु सुगतो! पानियन्ति'। अथ खो भगवा पानियं अपायि॥

(१४९) तेन खो पन समयेन पुक्कुसो मल्ल पुत्तो आलारस्स

(१४८) "अच्छा भन्ते!" कह भगवान्‌को उत्तर दे पात्र लेकर जहाँ वह नदी थी, वहाँ गये। तब वह चक्कोंसे मथे हिंडे मैले थोड़े पानीके साथ बहनेवाली नदी, आयुष्मान् आनन्दके वहाँ पहुँचने पर स्वच्छ निर्मल (हो) बहने लगी। तब आयुष्मान् आनन्दको ऐसा हुआ—'आश्चर्य है! तथागतकी महा-ऋद्धि, महानुभावताका अद्भुत है। यह नदिका (=छोटी नदी) चक्कोंसे मथे हिंळे मैले थोळे पानीके साथ बह रही थी; सो मेरे आने पर स्वच्छ निर्मल बह रही है।' और पात्रमें पानी भरकर भगवान्‌के पास ले गये। ले जाकर भगवान्‌से यह बोले—"०आश्चर्य है भन्ते! अद्भुत है भन्ते! ० निर्मल बह रही है। भन्ते! भगवान् पानी पियें, सुगत पानी पियें।" तब भगवान्‌ने पानी पिया।

(१४९) उस समय आलार कालामका शिष्य पुक्कुस मल्ल-पुत्र कुसीनारा और पावाके बीच, रास्तेमें जा रहा था। पुक्कुस मल्ल-पुत्रने भगवान्‌को

कालामस्स सावको कुसिनाराय पावं अद्धान मग्गप्पटिपन्नो होति। अद्दस खो पुक्कुसो मल्लपुत्तो भगवन्तं अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले निसिन्नं दिस्वा येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो पुक्कुसो मल्ल पुत्तो भगवन्तं एतदवोच—'अच्छरियं भन्ते! अब्भुतं भन्ते! सन्तेन वत भन्ते! पब्बजिता विहारेन विहरन्ति।' भूतपुब्बं भन्ते! आलारो कालामो अद्धान मग्गप्पटिपन्नो मग्गा ओक्कम्म अविदूरे अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले दिवा विहारं निसीदि। अथ खो भन्ते! पञ्चमत्तानि सकट सतानि आलारं कालामं निस्साय निस्साय अतिक्कमिंसु। अथ खो भन्ते! अञ्ञतरो पुरिसो तस्स सकट सतस्स पिट्ठितो पिट्ठितो आगच्छन्तो येन आलारो कालामो, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आलारं कालामं एतदवोच—'अपि भन्ते! पञ्चमत्तानि सकट सतानि अतिक्कन्तानि अद्दसाति?

(१५०) न खो अहं आवुसो! अद्दसन्ति॥

किं पन भन्ते! सद्दं अस्सोसी, ति?

न खो अहं आवुसो! सद्दं अस्सोसिन्ति॥

एक वृक्षके नीचे बैठे देखा। देखकर जहाँ भगवान् थे, वहाँ...जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर बैठ गया। पुक्कुस० ने भगवान्से कहा—

"आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते! प्रव्रजित (लोग) शांततर विहारसे विहरते हैं। भन्ते! पूर्वकालमें (एक बार) आलार कालाम रास्ता चलते, मार्गसे हटकर पासमें दिनके विहारके लिये एक वृक्षके नीचे बैठे। उस समय पाँच सौ गाड़ियाँ आलार कालामके पीछेसे गईं। तब उस गाड़ियोंके साथ (=कारवाँ) के पीछे पीछे आते एक आदमीने आलार कालाम के पास...जाकर पूछा—'क्या भन्ते! पाँच सौ गाड़ियाँ (इधरसे) निकलते देखा है?'

(१५०) "आवुस! मैंने नहीं देखा।"

"क्या भन्ते! आवाज सुनी?"

"नहीं आवुस! मैंने आवाज नहीं सुनी।"

किं पन भन्ते ! सुत्तो अहोसी, ति ?

न खो अहं आवुसो ! सुत्तो अहोसिन्ति ॥

किं पन भन्ते ! सञ्ञी अहोसी, ति ?

एवमावुसो !, ति ॥

(१५१) सो त्वं भन्ते ! सञ्ञी समानो जागरो पञ्चमत्तानि सकट सतानि निस्साय निस्साय अतिक्कन्तानि नेव अद्दस, न पन सद्दं अस्सोसि। अपि सुते भन्ते ! संघाटि रजेन ओकिण्णा, ति ?

'एवमावुसो ! ति' ॥

(१५२) अथ खो भन्ते ! तस्स पुरिसस्स एतदहोसि—'अच्छरियं वत भो ! अब्भुतं वत भो ! सन्तेन वत भो ! पब्बजिता विहारेन विहरन्ति' ॥ यत्र हि नाम सञ्ञी समानो जागरो पञ्चमत्तानि सकट सतानि निस्साय निस्साय अतिक्कन्तानि नेव दक्खति, न पन सद्दं सोस्सती, ति' ॥ आलारे कालामे उलारं पसादं पवेदेत्वा पक्कमी, ति ॥

"क्या भन्ते ! सो गये थे ?"

"नहीं आवुस ! सोया नहीं था।"

"क्या भन्ते ! होशमें थे ?"

"हाँ, आवुस !"

(१५१) "तो भन्ते ! आपने होशमें जागते हुए भी पीछेसे निकली पाँच सौ गाळियोंको न देखा, न (उनका) आवाजको सुना ? किन्तु (यह जो) आपकी संघाटी पर गर्द पळी है ?"

"हाँ ! आवुस।"

(१५२) "तब भन्ते ! उस पुरुषको हुआ—आश्चर्य है ! अद्भुत है !! अहा प्रव्रजित लोग शान्त विहारसे विहरते हैं, जो कि (इन्होंने) होश में, जागते हुये भी पाँच सौ गाळियोंको न देखा, न (उनकी) आवाजको सुना।'—कह आलार कालामके प्रति बळी श्रद्धा प्रकट कर चला गया।"

(१५३) तं किं मञ्ञसि पुक्कुस ! कतमं नु खो दुक्करतरं वा दुरभिसम्भवतरं वा ? यो वा सञ्ञी समानो जागरो पञ्चमत्तानि सकट सतानि निस्साय निस्साय अतिक्कन्तानि नेव पस्सेय्य, न पन सद्दं सुणेय्य। यो वा सञ्ञी समानो जागरो देवे-वस्सन्ते देवे-गलगलायन्ते विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया नेव पस्सेय्य, न पन सद्दं सुणेय्या, ति ॥

(१५४) किञ्हि भन्ते ! करिस्सन्ति पञ्च वा सकट सतानि, छ वा सकट सतानि, सत्त वा सकट सतानि, अट्ठ वा सकट सतानि, नव वा सकट सतानि, सकट सहस्सं वा सकट सतसहस्सं वा। अथ खो एतदेव दुक्करतरञ्चेव दुरभिसम्भवतरञ्च यो सञ्ञी समानो जागरो देवे-वस्सन्ते देवे-गलगलायन्ते विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया नेव पस्सेय्य, न पन सद्दं सुणेय्या, ति ॥

(१५५) एकमिदाहं पुक्कुस ! समयं आतुमायं विहरामि भुसागारे। तेन खो पन समयेन देवे वस्सन्ते देवे गलगलायन्ते

(१५३) "तो क्या मानते हो पुक्कुस ! कौन दुष्कर है, दुःसम्भव है—जो कि होशमें जागते हुये पाँच सौ गाळियोंका न देखना, न आवाज सुनना; अथवा होशमें जागते हुये पानीके बरसते बादलके गळगळाते, बिजलीके निकलते और अशनि (= बिजली) के गिरनेके समय भी न (चमक) देखे न आवाज सुने ?"

(१५४) "क्या है भन्ते ! पाँच सौ गाळियाँ, छै सौ०, सात सौ०, आठ सौ०, नौ सौ०, दस सौ०, दस हजार०, या सौ हजार गाळियाँ; यही दुष्कर दुःसम्भव है जो कि होश में जागते हुये पानीके बरसते० बिजलीके गिरनेके समय भी न (चमक) देखे, न आवाज सुने।"

(१५५) "पुक्कुस ! एक समय मैं आतुमाके भुसागारमें विहार करता था। उस समय देवके बरसते० बिजलीके गिरनेसे दो भाई किसान और चार बैल मरे। तब आतुमासे आदमियोंकी भीळ निकल कर वहाँ पहुँची, जहाँपर कि वह दो भाई किसान और चार बैल मरे थे। उस समय पुक्कुस ! मैं भुसागारसे

विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया अविदूरे भुसागारस्स द्वेकस्सका भातरो हता चत्तारो च बलिबद्धा। अथ खो पुक्कुस आतुमाय महाजनकायो निक्खमित्वा येन ते द्वेकस्सका भातरो हता चत्तारो च बलिबद्धा, तेनुपसङ्कमि। तेन खो पनाहं पुक्कुस! समयेन भुसागारा निक्खमित्वा भुसागार द्वारे अब्भोकासे चङ्कमामि। अथ खो पुक्कुस! अञ्ञतरो पुरिसो तम्हा महाजनकाया येनाहं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितं खो अहं पुक्कुस! तं पुरिसं एतदवोचं—'किंनु खो एसो आवुसो! महाजनकायो सन्निपतितो, ति?' 'इदानि भन्ते! देवे-वस्सन्ते देवे-गलगलायन्ते विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया द्वेकस्सका भातरो हता चत्तारो च बलिबद्धा। एत्थे सो महाजनकायो सन्निपतितो, ति'॥

(१५६) त्वं पन भन्ते! क्व अहोसी, ति?

इधेव खो अहं आवुसो! अहोसिन्ति॥

किं पन भन्ते! अद्दसा, ति?

न खो अहं आवुसो! अद्दसन्ति॥

किं पन भन्ते! सद्दं अस्सोसी, ति?

न खो अहं आवुसो! सद्दं अस्सोसिन्ति॥

निकलकर द्वारपर टहल रहा था। तब पुक्कुस! उस भीळसे निकलकर एक आदमी मेरे पास...आ...खळा होकर बोला—'भन्ते! इस समय देवके बरसते० बिजलीके गिरनेसे दो भाई किसान और चार बैल मर गये। इसीलिये यह भीळ इकट्ठी हुई है। आप भन्ते! (उस समय) कहाँ थे?'

(१५६) 'आवुस! यहीं था।'

'क्या भन्ते! आपने देखा?'

'नहीं, आवुस! नहीं देखा।'

'क्या भन्ते! शब्द सुना?'

'नहीं आवुस! शब्द (भी) नहीं सुना।'

किं पन भन्ते ! सुत्तो अहोसी, ति ?
न खो अहं आवुसो ! सुत्तो अहोसिन्ति ॥
किं पन भन्ते सञ्ञी अहोसी, ति ?
'एवमावुसो ! ति' ॥

(१५७) सो त्वं भन्ते ! सञ्ञी समानो जागरो देवे-वस्सन्ते देवे-गलगलायन्ते विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया नेव अद्दस, न पन सद्दं अस्सोसी, ति ? ॥

(१५८) 'एवमावुसो ! ति' ॥

(१५९) अथ खो पुक्कुस ! तस्स पुरिसस्स एतदहोसि—'अच्छरियं वत भो ! अब्भुतं वत भो ! सन्तेन वत भो ! पब्बजिता विहारेन विहरन्ति। यत्र हि नाम सञ्ञी समानो जागरो देवे-वस्सन्ते देवे-गलगलायन्ते विज्जुलतासु निच्छरन्तीसु असनिया फलन्तिया नेव दक्खति, न पन सद्दं सोस्सती, ति'। मयि उलारं पसादं पवेदेत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमी, ति ॥

'क्या भन्ते ! सो गये थे ?'
'नहीं आवुस ! सोया नहीं था।'
'क्या भन्ते ! होशमें थे ?'
'हाँ, आवुस !'

(१५७) 'तो भन्ते ! आपने होशमें जागते हुये भी देवके बरसते० बिजलीके गिरनेको न देखा, न शब्दको सुना ?'

(१५८) 'हाँ, आवुस !'

(१५९) "तब पुक्कुस ! उस आदमीको हुआ—आश्चर्य है ! अद्भुत है !! अहो प्रव्रजित लोग शान्त विहारसे विहरते हैं० न आवाज सुने।'—कह मेरे प्रति बळी श्रद्धा प्रकटकर चला गया।"

(१६०) एवं वुत्ते पुक्कुसो मल्ल पुत्तो भगवन्तं एतदवोच—'एसाहं भन्ते! यो मे आलारे कालामे पसादो, तं महावाते वा ओफुनामि सिङ्घ-सोताय वा नदिया पवाहेमि। अभिक्कन्तं भन्ते! अभिक्कन्तं भन्ते!!— सेय्यथा पि भन्ते!!! निक्कुज्जितं वा उक्कुज्जेय्य, पटिच्छन्नं वा विवरेय्य, मुल्हस्स वा मग्गं आचिक्खेय्य, अन्धकारे वा तेलपज्जोतं धारेय्य, चक्खुमन्तो रूपानि दक्खन्ति; एवमेव भगवता अनेक परियायेन धम्मो पकासितो। एसाहं भन्ते! भगवन्तं सरणं गच्छामि, धम्मञ्च, भिक्खुसंघञ्च। उपासकं मं भगवा! धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतन्ति'॥

(१६१) अथ खो पुक्कुसो मल्ल पुत्तो अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि— 'इङ्घ मे त्वं भणे! सिङ्गी वण्णं युगमट्ठं धारणियं आहरा, ति'॥

(१६२) एवं भन्ते! ति खो सो पुरिसो पुक्कुसस्स मल्ल पुत्तस्स पटिस्सुत्वा तं सिङ्गी वण्णं युगमट्ठं धारणियं आहरि। अथ खो पुक्कुसो

(१६०) ऐसा कहनेपर पुक्कुस मल्लपुत्रने भगवान्से यह कहा—

"भन्ते! यह मैं, जो मेरा आलार कालाममें श्रद्धा (=प्रसाद) थी, उसे हवा में उड़ा देता हूँ, या शीघ्र धारवाली नदीमें बहा देता हूँ। आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते! जैसे औंधेको सीधा कर दे, ढँकेको खोल दे, भूलेको रास्ता बतला दे, अंधेरेमें चिराग रख दे, कि आँखवाले रूपको देखें, ऐसे ही भन्ते! भगवान्ने अनेक प्रकारसे धर्मको प्रकाशित किया। यह मैं भन्ते! भगवान्की शरण जाता हूँ, धर्म और भिक्षु संघकी भी। आजसे मुझे भगवान् अंजलिबद्ध शरणागत उपासक धारण करें।"

(१६१) तब पुक्कुस मल्लपुत्रने (अपने) एक आदमीसे कहा—"आ रे! मेरे ईंगुरके वर्णवाले चमकते दुशालेको ले आ।"

(१६२) "अच्छा, भन्ते!"—कह उस आदमीने पुक्कुस मल्लपुत्रको कह, ० दुशालेको ला दिया। तब पुक्कुस मल्लपुत्रने ० दुशाला भगवान्को अर्पित किया—"भन्ते! कृपाकरके इस मेरे ० दुशालेको स्वीकार करें।"

मल्ल पुत्तो तं सिङ्गी वएणं युगमट्ठं धारणियं भगवतो उपनामेसि—'इदं भन्ते! सिङ्गी वण्णं युगमट्ठं धारणियं तं मे भगवा पटिगण्हातु अनुकम्पं उपादाया, ति'॥

(१६३) 'तेन हि पुक्कुस! एकेन मं अच्छादेहि, एकेन आनन्दन्ति'॥

(१६४) 'एवं भन्ते' ति खो पुक्कुसो मल्लपुत्तो भगवतो पटिस्सुत्वा एकेन भगवन्तं अच्छादेसि, एकेन आयस्मन्तं आनन्दं। अथ खो भगवा पुक्कुसं मल्लपुत्तं धम्मिया कथाय सन्दस्सेसि समादपेसि समुत्तेजेसि संपहंसेसि। अथ खो सो पुक्कुसो मल्ल-पुत्तो भगवता धम्मिया कथाय सन्दस्सितो समादपितो समुत्तेजितो संपहंसितो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमि॥

(१६५) अथ खो आयस्मा आनन्दो अचिर पक्कन्ते पुक्कुसे मल्ल-पुत्ते तं सिङ्गी वएणं युगमट्ठं धारणियं भगवतो कायं उपनामेसि। तं भगवतो कायं उपनामितं हतच्चितंविय खायति। अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—'अच्छरियं भन्ते! अब्भुतं भन्ते! याव परिसुद्धो भन्ते! तथागतस्स छवि वएणो परियोदातो। इदं भन्ते! सिङ्गी

(१६३) "तो पुक्कुस! एक मुझे ओढ़ा दे, एक आनंदको।"

(१६४) "अच्छा, भन्ते!"—कह, पुक्कुस मल्लपुत्रने भगवान्‌को उत्तर दे, एक ० शाल भगवान्‌को ओढ़ा दिया, एक ० आयुष्मान् आनंदको। तब भगवान्‌ने पुक्कुस मल्लपुत्रको धार्मिक कथा द्वारा संदर्शित=समुत्तेजित संप्रहर्षित किया। भगवान्‌की धार्मिक कथा द्वारा ० संप्रहर्षित हो पुक्कुस मल्लपुत्र आसनसे उठ भगवान्‌को अभिवादन कर प्रदक्षिणा कर चला गया।

(१६५) तब पुक्कुस मल्ल-पुत्रके जानेके थोळीही देर बाद आयुष्मान् आनंदने उस (अपने) ० शालको भगवान्‌के शरीरपर ढाँक दिया। भगवान्‌के शरीरपर किरणसी फूटी जान पळती थी। तब आयुष्मान् आनंदने भगवान्‌से यह कहा—"आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते! कितना परिशुद्ध=पर्यवदात तथागत

वण्णं युगमट्ठं धारणियं भगवतो कायं उपनामितं हतच्चितंविय खायती, ति' ॥

(१६६) एवमेतं आनन्द ! एवमेतं आनन्द ! द्वीसु कालेसु अतिविय तथागतस्स परिसुद्धो कायो होति छवि वण्णो परियोदातो। कतमेसु द्वीसु ? [१] यञ्च आनन्द ! रत्तिं तथागतो अनुत्तरं सम्मा-सम्बोधिं अभिसम्बुज्झति। [२] यञ्च रत्तिं अनुपादिसेसाय निब्बान-धातुया परिनिब्बायति। इमेसु खो आनन्द ! द्वीसु कालेसु अतिविय तथागतस्स कायो परिसुद्धो होति छवि वण्णो परियोदातो। अज्ज खो पनानन्द ! रत्तिया पच्छिमे यामे **कुसिनारायं उपवत्तने मल्लानं सालवने अन्तरेन यमक सालानं** तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सती, ति। आयामानन्द ! येन **ककुधा नदी,** तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति ॥

(१६७) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि ॥

के शरीरका वर्ण है !! भन्ते ! यह ० दुशाला भगवान्‌के शरीरपर किरणसा जान पळता है।"

(१६६) "ऐसा ही है आनन्द ! ऐसा ही है आनन्द ! दो समयोंमें आनन्द ! तथागतके शरीरका वर्ण अत्यन्त परिशुद्ध = पर्यवदात जान पळता है। किन दो समयोंमें ? [१] जिस समय तथागतने अनुपम सम्यक्-संबोधि (= परमज्ञान) का साक्षात्कार किया, और [२] जिस रात तथागत उपादि (= आवागमनके कारण रहित निर्वाणको प्राप्त होते हैं। आनन्द ! इन दो समयोंमें ०। आनन्द ! आज रातके पिछले पहर **कुसीनाराके उपवर्त्तन (नामक) मल्लोंके शालवनमें** जोळे शाल-वृक्षोंके बीच तथागतका परिनिर्वाण होगा। आओ, आनन्द ! जहाँ **ककुत्था नदी** है, वहाँ चलें।"

(१६७) "अच्छा, भन्ते !" कह आयुष्मान् आनंदने भगवान्‌को उत्तर दिया।

सिङ्गी वण्णं युगमट्ठं, पुक्कुसो अभिहारयि।
तेन अच्छादितो सत्था, हेम वण्णो असोभथा, ति ॥

(१६८) अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन ककुधा नदी, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा ककुधं नदिं अज्झोगाहेत्वा न्हत्वा च पिवित्वा च पच्चुत्तरित्वा येन अम्बवनं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं चुन्दकं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं चुन्दक! चतुगुणं संघाटिं पञ्ञपेहि। किलन्तोस्मि चुन्दक! निप्पिज्जिस्सामी, ति' ॥

(१६९) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा चुन्दको भगवतो पटिस्सुत्वा चतुगुणं संघाटिं पञ्ञपेसि। अथ खो भगवा दक्खिणेन पस्सेन सीह-सेय्यं कप्पेसि पादेन पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो उट्ठान सञ्ञं मनसि करित्वा। आयस्मा पन चुन्दको तत्थेव भगवतो पुरतो निसीदि ॥

(१७०) गन्त्वान बुद्धो नदियं ककुधं,
अच्छोदकं सातोदकं विपसन्नं।

इंगुर वर्णवाले चमकते दुशालेको पुक्कुसने अर्पण किया।
उनसे आच्छादित बुद्ध सोनेके वर्ण जैसे शोभा देते थे ॥

(१६८) तब महाभिक्षु-संघके साथ भगवान् जहाँ ककुत्था नदी थी, वहाँ गये। जाकर ककुत्था नदीको अवगाहन कर, स्नानकर, पानकर, उतरकर, जहाँ अम्बवन (आम्रवन) था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् चुन्दकसे बोले—"चुन्दक! मेरे लिये चौपेती संघाटी बिछा दे। चुन्दक थक गया हूँ, लेटूँगा।"

(१६९) "अच्छा भन्ते।"......तब भगवान् पैर पर पैर रख, स्मृति संप्रजन्यके साथ, उत्थान-संज्ञा मनमें करके, दाहिनी करवट सिंह-शय्यासे लेटे। आयुष्मान् चुन्दक वहीं भगवान्के सामने बैठे।

(१७०) बुद्ध उत्तम, सुन्दर स्वच्छ जलवाली ककुत्था नदी पर जा,

ओगाहि सत्था अकिलन्तरूपो,
तथागतो अप्पटिमो च लोके ॥
न्हत्वा च पिवित्वा चुन्दकेन सत्था,
पुरक्खतो भिक्खु-गणस्स मज्झे ।
वत्ता पवत्ता भगवा इध धम्मे,
उपागमि अम्बवनं महेसि ।
आमन्तयि चुन्दकं नाम भिक्खुं,
चतुग्गुणं सन्थर मे निपज्जं ।
सो मोदितो भावितत्तेन चुन्दो,
चतुग्गुणं सन्थरि खिप्पमेव ।
निपज्जि सत्था अकिलन्त रूपो,
चुन्दो पि तत्थ संमुखे निसीदि ॥

(१७१) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'यो खो पनानन्द ! चुन्दस्स कम्मार पुत्तस्स कोचि विप्पटिसारं उप्पादेय्य ।—तस्स ते आवुसो चुन्द ! अलाभा तस्स ते दुल्लद्धं यस्स ते तथागतो पच्छिमं पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा परिनिब्बुतो, ति' । चुन्दस्स आनन्द !

लोकमें अद्वितीय, शास्ताने अ-क्लान्त हो स्नान किया ।
स्नानकर, पानकर चुन्दकको आगे कर भिक्षु-गणके बीचमें (चलते)
धर्मके वक्ता प्रवक्ता महर्षि भगवान् आम्रवनमें पहुँचे ॥
चुन्दक भिक्षुसे कहा—चौपेती संघाटी बिछाओ, लेटूँगा ।
आत्मसंयमीसे प्रेरित हो तुरन्त चौपेती (संघाटी) को बिछा दिया ।
अक्लान्त हो शास्ता लेट गये, चुन्दक भी वहाँ सामने बैठ गये ॥१८॥

तब भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—

(१७१) "आनन्द ! शायद कोई चुन्द कम्मीरपुत्रको चिंतित करे (= विप्पटिसारं उपदहेय) (और कहे)—'आवुस चुन्द ! अलाभ है तुझे, तूने दुर्लाभ कमाया, जो कि तथागत तेरे पिंडपातको भोजनकर परिनिर्वाणको प्राप्त हुये ।' आनंद ! चुन्द कर्मार-पुत्रकी इस चिंताको दूर करना (और कहना)—'आवुस !

कम्मार पुत्तस्स एवं विप्पटिसारो पटिविनेतब्बो। "तस्स ते आवुसो चुन्द! लाभा तस्स तेसु लद्धं यस्स ते तथागतो पच्छिमं पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा परिनिब्बुतो।"

(१७२) संमुखा मे तं आवुसो चुन्द! भगवतो सुतं। संमुखा पटिग्गहितं—"द्वे मे पिण्डपाता समा सम फला सम विपाका। अतिविय अञ्ञेहि पिण्डपाते हि महप्फलतरा च महानिसंसतरा च। कतमे द्वे? [१] यञ्च पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा तथागतो अनुत्तरं सम्मा-सम्बोधिं अभिसम्बुज्झति। [२] यञ्च पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा तथागतो अनु-पादिसेसाय निब्बान-धातुया परिनिब्बायति। इमे द्वे पिण्डपाता समा सम-फला सम-विपाका। अतिविय अञ्ञे हि पिण्डपाते हि महप्फलतरा च महानिसंसतरा च। आयु संवत्तनिकं आयस्मता चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितं। वण्ण संवत्तनिकं आयस्मता चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितं। सुख संवत्तनिकं आयस्मता चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितं। यस-संवत्तनिकं आयस्मता चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितं। सग्ग-संवत्तनिकं आयस्मता चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितं। अधिपतेय्य-संवत्तनिकं आयस्मता

लाभ है तुझे, तूने सुलाभ कमाया, जो कि तथागत तेरे पिंडपातको भोजनकर परिनिर्वाणको प्राप्त हुये।'

(१७२) आवुस चुन्द! मैंने यह भगवान्के मुखसे सुना, मुखसे ग्रहण किया—'यह दो पिंड-पात समान फलवाले = समान विपाकवाले हैं, दूसरे पिंडपातों से बहुत ही महाफल-प्रद = महानृशंसतर हैं। कौनसे दो? [१] जिस पिंडपात (= भिक्षा) को भोजनकर तथागत अनुत्तर सम्यक्-संबोधि (= बुद्धत्व) को प्राप्त हुये, [२] और जिस पिंडपातको भोजनकर तथागत अन्-उपादिशेष निर्वाणधातु (= दुःख-कारण-रहित निर्वाण) को प्राप्त हुये। आनन्द! यह दो पिंडपात ०। चुन्द कर्मारपुत्रने आयु प्राप्त करानेवाले कर्मको संचित किया; ० वर्ण ०; ० सुख ०; ० यश ०; ० स्वर्ग ०; ०

चुन्देन कम्मार पुत्तेन कम्मं उपचितन्ति ॥" चुन्दस्स आनन्द ! कम्मार पुत्तस्स एवं विप्पटिसारो पटिविनेतब्बो, ति ॥

(१७३) अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

(१७४) ददतो पुञ्ञं पवड्ढति, संयमतो वेरं न चियति।
कुसलो पजहाति पापकं, राग दोस मोहक्खया स निब्बुतो, ति ॥

भाणवारं चतुत्थं ॥ ४ ॥

(१७५) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'आयामानन्द ! येन हिरञ्ञवतिया नदिया पारिमं तीरं येन कुसिनारा उपवत्तनं मल्लानं सालवनं तेनुपसङ्कमिस्सामा, ति' ॥

(१७६) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

आधिपत्य प्राप्त करानेवाले कर्मको संचित किया। आनन्द ! चुन्द कर्मारपुत्रकी चिन्ताको इस प्रकार दूर करना।"

(१७३) तब भगवान्‌ने इसी अर्थको जानकर उसी समय यह उदान कहा—

(१७४) "(दान) देनेसे पुण्य बढ़ता है, संयमसे वैर नहीं संचित होता।
सज्जन बुराईको छोळता है, (और) राग-द्वेष-मोहके क्षयसे वह
निर्वाण प्राप्त करता है ॥ १७॥

(इति) चतुर्थ भाणवार ॥ ४॥

जीवनकी अन्तिम घळियाँ

(१७५) तब भगवान्‌ने आयुष्मान् आनंदको आमंत्रित किया—"आओ आनन्द ! जहाँ हिरण्यवती नदीका परला तीर है, जहाँ कुसीनाराके मल्लोंका शालवन उपवत्तन है, वहाँ चलें।"

(१७६) "अच्छा भन्ते !" ०।

(१७७) अथ खो भगवा महता भिक्खु-संघेन सद्धिं येन हिरञ्ञवतिया नदिया पारिमं तीरं, येन कुसिनारा उपवत्तनं मल्लानं सालवनं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'इङ्घ मे त्वं आनन्द! अन्तरेन यमक सालानं उत्तर सीसकं मञ्चकं पञ्ञपेहि। किलन्तोस्मि आनन्द! निप्पिज्जिस्सामी, ति' ॥

(१७८) 'एवं भन्ते' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा अन्तरेन यमक सालानं उत्तर सीसकं मञ्चकं पञ्ञपेसि। अथ खो भगवा दक्खिणेन पस्सेन सीह-सेय्यं कप्पेसि पादेन पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो।

(१७९) तेन खो पन समयेन यमक साला सब्ब फालि फुल्ला होन्ति अकाल पुप्फेहि। ते तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय। दिब्बानि पि मन्धारव पुप्फानि अन्तलिक्खा पपतन्ति। तानि तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय। दिब्बानि पि चन्दन चुण्णानि अन्तलिक्खा पपतन्ति, तानि तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय। दिब्बानि पि तूरियानि अन्तलिक्खे वज्जन्ति तथागतस्स पूजाय। दिब्बानि पि संगीतानि अन्तलिक्खे वत्तन्ति तथागतस्स पूजाय ॥

(१७७) तब भगवान् महाभिक्षु-संघके साथ जहाँ हिरण्यवती ० मल्लोंका शालवन था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् आनन्दसे बोले—"आनन्द! यमक (=जुळवें)-शालोंके बीचमें उत्तरकी ओर सिरहानाकर चारपाई (=मंचक) बिछा दे। थका हूँ, आनन्द! लेटूँगा।"

(१७८) "अच्छा भन्ते!" ०। तब भगवान् ० दाहिनी करवट सिंह-शय्यासे लेटे।

(१७९) उस समय अकालहीमें वह जोळे शाल खूब फूले हुये थे। तथागतकी पूजाके लिये वे (फूल) तथागतके शरीरपर बिखरते थे। दिव्य मन्दार-पुष्प आकाशसे गिरते थे, वह तथागतके शरीर पर बिखरते थे। दिव्य चंदन चूर्ण ०। तथागतकी पूजाके लिये आकाशमें दिव्य वाद्य वजते थे। ० दिव्य संगीत ०।

(१८०) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—'सब्ब फालि फुल्ला खो आनन्द ! यमक साला अकाल पुप्फेहि । ते तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय । दिब्बानि पि मन्धारव पुप्फानि अन्तलिक्खा पपतन्ति । तानि तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय । दिब्बानि पि चन्दन चुण्णानि अन्तलिक्खा पपतन्ति तानि तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ति अज्झोकिरन्ति अभिप्पकिरन्ति तथागतस्स पूजाय । दिब्बानि पि तूरियानि अन्तलिक्खे वज्जन्ति तथागतस्स पूजाय दिब्बानि पि संगीतानि अन्तलिक्खे वत्तन्ति तथागतस्स पूजाय । "न खो आनन्द ! एत्तावता तथागतो सक्कतो वा होति गरुकतो वा मानितो वा पूजितो वा अपचितो वा । यो खो आनन्द ! भिक्खु वा भिक्खुनी वा उपासको वा उपासिका वा धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो विहरति सामिचिप्पटिपन्नो अनुधम्मचारी, सो तथागतं सक्करोति गरुं करोति मानेति पूजेति अपचियति परमाय पूजाय । तस्मातिहानन्द ! धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना विहरिस्साम सामिचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो, ति । एवं हि वो आनन्द ! सिक्खितब्बन्ति ॥"

(१८१) तेन खो पन समयेन आयस्मा उपवाणो भगवतो पुरतो ठितो होति भगवन्तं बीजमानो । अथ खो भगवा आयस्मन्तं उपवाणं अपसारेति ।

(१८०) तब भगवान्ने आयुष्मान् आनंदको संबोधित किया—"आनंद ! इस समय अकालहीमें यह जोड़े शाल खूब फूले हुये हैं । ० । किन्तु, आनन्द ! इससे तथागत सत्कृत गुरुकृत, मानित-पूजित नहीं होते । आनन्द ! जो कि भिक्षु या भिक्षुणी, उपासक या उपासिका धर्मके मार्गपर आरूढ़ हो विहरता है, यथार्थ मार्गपर आरूढ़ हो धर्मानुसार आचरण करनेवाला होता है; उससे तथागत ० पूजित होते हैं । ऐसा आनंद ! तुम्हें सीखना चाहिये ।"

(१८१) उस समय आयुष्मान् उपवान भगवान्पर पंखा झलते भगवान्के सामने खड़े थे । तब भगवान्ने आयुष्मान उपवानको हटा दिया—

(१८२) "अपेहि भिक्खु ! मा मे पुरतो अट्ठासी, ति ॥"

(१८३) अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—"अयं खो आयस्मा उपवाणो दीघरत्तं भगवतो उपट्ठाको सन्तिकावचरो समीपचारी। अथ च पन भगवा पच्छिमे काले आयस्मन्तं उपवाणं अपसारेति—'अपेहि भिक्खु ! मा मे पुरतो अट्ठासी, ति'। कोनु खो हेतु को पच्चयो ? यं भगवा आयस्मन्तं उपवाणं अपसारेति—'अपेहि भिक्खु ! मा मे पुरतो अट्ठासी, ति' ॥

(१८४) अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

अयं भन्ते ! आयस्मा उपवाणो दीघरत्तं भगवतो उपट्ठाको सन्तिकावचरो समीप-चारी। अथ च पन भगवा पच्छिमे काले आयस्मन्तं उपवाणं अपसारेति—'अपेहि भिक्खु ! मा मे पुरतो अट्ठासी, ति'। कोनु खो भन्ते ! हेतु को पच्चयो ? यं भगवा आयस्मन्तं उपवाणं अपसारेति—'अपेहि भिक्खु ! मा मे पुरतो अट्ठासी, ति' ॥

(१८५) येभुय्येन आनन्द ! दससु लोकधातूसु देवता सन्निपतिता तथागतं दस्सनाय। यावता आनन्द ! कुसिनारा उपवत्तनं मल्लानं

(१८२) "हट जाओ, भिक्षु ! मत मेरे सामने खळे होओ।"

(१८३) तब आयुष्मान् आनन्दको यह हुआ—'यह आयुष्मान् उपवान चिरकालतक भगवान्‌के समीप चारी = सन्तिकावचर उपस्थाक रहे हैं। किन्तु, अन्तिम समयमें भगवान्‌ने उन्हें हटा दिया—हट जाओ ! भिक्षु ०। क्या हेतु = प्रत्यय है, जो कि भगवान्‌ने आयुष्मान् उपवानको हटा दिया—० ?'

(१८४) तब आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह कहा—

"भन्ते ! यह आयुष्मान् उपवान चिरकाल तक भगवान्‌के ० उपस्थापक रहे हैं। ० क्या हेतु ० है ?"

(१८५) "आनंद ! बहुतसे दसों लोक-धातुओंके देवता तथागतके दर्शनके लिये एकत्रित हुये हैं। आनंद ! जितना (यह) कुसीनाराका उपवर्तन मल्लोंका शालवन है,

सालवनं समन्ततो द्वादस योजनानि नत्थि सो पदेसो वालग्गकोटि नितुदनमत्तोपि महेसक्खा हि देवता हि अप्फुटो। देवता आनन्द ! उज्झायन्ति दूरा च वतम्हा आगता तथागतं दस्सनाय—'कदाचि रत्तिया पच्छिमे यामे करहचि तथागता लोके उप्पज्जन्ति अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा। अज्जेव तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति।' 'अयं च महेसक्खो भिक्खु भगवतो पुरतो ठितो ओवारेन्तो। न मयं लभाम पच्छिमे काले तथागतं दस्सनाया, ति' ॥

(१८६) कथं भूता पन भन्ते ! भगवा देवता मनसि करोन्ती, ति ?

(१८७) सन्तानन्द ! देवता आकासे पथवी सञ्ञिनियो। केसे पकिरिय कन्दन्ति। बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति। आवट्टन्ति विवट्टन्ति। "अति खिप्पं भगवा परिनिब्बायिस्सति !, अति खिप्पं सुगतो ! परिनिब्बायिस्सति, अति खिप्पं चक्खुमा ! लोके अन्तरधायिस्सती, ति ॥" सन्तानन्द ! देवता पथवियं पथवी-सञ्ञिनियो। केसे पकिरिय कन्दन्ति। बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्न पातं पपतन्ति।

उसकी चारों ओर बारह योजन तक बालके नोक गळाने भरके लिये भी स्थान नहीं है, जहाँ कि महेशाख्य देवता न हों। आनन्द ! देवता परेशान हो रहे हैं—'हम तथागतके दर्शनार्थ दूरसे आये हैं। तथागत अर्हत् सम्यक् संबुद्ध कभी ही कभी लोकमें उत्पन्न होते हैं। आज ही रातके अन्तिम पहरमें तथागतका परिनिर्वाण होगा। और यह महेशाख्य (=प्रतापी) भिक्षु ढाँकते हुये भगवान्‌के सामने खळा है। अन्तिम समयमें हमें तथागतका दर्शन नहीं मिल रहा है।

(१८६) "भन्ते ! भगवान् देवताओंके बारेमें कैसे देख रहे हैं ?"

(१८७) "आनंद ! देवता आकाशको पृथिवी ख्यालकर बाल खोले रो रहे हैं। बाँह पकळकर चिल्ला रहे हैं। कटे (वृक्ष) की भाँति भूमिपर गिर रहे हैं। (यह कहते) लोट पोट रहे हैं—'बहुत जल्दी भगवान् निर्वाणको प्राप्त हो रहे हैं। बहुत शीघ्र सुगत निर्वाणको प्राप्त हो रहे हैं। बहुत शीघ्र चक्षुमान् (=बुद्ध) लोकमें

आवट्टन्ति विवट्टन्ति। "अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बायिस्सति, अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बायिस्सति, अति खिप्पं चक्खुमा! लोके अन्तरधायिस्सति।"

या पन देवता वीतरागा, ता सता सम्पजाना अधिवासेन्ति "अनिच्चा सङ्खारा तं कुतेत्थ लब्भाति"॥

(१८८) 'पुब्बे भन्ते! दिसासु वस्सं वुत्था भिक्खू आगच्छन्ति तथागतं दस्सनाय, ते मयं लभाम मनोभावनिये व भिक्खू दस्सनाय लभाम पयिरुपासनाय। भगवतो पन मयं भन्ते! अच्चयेन न लभिस्साम मनोभावनिये भिक्खू दस्सनाय न लभिस्साम पयिरुपासनाया, ति'॥

(१८९) चत्तारिमानि आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियानि संवेजनियानि ठानानि। कतमानि चत्तारि?

[१] 'इध तथागतो जातो, ति' आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियं संवेजनियं ठानं॥

[२] 'इध तथागतो अनुत्तरं सम्मा-सम्बोधिं अभिसम्बुद्धो, ति' आनन्द! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियं संवेजनियं ठानं॥

अन्तर्धान हो रहे हैं।' और जो देवता होश-चेतवाले हैं, वह होश-चेत स्मृति संप्रजन्योंके साथ सह रहे हैं—'संस्कृत (=कृत वस्तुयें) अनित्य हैं। सो कहाँ मिल सकता है'।"

(१८८) "भन्ते! पहिले दिशाओंमें वर्षावास कर भिक्षु भगवान्‌के दर्शनार्थ आते थे। उन मनोभावनीय भिक्षुओंका दर्शन, सत्संग हमें मिलता था। किन्तु भन्ते! भगवान्‌के बाद हमें मनोभावनीय भिक्षुओंका दर्शन, सत्संग नहीं मिलेगा।

(१८९) "आनन्द! श्रद्धालु कुल-पुत्रके लिये यह चार स्थान दर्शनीय, संवेजनीय (=वैराग्यप्रद) हैं। कौनसे चार? [१] 'यहाँ तथागत उत्पन्न हुये (=लुम्बिनी)' यह स्थान श्रद्धालु०! [२] 'यहाँ तथागतने अनुत्तर सम्यक्-

[३] 'इध तथागतेन अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितन्ति' आनन्द ! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियं संवेजनियं ठानं ॥

[४] 'इध तथागतो अनुपादिसेसाय निब्बान-धातुया परिनिब्बुतो, ति' आनन्द ! सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियं संवेजनियं ठानं ॥

इमानि खो आनन्द ! चत्तारि सद्धस्स कुलपुत्तस्स दस्सनियानि संवेजनियानि ठानानि। आगमिस्सन्ति खो आनन्द ! सद्धा भिक्खू भिक्खुनियो उपासका उपासिकायो, 'इध तथागतो जातोति पि'। 'इध तथागतो अनुत्तरं सम्मा-सम्बोधिं अभिसम्बुद्धोति पि' 'इध तथागतेन अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितन्ति पि'। 'इध तथागतो अनुपादिसेसाय निब्बान-धातुया परिनिब्बुतोति पि' ॥ 'येहि केचि आनन्द ! चेतिय चारिकं आहिण्डन्ता पसन्न चित्ता कालं करिस्सन्ति, सब्बे ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिस्सन्ती, ति' ॥

(१९०) कथं मयं भन्ते ! मातुगामे पटिपज्जामा, ति ?

अदस्सनं आनन्दा, ति ॥

दस्सने भगवा ! सति कथं पटिपज्जितब्बन्ति ?

संबोधिको प्राप्त किया' (=बोधगया) ०। [३] 'यहाँ तथागतने अनुत्तर (=सर्वश्रेष्ठ) धर्मचक्रको प्रवर्तन किया' (=सारनाथ) ०। [४] 'यहाँ तथागत अनुपादिशेष निर्वाण-धातुको प्राप्त हुये (=कुसीनारा) ०। ० यह चार स्थान दर्शनीय ० हैं। आनन्द ! श्रद्धालु भिक्षु भिक्षुणियाँ उपासक उपासिकायें (भविष्यमें यहाँ) आवेंगी—'यहाँ तथागत उत्पन्न हुये,' ० 'यहाँ तथागत ० निर्वाण ० को प्राप्त हुये... ।"

(स्त्रियोंके प्रति भिक्षुओंका बर्ताव)

(१९०) "भन्ते ! स्त्रियोंके साथ हम कैसा बर्ताव करेंगे ?"

"अ-दर्शन (=न देखना), आनन्द !"

"दर्शन होनेपर भगवान् कैसे बर्ताव करेंगे ?"

अनालापो आनन्दा ! ति॥

आलपन्तेन पन भन्ते ! कथं पटिपज्जितब्बन्ति ?

सति आनन्द ! उपट्ठापेतब्बाति ॥

(१९१) कथं मयं भन्ते ! तथागतस्स सरीरे पटिपज्जामाति ?

अब्यावटा तुम्हे आनन्द ! होथ तथागतस्स सरीर पूजाय। इङ्घ तुम्हे आनन्द ! सारत्थे अनुयुञ्जथ सारत्थे अप्पमत्ता आतापिनो पहितत्ता विहरथ। सन्तानन्द ! खत्तिय पण्डिता पि ब्राह्मण पण्डिता पि गहपति पण्डिता पि तथागते अभिप्पसन्ना, ते तथागतस्स सरीर-पूजं करिस्सन्ती, ति॥

(१९२) कथं पन भन्ते ! तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बन्ति ?

यथा खो आनन्द ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति, एवं तथा तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बन्ति ॥

(१९३) कथं पन भन्ते ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ती, ति ?

"आलाप (=बात) न करना, आनन्द !"

"बात करनेवालेको कैसा करना चाहिये ?"

"स्मृति (=होश) को सँभाले रखना चाहिये ?"

चक्रवर्तीकी दाहक्रिया

(१९१) "भन्ते ! तथागतके शरीरको हम कैसे करेंगे ?" "आनन्द ! तथागतकी शरीर-पूजासे तुम बेपर्वाह रहो। तुम आनन्द सच्चे पदार्थ (=सदर्थ) के लिये प्रयत्न करना, सत्-अर्थके लिये उद्योग करना। सत्-अर्थमें अप्रमादी, उद्योगी, आत्मसंयमी हो विहरना। हैं, आनन्द ! क्षत्रिय पंडित भी, ब्राह्मण पण्डित भी, गृहपति पंडित भी, तथागतमें अत्यन्त अनुरक्त; वह तथागतकी शरीर-पूजा करेंगे।"

(१९२) "भन्ते ! तथागतके शरीरको कैसे करना चाहिये ?" जैसे आनन्द ! राजा चक्रवर्तीके शरीरके साथ करना होता है, वैसे तथागतके शरीरको करना चाहिये।"

(१९३) "भन्ते ! राजा चक्रवर्तीके शरीरके साथ कैसे किया जाता है ?"

(१९४) रञ्ञो आनन्द ! चक्कवत्तिस्स सरीरं अहतेन वत्थेन वेठेन्ति। अहतेन वत्थेन वेठेत्वा विहतेन कप्पासेन वेठेन्ति। विहतेन कप्पासेन वेठेत्वा अहतेन वत्थेन वेठेन्ति। एतेनुपायेन पञ्चहि युग सते हि रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे वेठेत्वा आयसाय तेल-दोणिया पक्खी पेत्वा अञ्ञिस्सा आयसाय दोणिया पटिकुज्जित्वा सब्ब गन्धानं चितकं करित्वा रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरं झापेन्ति। चतु महापथे रञ्ञो चक्कवत्तिस्स थूपं करोन्ति। एवं खो आनन्द ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति॥ यथा खो आनन्द ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति, एवं तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बं। चतु महापथे तथागतस्स थूपो कातब्बो। तत्थ ये मालं वा गन्धं वा चुण्णकं वा आरोपेस्सन्ति वा अभिवादेस्सन्ति वा चित्तं वा पसादेस्सन्ति। तेसं तं भविस्सति दीघरत्तं हिताय सुखाया, ति॥

(१९५) चत्तारो मे आनन्द ! थूपारहा। कतमे चत्तारो ?

[१] तथागतो अरहं सम्मा-सम्बुद्धो थूपारहो। [२] पच्चेक

(१९४) "आनन्द ! राजा चक्रवर्तीके शरीरको नये वस्त्रसे लपेटते हैं; नये वस्त्रसे लपेटकर धुनी रूईसे लपेटते हैं। धुनी रूईसे लपेटकर नये वस्त्रसे लपेटते हैं। इस प्रकार पाँच सौ जोड़े वस्त्रों से लपेटकर तेलकी लोहद्रोणी (=दोन) में रखकर, दूसरी लोह-द्रोणीसे ढाँककर, सभी गंधों (वाले काष्ठ) की चिता बनाकर, राजा चक्रवर्तीके शरीरको जलाते हैं; जलाकर बळे चौरस्ते पर राजा चक्रवर्तीका स्तूप बनाते हैं।" "वहाँ आनन्द ! जो माला, गंध या चूर्ण चढ़ायेंगे, या अभिवादन करेंगे, या चित्त प्रसन्न करेंगे, तो वह दीर्घ काल तक उनके हित-सुखके लिये होगा।

(१९५) आनंद ! चार स्तूपार्ह (=स्तूप बनाने योग्य) हैं। कौनसे चार ? [१] तथागत सम्यक् संबुद्ध स्तूप बनाने योग्य हैं। [२] प्रत्येक संबुद्ध ०।

सम्बुद्धो थूपारहो। [३] तथागतस्स सावको थूपारहो, [४] राजा चक्कवत्ति थूपारहो, ति॥

किञ्चानन्द ! अत्थवसं पटिच्च तथागतो अरहं सम्मा-सम्बुद्धो थूपारहो ? अयं तस्स भगवतो अरहतो सम्मा-सम्बुद्धस्स थूपोति आनन्द ! बहु जना चित्तं पसादेन्ति, ते तत्थ चित्तं पसादेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। इदं खो आनन्द ! अत्थ वसं पटिच्च तथागतो अरहं सम्मा-सम्बुद्धो थूपारहो॥

किञ्चानन्द ! अत्थवसं पटिच्च पच्चेक-सम्बुद्धो थूपारहो ? अयं तस्स भगवतो पच्चेक-सम्बुद्धस्स थूपोति आनन्द ! बहु जना चित्तं पसादेन्ति, ते तत्थ चि पसादेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। इदं खो आनन्द ! अत्थवसं पटिच्च पच्चेक-सम्बुद्धो थूपारहो॥

किञ्चानन्द ! अत्थवसं पटिच्च तथागतस्स सावको थूपारहो ? अयं तस्स भगवतो अरहतो सम्मा-सम्बुद्धस्स सावकस्स थूपोति आनन्द ! बहु जना चित्तं पसादेन्ति। ते तत्थ चित्तं पसादेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। इदं खो आनन्द ! अत्थ वसं पटिच्च तथागतस्स सावको थूपारहो॥

किञ्चानन्द ! अत्थवसं पटिच्च राजा चक्कवत्ति थूपारहो ? अयं तस्स धम्मिकस्स धम्मरञ्ञो थूपोति आनन्द ! बहु जना चित्तं पसादेन्ति। ते

[३] तथागतका श्रावक (=शिष्य) ०। [४] चक्रवर्ती राजा आनंद ! स्तूप बनाने योग्य है।

सो क्यों आनंद ? तथागत अर्हत् सम्यक् संबुद्ध स्तूपार्ह हैं ! यह उन भगवान् ० संबुद्धका स्तूप है—(सोचकर) आनंद ! बहुतसे लोग चित्तको प्रसन्न करेंगे चित्तको प्रसन्न कर मरनेके बाद सुगति स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होंगे। इस प्रयोजनसे आनंद ! तथागत ० स्तूपार्ह हैं। ०। किस लिये आनंद ! राजा चक्रवर्ती स्तूपार्ह हैं ? आनन्द !

तत्थ चित्तं पसादेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। इदं खो आनन्द! अत्थवसं पटिच्च राजा चक्कवत्ति थूपारहो। इमे खो आनन्द! चत्तारो थूपारहा, ति॥

(१९६) अथ खो आयस्मा आनन्दो विहारं पविसेत्वा कपिसीसं आलम्बेत्वा रोदमानो अट्ठासि। 'अहञ्च वतम्हि सेखो स-करणीयो। सत्थु च मे परिनिब्बानं भविस्सति यो मम अनुकम्पको, ति'॥

(१९७) अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—'कहंनु खो भिक्खवे! आनन्दो, ति?'

(१९८) एसो भन्ते! आयस्मा आनन्दो विहारं पविसेत्वा कपिसीसं आलम्बेत्वा रोदमानो ठितो। 'अहञ्च वतम्हि सेखो स-करणीयो। सत्थु च मे परिनिब्बानं भविस्सति यो मम अनुकम्पको, ति॥'

(१९९) अथ खो भगवा अञ्ञतरं भिक्खुं आमन्तेसि,—'एहि त्वं भिक्खु! मम वचनेन आनन्दं आमन्तेहि सत्था तं आवुसो आनन्द! आमन्तेती, ति'॥

यह धार्मिक धर्मराजका स्तूप है, सोच आनंद! बहुतसे आदमी चित्तको प्रसन्न करेंगे ०। ० आनंद! यह चार स्तूपार्ह हैं।

आनन्द के गुण

(१९६) तब आयुष्मान् आनन्द विहारमें जाकर कपिसीस (=खूँटी)को पकळकर रोते खळे हुये—"हाय! मैं शैक्ष्य=सकरणीय हूँ। और जो मेरे अनुकंपक शास्ता हैं, उनका परिनिर्वाण हो रहा है!!"

(१९७) भगवान्‌ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"भिक्षुओ! आनन्द कहाँ है?"

(१९८) "यह भन्ते! आयुष्मान् आनन्द विहार (=कोठरी) में जाकर० रोते खळे हैं ०।"

(१९९) "आ! भिक्षु! मेरे वचनसे तू आनन्दको कह—'आवुस आनन्द! शास्ता तुम्हें बुला रहे हैं।" "अच्छा, भन्ते!"

एवं भन्ते ! ति खो सो भिक्खु भगवतो पटिस्सुत्वा येनायस्मा आनन्दो, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच— 'सत्था तं आवुसो आनन्द ! आमन्तेती, ति' ॥

(२००) एवमावुसो ! ति खो आयस्मा आनन्दो तस्स भिक्खुनो पटिस्सुत्वा येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि ॥

(२०१) एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच— 'अलं आनन्द ! मा सोचि, मा परिदेवि। ननु एवं आनन्द ! मया पटिकच्चेव अक्खातं सब्बेहेव पियेहि मनापेहि नानाभावो विनाभावो अञ्ञथाभावो, तं कुतेत्थ आनन्द ! लब्भा। यन्तं जातं भूतं सङ्खतं पलोक धम्मं तं वत तथागतस्सा पि सरीरं मा पलुज्जी, ति। नेतं ठानं विज्जति ॥ दीघ-रत्तं खो ते आनन्द ! तथागतो पच्चुपट्ठितो मेत्तेन काय कम्मेन हितेन सुखेन अद्वयेन अप्पमाणेन, मेत्तेन वची कम्मेन हितेन सुखेन अद्वयेन अप्पमाणेन, मेत्तेन मनो कम्मेन हितेन सुखेन अद्वयेन अप्पमाणेन। कत पुञ्ञोसि त्वं आनन्द ! पधान मनुयुञ्ज खिप्पं होहिसि अनासवो' ति ॥

(२००) आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ आकर अभिवादनकर एक ओर बैठे।

(२०१) आयुष्मान् आनन्दसे भगवान्ने कहा—

"नहीं आनन्द ! मत शोक करो, मत रोओ ! मैंने तो आनन्द ! पहिले ही कह दिया है—सभी प्रियों = मनापोंसे जुदाई० होनी है, सो वह आनन्द ! कहाँ मिलने-वाला है। जो कुछ जात (= उत्पन्न, = भूत = संस्कृत है, सो नाश होनेवाला है। 'हाय ! वह न नाश हो' यह संभव नहीं। आनन्द ! तूने दीर्घरात्र (= चिरकाल) तक अप्रमाण मैत्रापूर्ण कायिक-कर्मसे तथागतकी सेवा की है। मैत्रीपूर्ण वाचिक कर्मसे ०। ० मैत्रीपूर्ण मानसिक कर्मसे ०। आनन्द ! तू कृतपुण्य है। प्रधान (= निर्वाण-साधन) में लग जल्दी अनास्रव (= मुक्त) हो जा।"

(२०२) अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—'ये पि ते भिक्खवे! अहेसुं अतीतमद्धानं अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा, तेसंपि भगवन्तानं एतप्परमायेव उपट्ठका अहेसुं। सेय्यथा पि, मय्हं आनन्दो। ये पि ते भिक्खवे! भविस्सन्ति अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा। तेसं पि भगवन्तानं एतप्परमायेव उपट्ठका भविस्सन्ति। सेय्यथा पि, मय्हं आनन्दो॥ पण्डितो भिक्खवे! आनन्दो मेधावी, भिक्खवे! आनन्दो जानाति अयं कालो तथागतं दस्सनाय उपसङ्कमितुं भिक्खूनं, अयं कालो भिक्खुनीनं, अयं कालो उपासकानं, अयं कालो उपासिकानं, अयं कालो रञ्ञो राजमहामत्तानं, तित्थियानं तित्थिय-सावकानन्ति॥

(२०३) चत्तारो मे भिक्खवे! अच्छरिया अब्भुत धम्मा आनन्दे। कतमे चत्तारो? [१] सचे भिक्खवे! भिक्खु-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे! भिक्खु-

(२०२) तब भगवान्‌ने भिक्षुओंको संबोधित किया—

"भिक्षुओ! जो तथागत अर्हत्-सम्यक्-संबुद्ध अतीतकालमें हुए, उन भगवानोंके भी उपस्थाक (=चिरसेवक) इतने ही उत्तम थे, जैसा कि मेरा (उपस्थाक) आनन्द। भिक्षुओ! जो तथागत ० भविष्यमें होंगे ०। भिक्षुओ! आनन्द पंडित है। भिक्षुओ! आनन्द मेधावी है। वह जानता है—यह काल भिक्षुओंका तथागतके दर्शनार्थ जाने का है, यह काल भिक्षुणियोंका है, यह काल उपासकोंका है, यह काल उपासिकाओंका है। यह काल राजाका ० राज-महामात्यका ० तैर्थिकोंका ० तैर्थिक-श्रावकोंका है।

(२०३) "भिक्षुओ! आनन्दमें यह चार आश्चर्य अद्भुत बातें (=धर्म) हैं। कौनसी चार? [१] यदि भिक्षु-परिषद् आनन्दका दर्शन करने जाती है, तो दर्शनसे सन्तुष्ट हो जाती है। वहाँ यदि आनन्द धर्मपर भाषण करता है, भाषणसे भी सन्तुष्ट हो जाती है; भिक्षुओ! भिक्षु-परिषद् अ-तृप्त ही रहती है, जब कि आनन्द चुप हो

परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति ॥ [२] सचे भिक्खवे ! भिक्खुनि-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! भिक्खुनि-परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति ॥ [३] सचे भिक्खवे ! उपासक-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! उपासक-परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति ॥ [४] सचे भिक्खवे ! उपासिक-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! उपासिक-परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति ॥ इमे खो भिक्खवे ! चत्तारो अच्छरिया अब्भुत धम्मा आनन्दे।

(२०४) चत्तारो मे भिक्खवे ! अच्छरिया अब्भुत धम्मा रञ्ञे चक्कवत्तम्हि। कतमे चत्तारो ?

जाता है। [२] यदि भिक्षुणी-परिषद् ०। [३] यदि उपासक-परिषद् ०। [४] यदि उपासिका-परिषद ०। भिक्षुओ ! यह चार ०।

चक्रवर्ती के चार गुण

(२०४) "भिक्षुओ ! चक्रवर्ती राजामें यह चार आश्चर्य, अद्भुत बातें हैं। कौनसी चार ? [१] यदि भिक्षुओ ! क्षत्रिय-परिषद् चक्रवर्ती राजाका दर्शन करने जाती है, तो दर्शनसे सन्तुष्ट हो जाती है। वहाँ यदि चक्रवर्ती राजा भाषण करता है, तो भाषणसे सन्तुष्ट हो जाती है; और भिक्षुओ ! क्षत्रिय-परिषद् अ-तृप्त ही रहती है, जब कि चक्रवर्ती राजा चुप होता है। [२] यदि ब्राह्मण-परिषद् ०। [३] यदि गृहपति-परिषद् ०। [४] यदि श्रमण-परिषद् ०। इसी प्रकार भिक्षुओ ! यह चार आश्चर्य, अद्भुत बातें आनन्दमें हैं। [१] यदि भिक्षु-परिषद् ०।०। भिक्षुओ ! यह चार आश्चर्य अद्भुत बातें आनन्दमें हैं।"

[१] सचे भिक्खवे ! खत्तिया-परिसा राजानं चक्कवत्तिं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे राजा चक्कवत्ति भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! खत्तिय-परिसा होति, अथ खो राजा चक्कवत्ति तुण्ही होति॥ (२-३-४) सचे भिक्खवे ब्राह्मण-परिसा, गहपति-परिसा, समण-परिसा, राजानं चक्कवत्तिं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे राजा चक्कवत्ति भासति, भासितेनं पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे !।०। समण-परिसा होति, अथ खो राजा चक्कवत्ति तुण्ही होती' ति॥ एवमेव खो भिक्खवे ! चत्तारो मे अच्छरिया अब्भुत धम्मा आनन्दे। सचे भिक्खवे ! भिक्खु-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! भिक्खु-परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति। सचे भिक्खुनि-परिसा, उपासक-परिसा, उपासिक-परिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमति, दस्सनेन सा अत्तमना होति। तत्र चे आनन्दो धम्मं भासति, भासितेन पि सा अत्तमना होति। अतित्ताव भिक्खवे ! उपासिक-परिसा होति, अथ खो आनन्दो तुण्ही होति॥ इमे खो भिक्खवे ! चत्तारो अच्छरिया अब्भुत धम्मा आनन्दे ति'॥

(२०५) एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"मा भन्ते ! भगवा इमस्मिं खुद्दक-नगरके उज्जङ्गल-नगरके साख-नगरके परिनिब्बायि ! सन्ति भन्ते ! अञ्ञानि महा नगरानि, सेय्यथिदं—चम्पा, राजगहं,

(२०५) आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह कहा—"भन्ते ! मत इस क्षुद्र नगले (=नगरक) में, जंगली नगलेमें शाखा-नगरकमें परिनिर्वाणको प्राप्त होवें। भन्ते ! और भी महानगर हैं; जैसे कि चम्पा, राजगृह, श्रावस्ती, साकेत, कौशाम्बी,

सावत्थी, साकेतं, कोसम्बी, बाराणसी; एत्थ भगवा ! परिनिब्बातु !! एत्थ बहू खत्तिय-महासाला ब्राह्मण-महासाला गहपति-महासाला तथागते अभिप्पसन्ना। ते तथागतस्स सरीर-पूजं करिस्सन्ती' ति ॥

(२०६) मा हेवं आनन्द ! अवच, मा हेवं आनन्द ! अवच, 'खुद्दक नगरकं, उज्जङ्गल नगरकं, साख नगरकन्ति'। भूतपुब्बं आनन्द ! राजा महासुदस्सनो नाम अहोसि चक्कवत्ति धम्मिको धम्म-राजा चातुरन्तो विजितावी जनप्पदत्थावरियप्पत्तो सत्त रतन समन्नागतो। रञ्ञो आनन्द ! महासुदस्सनस्स अयं कुसिनारा कुसावती नाम राजठानी अहोसि। पुरत्थिमेन च पच्छिमेन च द्वादस योजनानि आयामेन। उत्तरेन च दक्खिणेन च सत्त योजनानि वित्थारेन। कुसावती आनन्द ! राजठानी इद्धा चेव अहोसि फिता च बहु जना च आकिण्ण मनुस्सा च सुभिक्खा च। सेय्यथा पि,—आनन्द ! देवानं आलकमन्दा नाम

बाराणसी। वहाँ भगवान् परिनिर्वाण करें। वहाँ बहुतसे क्षत्रिय महाशाल (=महा-धनी), ब्राह्मण-महाशाल, गृहपति-महाशाल तथागतके भक्त हैं; वह तथागतके शरीरकी पूजा करेंगे।"

महासुदर्शनजातक*

(२०६) "मत आनन्द ! ऐसा कह; मत आनन्द ! ऐसा कह—'इस क्षुद्र नगले ०।' आनन्द ! पूर्वकालमें महासुदर्शन नामक चारों दिशाओंका विजेता, देशोंपर अधिकार प्राप्त, सात रत्नोंसे युक्त धार्मिक धर्मराजा चक्रवर्ती राजा था। आनन्द ! यह कुसीनारा राजा महासुदर्शनकी कुशावती नामक राजधानी थी। जो कि पूर्व-पश्चिम लम्बाईमें बारह योजन थी, उत्तर-दक्षिण विस्तारमें सात योजन थी। आनन्द ! कुशावती राजधानी समृद्ध=स्फीत, बहुजना=जनाकीर्ण और सुभिक्ष थी। जैसे कि आनन्द ! देवताओंकी आलकमंदा नामक राजधानी समृद्ध=स्फीत, बहु-

* देखो महासुदस्सन-सुत्त पृ० १५२ दीघनिकाय।

राजठानी इद्धाचेव होति फिता च बहुजना च आकिण्णा यक्खा च सुभिक्खा च। एवमेव खो आनन्द ! कुसावती राजठानी इद्धाचेव अहोसि फिता च बहुजना च आकिण्णा मनुस्सा च सुभिक्खा च ॥ कुसावती आनन्द ! राजठानी दस हि सद्दे हि अविता अहोसि दिवा चेव रत्ति च। सेय्यथिदं—हत्थि सद्देन, अस्स सद्देन, रथ सद्देन, भेरि सद्देन, मुदिङ्ग सद्देन, विणा सद्देन, गीत सद्देन, सङ्ख सद्देन, सम्म सद्देन, ताल सद्देन, अस्नाथ पिवथ खादथा' ति दसमेन सद्देन ॥

(२०७) गच्छ त्वं आनन्द ! कुसिनारायं पविसित्वा कोसिनारकानं मल्लानं आरोचेहि।—"अज्ज खो वासिट्ठा ! रत्तिया पच्छिमे यामे तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। अभिक्कमथ वासिट्ठा ! अभिक्कमथ वासिट्ठा! मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहु वत्थ अम्हाकं च नो गामखेत्ते तथागतस्स परिनिब्बानं अहोसि। न मयं लभिम्हा पच्छिमे काले तथागतं दस्सनाया' ति" ॥

(२०८) एवं भन्ते। ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा निवासेत्वा पत्त चीवर-मादाय अत्तदुतियो कुसिनारं पाविसि। तेन खो

जना=यक्ष-आकीर्ण और सुभिक्ष हैं; इसी प्रकार ०। आनन्द ! कुशावती राजधानी दिन-रात, हस्ति-शब्द, अश्व-शब्द, रथ-शब्द, भेरी-शब्द, मृदंग-शब्द, वीणा-शब्द, गीत-शब्द, शंख-शब्द, ताल-शब्द, 'खाइये-पीजिये'—इन दस शब्दोंसे शून्य न होती थी।

(२०७) आनन्द ! कुसीनारामें जाकर कुसीनारावासी मल्लोंको कह—'वाशिष्ठो ! आज रातके पिछले पहर तथागतका परिनिर्वाण होगा। चलो वाशिष्ठो ! चलो वाशिष्ठो ! पीछे अफसोस मत करना—'हमारे ग्राम-क्षेत्रमें तथागतका परिनिर्वाण हुआ, लेकिन हम अन्तिमकालमें तथागतका दर्शन न कर पाये।'"

(२०८) "अच्छा भन्ते !" आयुष्मान् आनन्द चीवर पहिनकर, पात्रचीवर ले, अकेले ही कुसीनारामें प्रविष्ट हुए। उस समय कुसीनारावासी मल्ल किसी कामसे

पन समयेन कोसिनारका मल्ला सन्धागारे* सन्निपतिता होन्ति केनचि-देव-करणीयेन। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन कोसिनारकानं मल्लानं सन्धागारं, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा कोसिनारकानं मल्लानं आरोचेसि,—"अज्ज खो वासिट्ठा! रत्तिया पच्छिमे यामे तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। अभिक्कमथ वासिट्ठा! अभिक्कमथ वासिट्ठा! मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहु वत्थ अम्हाकं च नो गामखेत्ते तथागतस्स परिनिब्बानं अहोसि। न मयं लभिम्हा पच्छिमे काले तथागतं दस्सनाया' ति" ॥

(२०९) इदमायस्मतो आनन्दस्स सुत्वा मल्ला च मल्लपुत्ता च मल्लसुणिसा च मल्लपजापतियो च अघाविनो दुम्मना चेतो दुक्खसमप्पिता अप्पे कच्चे केसे पकिरिय कन्दन्ति बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति छिन्नपातं पपतन्ति आवट्टन्ति विवट्टन्ति—'अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बायिस्सति। अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बायिस्सति। अति खिप्पं चक्खुमा! लोके अन्तरधायिस्सती' ति" ॥

संस्थागारमें जमा हुए थे। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ कुसीनाराके मल्लोंका संस्थागार था, वहाँ गये। जाकर कुसीनारावासी मल्लोंसे यह बोले—'वाशिष्ठो! ०।'

(२०९) आयुष्मान् आनन्दसे यह सुनकर मल्ल, मल्ल-पुत्र, मल्ल-वधुयें, मल्ल-भार्यायें दुःखित दुर्मना दुःख-समर्पित-चित्त हो, कोई कोई बालोंको बिखेर रोते थे, बाँह पकळकर क्रंदन करते थे, कटे (वृक्ष) से गिरते थे, (भूमिपर) लोटते थे—बहुत जल्दी भगवान् निर्वाण प्राप्त हो रहे हैं, बहुत जल्दी सुगत निर्वाण प्राप्त हो रहे हैं ०। बहुत जल्दी लोक-चक्षु अन्तर्धान हो रहे हैं। तब मल्ल ० दुःखित ० हो, जहाँ उपवत्तन मल्लोंका शालवन था, वहाँ गये।

---

* 'सन्थागारे' भी पाठ है।

अथ खो मल्ला च मल्लपुत्ता च मल्लसुणिसा च मल्लपजापतियो च अघाविनो दुम्मना चेतो दुक्ख-समप्पिता येन उपवत्तनं मल्लानं सालवनं येनायस्मा आनन्दो, तेनुपसङ्कमिंसु ।

(२१०) अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—'सचे खो अहं कोसिनारके मल्ले एकमेकं भगवन्तं वन्दापेस्सामि । अवन्दितो भगवा कोसिनारके हि मल्ले हि भविस्सति । अथायं रत्ति विभायिस्सति । यं नूनाहं कोसिनारके मल्ले कुलपरिवत्तसो कुलपरिवत्तसो थपेत्वा भगवन्तं वन्दापेय्यं ।—

(२११) 'इत्थन्नामो भन्ते ! मल्लो सपुत्तो सभरियो सपरिसो सामच्चो भगवतो पादे सिरसा वन्दती, ति' ॥

(२१२) अथ खो आयस्मा आनन्दो कोसिनारके मल्ले कुलपरिवत्तसो कुलपरिवत्तसो थपेत्वा भगवन्तं वन्दापेसि । "इत्थन्नामो भन्ते ! मल्लो सपुत्तो सभरियो सपरिसो सामच्चो भगवतो पादे सिरसा वन्दती, ति ॥"

अथ खो आयस्मा आनन्दो एतेन उपायेन पठमेनेव यामेन कोसि-नारके मल्ले भगवन्तं वन्दापेसि ॥

(२१०) तब आयुष्मान् आनन्दको यह हुआ—'यदि मैं कुसीनाराके मल्लोंको एक एक कर भगवान्‌की वन्दना करवाऊँ; तो भगवान् (सभी) कुसीनाराके मल्लोंसे अवन्दित ही होंगे, और यह रात बीत जायेगी। क्यों न मैं कुसीनारा के मल्लोंको एक एक कुलके क्रमसे भगवान्‌की वन्दना करवाऊँ—

(२११) 'भन्ते ! अमुक नामक मल्ल स-पुत्र, स-भार्य, स-परिषद्, स-अमात्य भगवान्‌के चरणोंको शिरसे वन्दना करता है।'

(२१२) तब आयुष्मान् आनन्दने कुसीनाराके मल्लोंको एक एक कुलके क्रमसे भगवान्‌की वन्दना करवाई—०। इस उपाय से आयुष्मान् आनन्दने, प्रथम याम (= साँझ दस बजे राततक) में कुसीनाराके मल्लोंसे भगवान्‌की वन्दना करवा दी।

(२१३) तेन खो पन समयेन सुभद्दो नाम परिब्बाजको कुसिनारायं पटिवसति। अस्सोसि खो सुभद्दो परिब्बाजको "अज्ज किर रत्तिया पच्छिमे यामे समणस्स गोतमस्स परिनिब्बानं भविस्सती, ति। अथ खो सुभद्दस्स परिब्बाजकस्स एतदहोसि 'सुतं खो पन मे तं परिब्बाजकानं वुद्धानं महल्लकानं आचरिय-पाचरियानं भासमानानं—कदाचि करहचि तथागता लोके उप्पज्जन्ति अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा। अज्जेव रत्तिया पच्छिमे यामे समणस्स गोतमस्स परिनिब्बानं भविस्सति। अत्थि च मे अयं कङ्खा धम्मो उप्पन्नो। एवं पसन्नो अहं समणे गोतमे। पहोति मे समणो गोतमो तथा धम्मं देसेतुं, यथाहं इमं कङ्खा-धम्मं पजहेय्यन्ति"॥

(२१४) अथ खो सुभद्दो परिब्बाजको येन उपवत्तनं मल्लानं सालवनं, येनायस्मा आनन्दो, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"सुतं मे तं भो आनन्द! परिब्बाजकानं वुद्धानं महल्लकानं आचरिय-पाचरियानं भासमानानं,—कदाचि करहचि तथागता लोके उप्पज्जन्ति अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा। अज्झेव रत्तिया पच्छिमे यामे

सुभद्रकी प्रव्रज्या

(२१३) उस समय कुसीनारामें सुभद्र नामक परिव्राजक वास करता था। सुभद्र परिव्राजकने सुना, आज रातको पिछले पहर श्रमण गौतमका परिनिर्वाण होगा। तब सुभद्र परिव्राजकको ऐसा हुआ—'मैंने वृद्ध=महल्लक आचार्य-प्राचार्य परिव्राजकोंको यह कहते सुना है—'कदाचित् कभी ही तथागत अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध उत्पन्न हुआ करते हैं।' और आज रातके पिछले पहर श्रमण गौतमका परिनिर्वाण होगा, और मुझे यह संशय (=कंखा-धम्म) उत्पन्न है;...इस प्रकार मैं श्रमण गौतममें प्रसन्न (=श्रद्धावान्) हूँ—श्रमण गौतम मुझे वैसा, धर्म उपदेश कर सकता है; जिससे मेरा यह संशय हट जायेगा।"

(२१४) तब सुभद्र परिव्राजक जहाँ मल्लोंका शाल-वन उपवत्तन था, जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे, वहाँ गया। जाकर आयुष्मान् आनन्दसे बोला—"हे

समणस्स गोतमस्स परिनिब्बानं भविस्सति। अत्थि च मे अयं कङ्खा-धम्मो उप्पन्नो। एवं पसन्नो अहं समणे गोतमे तथा धम्मं देसेतु, यथाहं इमं कङ्खा-धम्मं पजहेय्यं। साधाहं भो आनन्द! लभेय्यं समणं गोतमं दस्सनाया, ति" ॥

(२१५) एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो सुभद्दं परिब्बाजकं एतदवोच—"अलं आवुसो सुभद्द! मा तथागतं विहेठेसि। किलन्तो भगवा, ति" ॥ दुतियम्पि खो सुभद्दो परिब्बाजको०। ततियम्पि खो सुभद्दो परिब्बाजको आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच "सुतं मे तं भो आनन्द! परिब्बाजकानं वुद्धानं महल्लकानं आचरिय-पाचरियानं भासमानानं,—'कदाचि करहचि तथागता लोके उप्पज्जन्ति अरहन्तो सम्मा-सम्बुद्धा'। अज्जेव रत्तिया पच्छिमे यामे समणस्स गोतमस्स परिनिब्बानं भविस्सति। अत्थि च मे अयं कङ्खा-धम्मो उप्पन्नो। एवं पसन्नो अहं समणे गोतमे पहोति मे समणो गोतमो तथा धम्मं देसेतुं, यथाहं इमं कङ्खा-धम्मं पजहेय्यं। साधाहं भो आनन्द! लभेय्यं समणं गोतमं दस्सनाया, ति"। ततियम्पि खो आयस्मा आनन्दो सुभद्दं परिब्बाजकं एतदवोच—"अलं आवुसो सुभद्द! मा तथागतं विहेठेसि। किलन्तो भगवा, ति ॥"

(२१६) अस्सोसि खो भगवा आयस्मतो आनन्दस्स सुभद्देन परिब्बाजकेन सद्धिं इमं कथा-सल्लापं। अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं

आनन्द! मैंने वृद्ध=महल्लक ० परिव्राजकोंको यह कहते सुना है ०। सो मैं... श्रमण गौतमका दर्शन पाऊँ?"

(२१५) ऐसा कहनेपर आयुष्मान् आनन्दने सुभद्र परिव्राजकसे कहा—
"नहीं आवुस सुभद्र! तथागतको तकलीफ मत दो। भगवान् थके हुए हैं।"
दूसरी बार भी सुभद्र परिव्राजकने ०।०। तीसरी बार भी ०।०।

(२१६) भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दका सुभद्र परिव्राजकके साथका कथा-संलाप सुन लिया। तब भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—

आमन्तेसि—"अलं आनन्द ! मा सुभद्दं वारेसि। लभतं आनन्द ! सुभद्दो तथागतं दस्सनाय। यं किञ्चि मं सुभद्दो पुच्छिस्सति, सब्बन्तं अञ्ञा पेक्खोव पुच्छिस्सति, नो विहेसापेखो। यञ्चस्साहं पुट्ठो ब्याकरिस्सामि, तं खिप्पमेव आजानिस्सती, ति" ॥

(२१७) अथ खो आयस्मा आनन्दो सुभद्दं परिब्बाजकं एतदवोच— "गच्छावुसो सुभद्द ! करोति ते भगवा ओकासन्ति" ॥

(२१८) अथ खो सुभद्दो परिब्बाजको येन भगवा, तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयंकथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सुभद्दो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—

(२१९) "ये मे भो गोतम ! समण ब्राह्मणा सङ्घिनो गणिनो गणाचरिया ञाता यसस्सिनो तित्थकरा साधु सम्मता बहु जनस्स। सेय्यथिदं—पूरणो कस्सपो, मक्खलि गोसालो, अजितो केस,

"नहीं आनन्द ! मत सुभद्रको मना करो। सुभद्रको तथागतका दर्शन पाने दो। जो कुछ सुभद्र पूछेगा, वह आज्ञा (=परम-ज्ञान) की इच्छासे ही पूछेगा; तकलीफ देनेकी इच्छासे नहीं। पूछनेपर जो मैं उसे कहूँगा, उसे वह जल्दी ही जान लेगा।"

(२१७) तब आयुष्मान् आनन्दने सुभद्र परिव्राजकसे कहा—
"जाओ आवुस सुभद्र ! भगवान् तुम्हें आज्ञा देते हैं।"

(२१८) तब सुभद्र परिव्राजक जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। जाकर भगवान्‌के साथ संमोदनकर...एक ओर बैठा। एक ओर बैठ...बोला।

(२१९) "हे गौतम ! जो श्रमण ब्राह्मण संघी गणी =गणाचार्य, प्रसिद्ध यशस्वी तीर्थंकर, बहुत लोगों द्वारा उत्तम माने जानेवाले हैं; जैसे कि—पूर्ण काश्यप, मक्खलि गोसाल, अजित केशकम्बल, पकुध कच्चायन, संजय बेलट्ठिपुत्त,

कस्सपो, पकुधो कच्चायनो, सञ्जयो बेलट्ठपुत्तो, निगण्ठो नाटपुत्तो, सब्बे ते सकाय पटिञ्ञाय अब्भञ्ञिंसु। सब्बेव न अब्भञ्ञिंसु। उदाहु एकच्चे अब्भञ्ञिंसु। एकच्चे न अब्भञ्ञिंसू, ति"।

(२२०) अलं सुभद्द! तिट्ठते तं। सब्बे ते सकाय पटिञ्ञाय अब्भञ्ञिंसु। सब्बेव न अब्भञ्ञिंसु। उदाहु एकच्चे अब्भञ्ञिंसु। एकच्चे न अब्भञ्ञिंसू, ति॥ धम्मं ते सुभद्द! देसिस्सामि। तं सुणाहि साधुकं मनसि करोहि। भासिस्सामी, ति॥

(२२१) एवं भन्ते! ति खो सुभद्दो परिब्बाजको भगवतो पच्चस्सोसि॥ भगवा एतदवोच—"यस्मिं खो सुभद्द! धम्म-विनये अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो न उपलब्भति, समणो पि तत्थ न उपलब्भति। दुतियो पि तत्थ समणो न उपलब्भति। ततियो पि तत्थ समणो न उपलब्भति। चतुत्थो पि तत्थ समणो न उपलब्भति॥ यस्मिं च खो सुभद्द! धम्म-

निगण्ठ नाथपुत्त। (क्या) वह सभी अपने दावा (=प्रतिज्ञा) को (वैसा) जानते, (या) सभी (वैसा) नहीं जानते; (या) कोई कोई वैसा जानते, कोई कोई वैसा नहीं जानते हैं!..."

(२२०) "*नहीं सुभद्र! जाने दो—'वह सभी अपने दावाको ०। सुभद्र! तुम्हें धर्म ० उपदेश करता हूँ; उसे सुनो, अच्छी तरह मनमें करो, भाषण करता हूँ।"

(२२१) "अच्छा भन्ते!" सुभद्र परिव्राजकने भगवान्‌से कहा। भगवान्‌ने यह कहा—

"सुभद्र! जिस धर्म-विनयमें आर्य अष्टांगिक मार्ग उपलब्ध नहीं होता, वहाँ प्रथम श्रमण (=स्रोत आपन्न) भी उपलब्ध नहीं होता; द्वितीय श्रमण (=सकृदागामी) भी उपलब्ध नहीं होता; तृतीय श्रमण (=अनागामी) भी उपलब्ध नहीं होता; चतुर्थ श्रमण (=अर्हत्) भी उपलब्ध नहीं होता। सुभद्र! जिस धर्म-विनयमें आर्य-अष्टांगिक-मार्ग उपलब्ध होता है, प्रथम श्रमण भी वहाँ होता है ०। सुभद्र! इस

* अ. क. "पहिले पहरमें मल्लोंको धर्मदेशनाकर, बिचले पहर सुभद्रको, पिछले पहर भिक्षु-संघको उपदेशकर, बहुत भोरे ही परिनिर्वाण...

विनये अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उपलब्भति समणो पि तत्थ उपलब्भति। दुतियो पि तत्थ समणो उपलब्भति। ततियो पि तत्थ समणो उपलब्भति॥ चतुत्थो पि तत्थ समणो उपलब्भति। इमस्मिं खो सुभद्द! धम्म-विनये अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उपलब्भति, इधेव सुभद्द! समणो। इध दुतियो समणो। इध ततियो समणो। इध चतुत्थो समणो। सुञ्ञा परप्पवादा समणे हि अञ्ञे हि। इधेव सुभद्द! भिक्खू सम्मा विहरेय्युं असुञ्ञो लोको अरहन्ते हि अस्साति। एकूनतिंसो वयसा सुभद्द! यं पब्बजि किं कुसलानुएसी। वस्सानि पञ्ञास समधिकानि, यतो अहं पब्बजितो सुभद्द! ञायस्स धम्मस्स पदेसवत्ति। इतो बहिद्धा समणो पि नत्थि। दुतियो पि समणो नत्थि। ततियो पि समणो नत्थि। चतुत्थो पि समणो नत्थि सुञ्ञा परप्पवादा समणे हि अञ्ञे हि। इमे च सुभद्द! भिक्खू सम्मा विहरेय्युं असुञ्ञो लोको अरहन्ते हि अस्साति"॥

(२२२) एवं वुत्ते सुभद्दो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच। "अभिक्कन्तं भन्ते! अभिक्कन्तं भन्ते!! सेय्यथा पि भन्ते! निक्कुज्जितं वा उक्कुज्जेय्य, पटिच्छन्नं वा विवरेय्य, मुल्हस्स वा मग्गं आचिक्खेय्य, अन्धकारे वा

धर्म-विनयमें आर्य अष्टांगिक-मार्ग उपलब्ध होता है; सुभद्र! यहाँ प्रथम श्रमण० भी, यहाँ० द्वितीय श्रमण भी, यहाँ० तृतीय श्रमण भी, यहाँ० चतुर्थ श्रमण भी है। दूसरे वाद (=मत) श्रमणोंसे शून्य हैं। सुभद्र! यहाँ (यदि) भिक्षु ठीकसे विहार करें (तो) लोक अर्हतोंसे शून्य न होवे।"

"सुभद्र! उन्तीस वर्षकी अवस्था में कुसल (=पुण्यधर्म)का खोजी हो, जो मैं प्रव्रजित हुआ।

सुभद्र! जब मैं प्रव्रजित हुआ तबसे इक्कावन वर्ष हुए।

न्याय-धर्म (=आर्य-धर्म=सत्यधर्म) के एक देशको भी देखनेवाला यहाँसे बाहर कोई नहीं है।

(२२२) ऐसा कहनेपर सुभद्र परिव्राजकने भगवान्‌से कहा—

तेल-पज्जोतं धारेय्य, चक्खुमन्तो रूपानि दक्खन्ति, एवमेव भगवता अनेक परियायेन धम्मो पकासितो। एसाहं भन्ते! भगवन्तं सरणं गच्छामि धम्मञ्च भिक्खु-संघञ्च। लभेय्याहं भन्ते! भगवतो सन्तिके पब्बज्जं। लभेय्यं उपसम्पदन्ति" ॥

(२२३) यो खो सुभद्द! अञ्ञ तित्थिय पुब्बो इमस्मिं धम्म-विनये आकङ्खति पब्बज्जं आकङ्खति उपसम्पदं, सो चत्तारो मासे परिवसति। चतुन्नं मासानं अच्चयेन आरद्ध चित्ता भिक्खू पब्बाजेन्ति उपसम्पादेन्ति भिक्खु-भावाय। अपि च मेत्थ पुग्गल वेमत्तता विदिता, ति।

(२२४) सचे भन्ते! अञ्ञतित्थिय पुब्बा इमस्मिं धम्म-विनये आकङ्खन्ता पब्बज्जं आकङ्खन्ता उपसम्पदं चत्तारो मासे परिवसन्ति। चतुन्नं मासानं अच्चयेन आरद्ध चित्ता भिक्खू पब्बाजेन्ति उपसम्पादेन्ति भिक्खु-भावाय। अहं चत्तारि वस्सानि परिवसिस्सामि। चतुन्नं वस्सानं अच्चयेन आरद्ध चित्ता भिक्खू पब्बाजेन्तु उपसम्पादेन्तु भिक्खु भावाया, ति ॥

"आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते! ० मैं भगवान्‌की शरण जाता हूँ, धर्म और भिक्षु-संघको भी। भन्ते! मुझे भगवान्‌के पाससे प्रव्रज्या मिले, उपसंपदा मिले।"

(२२३) "सुभद्र! जो कोई भूतपूर्व अन्य-तीर्थिक (=दूसरे पंथका) इस धर्म.. में प्रव्रज्या...उपसंपदा चाहता है वह चार मास परिवास (=परीक्षार्थ वास) करता है। चारमास के बाद, आरब्ध-चित्त भिक्षु प्रव्रजित करते हैं, भिक्षु होनेके लिये उपसंपन्न करते हैं।"...

(२२४) "भन्ते! यदि भूतपूर्व अन्यतीर्थिक इस धर्मविनयमें प्रव्रज्या ० उपसंपदा चाहनेपर, चार मास परिवास करता है ०, तो भन्ते! मैं चार वर्ष परिवास करूँगा। चार वर्षोंके बाद आरब्ध-चित्त भिक्षु मुझे प्रव्रजित करें।"

(२२५) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि ।

तेनहानन्द ! सुभद्दं पब्बाजेही, ति ॥

एवं भन्ते ! ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि ॥

(२२६) अथ खो सुभद्दो परिब्बाजको आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"लाभा वो आवुसो आनन्द ! सुलद्धं वो आवुसो आनन्द !! ये एत्थ सत्थु संमुखा अन्तेवासिकाभिसेकेन अभिसित्ताति ॥

(२२७) अलत्थ खो सुभद्दो परिब्बाजको भगवतो सन्तिके पब्बज्जं, अलत्थ उपसम्पदं । अचिरूपसम्पन्नो खो पनायस्मा सुभद्दो एकोवूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो न चिरस्सेव यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति । तदनुत्तरं ब्रह्मचरिय परियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छि कत्वा उपसम्पज्ज विहासि । खीणा जाति । वुसितं ब्रह्मचरियं । कतं करणीयं । नापरं इत्थत्ता याति अब्भञ्ञासि । अञ्ञतरो खो पनायस्मा सुभद्दो अरहत्तं अहोसि । सो भगवतो पच्छिमो सक्खि सावको अहोसी, ति ॥

भाणवारं पञ्चमं ॥ ५ ॥

(२२५) तब भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"तो आनन्द ! सुभद्रको प्रव्रजित करो ।" "अच्छा भन्ते !"

(२२६) तब सुभद्र परिव्राजकको आयुष्मान् आनन्दने कहा—

"आवुस !...लाभ है तुम्हें, सुलाभ हुआ तुम्हें; जो यहाँ शास्ताके सम्मुख अन्तेवासी (= शिष्य) के अभिषेकसे अभिषिक्त हुए ।"

(२२७) सुभद्र परिव्राजकने भगवान्‌के पास प्रव्रज्या पाई, उपसंपदा पाई । उपसंपन्न होनेके अचिरहीमें आयुष्मान् सुभद्र...आत्मसंयमी हो विहार करते, जल्दी ही, जिसके लिये कुलपुत्र ० प्रव्रजित होते हैं; उस अनुत्तर ब्रह्मचर्यफलको इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात्कारकर, प्राप्तकर, विहरने लगे । ० । सुभद्र अर्हतोंमेंसे एक हुए । वह भगवान्‌के अन्तिम···शिष्य हुए ।

(इति) पंचम भाणवार ॥ ५ ॥

(२२८) अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"सिया वो पनानन्द ! तुम्हाकं [१] एवमस्स अतीत सत्थुकं पावचनं नत्थि नो सत्था, ति । न खो पनेतं आनन्द ! एवं दट्ठब्बं । यो वो आनन्द ! मया धम्मो च विनयो च देसितो पञ्ञत्तो, सो वो ममच्चयेन सत्था, ति ॥ [२] यथा खो पनानन्द ! एतरहि भिक्खु अञ्ञ-मञ्ञं 'आवुसो' वादेन समुदाचरन्ति । न खो ममच्चयेन एवं समुदाचरितब्बं । थेर-तरेन आनन्द ! भिक्खुना नवकत्तरो भिक्खु नामेन वा गोत्तेन वा आवुसो वादेन वा समुदा चरितब्बो । नवकत्तरेन भिक्खुना थेरत्तरो भिक्खु 'भन्ते' ति वा 'आयस्मा' ति वा समुदा चरितब्बो ॥ [३]—आकङ्खमानो आनन्द ! संघो ममच्चयेन खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि समुहनतु ॥ [४]—छन्नस्स आनन्द ! भिक्खुनो ममच्चयेन ब्रह्म-दण्डो दातब्बो, ति" ॥

(२२९) कतमो पन भन्ते ! ब्रह्मदण्डो, ति ?

अन्तिम उपदेश

(२२८) तब भगवान्‌ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—

"आनन्द ! शायद तुमको ऐसा हो—[१] अतीत-शास्ता (=चले गये गुरु) का (यह) प्रवचन (=उपदेश) है, (अब) हमारा शास्ता नहीं है। आनन्द ! इसे ऐसा मत समझना। मैंने जो धर्म और विनय उपदेश किये हैं, प्रज्ञप्त (=विहित) किये हैं, मेरे बाद वही तुम्हारा शास्ता (=गुरु) है।—[२] आनन्द ! जैसे आजकल भिक्षु एक दूसरेको 'आवुस' कहकर पुकारते हैं, मेरे बाद ऐसा कहकर न पुकारें। आनन्द ! स्थविरतर (=उपसंपदा प्रव्रज्यामें अधिक दिनका) भिक्षु नवक-तर (=अपनेसे कम समयके) भिक्षुको नामसे, या गोत्रसे, या आवुस, कहकर पुकारें। नवकतर भिक्षु स्थविरतरको 'भन्ते' या 'आयुष्मान्' कहकर पुकारें। [३] इच्छा होनेपर संघ मेरे बाद क्षुद्र-अनुक्षुद्र (=छोटे छोटे) शिक्षापदों (=भिक्षुनियमों)को छोळ दे। [४] आनन्द ! मेरे बाद छन्न भिक्षुको ब्रह्मदण्ड करना चाहिये।"

(२२९) "भन्ते ! ब्रह्मदण्ड क्या है ?"

(२३०) छन्नो आनन्द ! भिक्खु यं इच्छेय्य तं वदेय्य, सो भिक्खु हि नेव वत्तब्बो, न ओवदितब्बो, न अनुसासितब्बो, ति ॥

(२३१) अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सिया खो पन भिक्खवे ! एक भिक्खुस्स पि कङ्खा वा विमति वा बुद्धे वा धम्मे वा संघे वा मग्गे वा पटिपदाय वा। पुच्छथ भिक्खवे ! मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहुवत्थ संमुखी भूतो नो सत्था अहोसि। न मयं सक्खिम्हा भगवन्तं संमुखा पटिपुच्छितुन्ति ॥

(२३२) एवं वुत्ते ते भिक्खू तुण्ही अहेसुं। दुतियम्पि खो भगवा। ततियम्पि खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि।—"सिया खो पन भिक्खवे ! एक भिक्खुस्स पि कङ्खा वा विमति वा बुद्धे वा धम्मे वा संघे वा मग्गे वा पटिपदाय वा। पुच्छथ भिक्खवे ! मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहुवत्थ संमुखी भूतो नो सत्था अहोसि। न मयं सक्खिम्हा भगवन्तं संमुखा पटिपुच्छितुन्ति"। ततियम्पि खो ते भिक्खू तुण्ही अहेसुं। अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सिया खो पन भिक्खवे ! सत्थु गारवेन पि न पुच्छेय्याथ। सहायको पि भिक्खवे ! सहायकस्स आरोचेतू, ति ॥"

एवं वुत्ते ते भिक्खू तुण्ही अहेसुं ॥

(२३०) "आनन्द ! छन्न भिक्षुओंको जो चाहे सो कहे, भिक्षुओंको उससे न बोलना चाहिये, न उपदेश = अनुशासन करना चाहिये।"

(२३१) तब भगवान्‌ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"भिक्षुओ ! (यदि) बुद्ध, धर्म, संघमें एक भिक्षुको भी कुछ शंका हो, (तो) पूछ लो। भिक्षुओ ! पीछे अफसोस मत करना—'शास्ता हमारे सन्मुख थे, (किन्तु) हम भगवान्‌के सामने कुछ पूछ न सकें।"

(२३२) ऐसा कहनेपर वह भिक्षु चुप रहे। दूसरी बार भी भगवान्‌ने ०।०। तीसरी बार भी ०।०।

(२३३) अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"अच्छरियं भन्ते! अब्भुतं भन्ते! एवं पसन्नो अहं भन्ते! इमस्मिं भिक्खु-संघे नत्थि एक भिक्खुस्सा पि कङ्खा वा विमति वा बुद्धे वा धम्मे वा संघे वा मग्गे वा पटिपदाय वा, ति॥"

(२३४) पसादा खो त्वं आनन्द! वदेसि? ञाणमेव हेत्थ आनन्द! तथागतस्स। नत्थि इमस्मिं भिक्खु-संघे एक भिक्खुस्सा पि कङ्खा वा विमति वा बुद्धे वा धम्मे वा संघे वा मग्गे वा पटिपदाय वा। इमेसं हि आनन्द! पञ्चन्नं भिक्खु सतानं यो पच्छिमको भिक्खु सो सोतापन्नो अविनिपात धम्मो नियतो सम्बोधि परायनो, ति"॥

(२३५) अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"हन्द दानि भिक्खवे! आमन्तयामि वो वय-धम्मा सङ्खारा अप्पमादेन सम्पादेथा, ति"॥

अयं तथागतस्स पच्छिमा वाचा॥

(२३३) तब आयुष्मान् आनन्दने भगवान्‌से यह कहा—"आश्चर्य भन्ते! अद्भुत भन्ते!! मैं भन्ते! इस भिक्षु-संघमें इतना प्रसन्न हूँ। (यहाँ) एक भिक्षुको भी बुद्ध, धर्म, संघ, मार्ग, या प्रतिपद्‌के विषयमें संदेह (=कांक्षा) = विमति नहीं है।"

(२३४) "आनन्द! 'प्रसन्न हूँ' कह रहा है? आनन्द! तथागतको मालूम है—इस भिक्षु-संघमें एक भिक्षुको भी बुद्ध०के विषयमें संदेह = विमति नहीं है। आनन्द! इन पाँच सौ भिक्षुओंमें जो सबसे छोटा भिक्षु है। वह भी न गिरनेवाला हो, नियत संबोधि-परायण है।"

(२३५) तब भगवान्‌ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"हन्त! भिक्षुओ अब तुम्हें कहता हूँ—'संस्कार (=कृतवस्तु) व्यय-धर्मा (=नाशमान) हैं: अप्रमादके साथ (=आलस न कर) (जीवनके लक्ष्यको) संपादन करो।"—यह तथागतका अन्तिम वचन है।"

(२३६) अथ खो भगवा पठमं झानं समापज्जि। पठम झाना वुट्ठहित्वा दुतियं झानं समापज्जि। दुतिय झाना वुट्ठहित्वा ततियं झानं समापज्जि। ततिय झाना वुट्ठहित्वा चतुत्थं झानं समापज्जि। चतुत्थ झाना वुट्ठहित्वा आकासानञ्चायतनं समापज्जि। आकासानञ्चायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा विञ्ञानञ्चायतनं समापज्जि। विञ्ञानञ्चायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा आकिञ्चञ्ञायतनं समापज्जि। आकिञ्चञ्ञायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं समापज्जि। नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा सञ्ञा-वेदयित-निरोधं समापज्जि॥

(२३७) अथ खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—परिनिब्बुतो भन्ते अनुरुद्ध! भगवा, ति॥"

(२३८) नावुसो आनन्द! भगवा परिनिब्बुतो, सञ्ञा-वेदयित-निरोधं समापन्नो, ति॥

(२३९) अथ खो भगवा सञ्ञा-वेदयित-निरोध-समापत्तिया वुट्ठहित्वा नेवसञ्ञा-नासञ्ञा-यतनं समापज्जि। नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतन समापत्तिया

निर्वाण

(२३६) तब भगवान् प्रथम ध्यानको प्राप्त हुए। प्रथम ध्यानसे उठकर द्वितीय ध्यानको प्राप्त हुए। ० तृतीय ध्यानको ०। ० चतुर्थ ध्यानको ०। ० आकाशानन्त्यायतनको ०। ० विज्ञानानन्त्यायतनको ०। ० आकिंचन्यायतनको ०। ० नैवसंज्ञानासंज्ञायतनको ०। ० संज्ञावेदयितनिरोधको प्राप्त हुए।

(२३७) तब आयुष्मान् आनन्दने आयुष्मान् अनुरुद्धसे कहा—"भन्ते अनुरुद्ध! क्या भगवान् परिनिर्वृत हो गये?"

(२३८) "आवुस आनन्द! भगवान् परिनिर्वृत्त नहीं हुए। संज्ञावेदयितनिरोधको प्राप्त हुए हैं।"

(२३९) तब भगवान् संज्ञावेदयितनिरोध-समापत्ति (=चारों ध्यानोंके ऊपरकी समाधि)से उठकर नवसंज्ञा-नासंज्ञायतनको प्राप्त हुए। ०। द्वितीय ध्यानसे उठकर

वुट्ठहित्वा आकिञ्चञ्ञायतनं समापज्जि। आकिञ्चञ्ञायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा विञ्ञाणञ्चायतनं समापज्जि। विञ्ञाणञ्चायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा आकासानञ्चायतनं समापज्जि। आकासानञ्चायतन समापत्तिया वुट्ठहित्वा चतुत्थ झानं समापज्जि। चतुत्थ झाना वुट्ठहित्वा ततियं झानं समापज्जि। ततिय झाना वुट्ठहित्वा दुतियं झानं समापज्जि। दुतिय झाना वुट्ठहित्वा पठमं झानं समापज्जि॥ पठम झाना वुट्ठहित्वा दुतियं झानं समापज्जि। दुतिय झाना वुट्ठहित्वा ततियं झानं समापज्जि। ततिय झाना वुट्ठहित्वा चतुत्थं झानं समापज्जि। चतुत्थ झाना वुट्ठहित्वा समनन्तरा भगवा परिनिब्बायि। परिनिब्बुते भगवति सह परिनिब्बाना महा भूमिचालो अहोसि। भिंसनको सलोमहंसो देवदुद्रभियो च फलिंसु। परिनिब्बुते भगवति सह परिनिब्बाना ब्रह्मा सहंपति इमं गाथं अभासि—

(२४०) सब्बेव निक्खिपिस्सन्ति, भूता लोके समुस्सयं।
यत्थ एतादिसो सत्था, लोके अप्पटि पुग्गलो॥
तथागतो बलप्पत्तो, सम्बुद्धो परिनिब्बुतो, ति॥ ॥

प्रथम ध्यानको प्राप्त हुए। प्रथम ध्यानसे उठकर द्वितीय ध्यानको प्राप्त हुए। ०। चतुर्थ ध्यानसे उठनेके अनन्तर भगवान् परिनिर्वाणको प्राप्त हुए। भगवान्के परिनिर्वाण होनेपर निर्वाण होतेके साथ भीषण, लोमहर्षण महाभूचाल हुआ। देव-दुन्दुभियाँ बजीं। भगवान्के परिनिर्वाण होनेपर निर्वाण होतेके साथ सहापति ब्रह्माने यह गाथा कही—

(२४०) "संसारके सभी प्राणी जीवनसे गिरेंगे।
जब कि ऐसे लोकमें अद्वितीय पुरुष बलप्राप्त,
तथागत, शास्ता बुद्ध परिनिर्वाणको प्राप्त हुए"

(२४१) परिनिब्बुते भगवति सह-परिनिब्बाना सक्को देवानमिन्दो इमं गाथं अभासि—

अनिच्चा वत सङ्खारा, उप्पाद-वय-धम्मिनो।
उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, तेसं वूपसमो सुखो, ति॥

(२४२) परिनिब्बुते भगवति सह परिनिब्बाना आयस्मा अनुरुद्धो इमा गाथायो अभासि—

नाहु अस्सास-पस्सासो, ठित चित्तस्स तादिनो।
अनेजो सन्तिमारब्भ, यं कालमकरी मुनि॥
असल्लिनेन चित्तेन, वेदनं अज्झ वासयि।
पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो चेतसो अहू, ति॥

(२४३) परिनिब्बुते भगवति सह परिनिब्बाना आयस्मा आनन्दो इमं गाथं अभासि—

तदा सियं भिंसनकं, तदा सियं लोमहंसनं।
सब्बाकार वरूपेते, सम्बुद्धे परिनिब्बुते, ति॥

(२४१) भगवान्के परिनिर्वाण होनेपर ० देवेन्द्र शक्रने यह गाथा कही—
"अरे! संस्कार (=उत्पन्न वस्तुएँ) उत्पन्न और नष्ट होनेवाले हैं।
(जो) उत्पन्न होकर नष्ट होते हैं; उनका शान्त होना ही सुख है।"

(२४२) भगवान्के परिनिर्वाण होनेपर ० आयुष्मान् अनुरुद्धने यह गाथा कही—
"स्थिर-चित्त तथागतको (अब) श्वास-प्रश्वास नहीं रहा।
शान्ति के लिये निष्कम्प हो मुनिने काल किया।"

(२४३) भगवान्के परिनिर्वाण होनेपर ० आयुष्मान् आनन्दने यह गाथा कही—
"जब सर्वश्रेष्ठ आकारसे युक्त संबुद्ध परिनिर्वाणको प्राप्त हुए,
"तो उस समय भीषणता हुई, उस समय रोमांच हुआ।"

(२४४) परिनिब्बुते भगवति ये ते तत्थ भिक्खू अवीतरागा अप्पे कच्चे बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति। आवट्टन्ति। विवट्टन्ति। "अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं चक्खुमा! लोके अन्तरहितो, ति"॥ ये पन ते भिक्खू वीतरागा ते सता संपजाना अधिवासेन्ति। "अनिच्चा सङ्खारा तं कुतेत्थ लब्भा ति"।

(२४५) अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो भिक्खू आमन्तेसि--"अलं आवुसो! मा सोचित्थ, मा परिदेवित्थ। ननु एतं आवुसो! भगवता पटिकच्चेव अक्खातं सब्बेहेव पियेहि मनापेहि नाना-भावो विना-भावो अञ्ञथा-भावो तं कुतेत्थ आवुसो! लब्भा। यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोक-धम्मं तं वत मा-पलुज्जीति नेतं ठानं विज्जति। देवता आवुसो! उज्झायन्ती, ति"॥

(२४६) कथं भूता पन भन्ते अनुरुद्ध! देवता मनसि करोन्ती, ति?

(२४७) सन्तावुसो आनन्द! देवता आकासे पथवी सञ्ञिनियो केसे पकिरिय कन्दन्ति। बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति।

---

(२४४) भगवान्‌के परिनिर्वाण हो जानेपर, जो वह अवीत-राग (=अ-विरागी) भिक्षु थे, (उनमें) कोई बाँह पकड़कर क्रन्दन करते थे; कटे (वृक्ष) के सदृश गिरते थे, (धरतीपर) लोटते थे—'भगवान् बहुत जल्दी परिनिर्वृत्त हो गये०। किन्तु जो वीत-राग भिक्षु थे, वह स्मृति-संप्रजन्यके साथ स्वीकार (=सहन) करते थे—'संस्कार अनित्य है, सो कहाँ मिलेगा?'

(२४५) तब आयुष्मान् अनुरुद्धने भिक्षुओंसे कहा—

"नहीं आवुसो! शोक मत करो, रोदन मत करो। भगवान्‌ने तो आवुसो! यह पहले ही कह दिया है—'सभी प्रियों०से जुदाई० होनी है०'।"

(२४६) "भन्ते अनुरुद्ध! देवताओंके मनमें कैसा है?

(२४७) आवुस आनन्द! देवता आकाशको पृथिवी ख्यालकर बाल खोले रो रहे हैं। हाथ पकड़कर चिल्ला रहे हैं। कटे (वृक्ष) की भाँति भूमि पर गिर रहे हैं।

आवट्टन्ति। विवट्टन्ति। "अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं चक्खुमा! लोके अन्तरहितो, ति॥" सन्तावुसो आनन्द! देवता पथविया पथवी-सञ्ञिनियो केसे पकिरिय कन्दन्ति। बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति। आवट्टन्ति। विवट्टन्ति। अति खिप्पं भगवा परिनिब्बुतो, अति खिप्पं सुगतो परिनिब्बुतो, अति खिप्पं चक्खुमा लोके अन्तरहितो, ति॥" या पन देवता वीतरागा ता सता संपजाना अधिवासेन्ति,—"अनिच्चा सङ्खारा तं कुतेत्थ लब्भा, ति॥"

(२४८) अथ खो आयस्मा च अनुरुद्धो आयस्मा च आनन्दो तं रत्तावसेसं धम्मिया-कथाय वीतिनामेसुं। अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"गच्छावुसो आनन्द! कुसिनारं पविसित्वा कोसिनारकानं मल्लानं आरोचेहि—"परिनिब्बुतो वासिट्ठा! भगवा यस्स दानि कालं मञ्ञथा, ति॥"

(२४९) एवं भन्ते! ति खो आयस्मा आनन्दो आयस्मतो अनुरुद्धस्स पटिस्सुत्वा पुब्बन्ह समयं निवासेत्वा पत्त चीवरमादाय अत्त दुतियो कुसिनारं पाविसि। तेन खो पन समयेन कोसिनारका मल्ला संथागारे

(यह कहते) लोट पोट रहे हैं,—बहुत जल्दी भगवान् निर्वाणको प्राप्त हो रहे हैं। बहुत शीघ्र सुगत निर्वाणको प्राप्त हो रहे हैं। बहुत शीघ्र चक्षुमान (=बुद्ध) लोकसे अन्तर्धान हो रहे हैं। ०। और जो देवता होश-चेतवाले हैं,—वह होश-चेत स्मृति संप्रजन्योंके साथ सह रहे हैं,—"संस्कृत (=कृत वस्तुएँ) अनित्य हैं। सो कहाँ मिल सकता है।"

(२४८) आयुष्मान् अनुरुद्ध और आयुष्मान् आनन्दने वह बाकी रात धर्म-कथामें बिताई। तब आयुष्मान् अनुरुद्धने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—

"जाओ! आवुस आनन्द! कुसीनारामें जाकर, कुसीनाराके मल्लोंसे कहो—'वाशिष्टो! भगवान् परिनिर्वृत्त हो गये। अब जिसका तुम काल समझो (वह करो)।"

(२४९) "अच्छा भन्ते!" कह...आयुष्मान् आनन्द पहिनकर पात्र-चीवर ले अकेले कुसीनारामें प्रविष्ट हुए। उस समय किसी कामसे कुसीनाराके मल्ल, संस्था-

सन्निपतिता होन्ति तेनेव करणीयेन। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन कोसिनारकानं मल्लानं सन्थागारं तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा कोसिनारकानं मल्लानं आरोचेसि—"परिनिब्बुतो वासिट्ठा! भगवा यस्स दानि कालं मञ्ञथा, ति॥"

(२५०) इदमायस्मतो आनन्दस्स वचनं सुत्वा मल्ला च मल्लपुत्ता च मल्लसुणिसा च मल्लपजापतियो च अघाविनो दुम्मना-चेतो दुक्खसमप्पिता अप्पे कच्चे केसे पकिरिय कन्दन्ति। बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति। आवट्टन्ति। विवट्टन्ति—"अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं चक्खुमा! लोके अन्तरहितो, ति॥"

(२५१) अथ खो कोसिनारका मल्ला पुरिसे आणापेसुं—"तेन हि भणे! कुसिनारायं गन्ध मालं सब्बञ्च तालावचरं सन्निपातेथा, ति॥"

गार (=प्रजातन्त्र-सभा-भवन) में जमा थे। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ मल्लोंका संथागार था, वहाँ गये। जाकर कुसीनाराके मल्लोंसे बोले—

"वाशिष्टो! भगवान् परिनिर्वृत हो गये, अब जिसका तुम काल समझो (वैसा करो)।"

(२५०) आयुष्मान् आनन्दसे यह सुनकर मल्ल, मल्ल-पुत्र, मल्ल-वधुयें, मल्ल-भार्यायें दुःखित हो० कोई केशोंको बिखेरकर क्रंदन करती थीं, दुर्मना चित्तमें संतप्त हो कोई कोई केशोंको बिखेर कर रोती थीं, बाँह पकड़कर रोती थीं, (वृक्ष) की भाँति गिरती थीं, (धरतीपर) लुंठित विलुंठित होती थीं—"बड़ी जल्दी भगवान्का निर्वाण हुआ, बड़ी जल्दी सुगतका निर्वाण हुआ, बड़ी जल्दी लोकनेत्र अंतर्धान हो गये।"

(२५१) तब कुसीनाराके मल्लोंने पुरुषोंको आज्ञा दी—"तो भणे! कुसीनाराकी सभी गंध-माला और सभी वाद्योंको जमा करो।"

(२५२) अथ खो कोसिनारका मल्ला गन्ध माले च सब्बञ्च तालावचरं पञ्च च दुस्स युग सतानि आदाय येन उपवत्तनं मल्लानं सालवनं, येन भगवतो सरीरं, तेनुपसङ्कमिंसु। उपसङ्कमित्वा भगवतो सरीरं नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता चेलवितानानि करोन्ता मण्डल माले पटियादेन्ता एक दिवसं वीतिनामेसुं।

(२५३) अथ खो कोसिनारकानं मल्लानं एतदहोसि—"अति विकालो खो अज्ज भगवतो सरीरं झापेतुं। स्वेदानि मयं भगवतो सरीरं झापेस्साम, ति"॥

(२५४) अथ खो कोसिनारका मल्ला भगवतो सरीरं नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता चेलवितानानि करोन्ता मण्डल माले पटियादेन्ता दुतियम्पि दिवसं वीतिनामेसुं। ततियम्पि दिवसं वीतिनामेसुं। चतुत्थंपि दिवसं वीतिनामेसुं। पञ्चमंपि दिवसं वीतिनामेसुं। छट्ठंपि दिवसं वीतिनामेसुं॥

(२५२) तब कुसीनाराके मल्ल गंध-माला, सभी वाद्यों, और पाँच हजार थान (=दुस्स)-जोळोंको लेकर जहाँ *उपवत्तन ० था, जहाँ भगवान्‌का शरीर था, वहाँ गये। जाकर उन्होंने भगवान्‌के शरीरको नृत्य, गीत, वाद्य, माला, गंधसे सत्कार करते, =गुरुकार करते, =मानते =पूजते कपळेका वितान (=चँदवा) करते, मंडप बनाते उस दिनको बिता दिया।

(२५३) तब कुसीनाराके मल्लोंको हुआ—'भगवान्‌के शरीरके दाह करनेको आज बहुत विकाल हो गया। अब कल भगवान्‌के शरीरका दाह करेंगे।'

(२५४) तब कुसीनाराके मल्लोंने भगवान्‌के शरीरको नृत्य, गीत, वाद्य, माला, गंधसे सत्कार करते=गुरुकार करते=मानते=पूजते, चँदवा तानते, मंडप बनाते दूसरा दिन भी बिता दिया। तीसरा दिन भी ०। ० चौथा दिन भी ०। ० पाँचवाँ दिन भी ०। छठाँ दिन भी ०।

---

* वर्तमान माथाकुंवर, कसया (जि. गोरखपुर)।

(२५५) अथ खो सत्तमं दिवसं कोसिनारकानं मल्लानं एतदहोसि —
"मयं भगवतो सरीरं नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता दक्खिणेन दक्खिणं नगरस्स हरित्वा बाहिरेन बाहिरं दक्खिणतो नगरस्स भगवतो सरीरं झापेस्सामा, ति" ॥ तेन खो पन समयेन अट्ठ मल्ल पामोक्खा सीसं न्हाता अहतानि वत्थानि निवत्था मयं भगवतो सरीरं उच्चारेस्सामा, ति । न सक्कोन्ति उच्चारेतुं ॥

(२५६) अथ खो कोसिनारका मल्ला आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोचुं —
"को नु खो भन्ते अनुरुद्ध ! हेतु, को पच्चयो येनिमे अट्ठ मल्ल पामोक्खा सीसं न्हाता अहतानि वत्थानि निवत्था मयं भगवतो सरीरं उच्चारेस्सामा, ति । न सक्कोन्ति उच्चारेतुन्ति ? ॥"

(२५७) "अञ्ञथा खो वासिट्ठा ! तुम्हाकं अधिप्पायो, अञ्ञथा देवतानं अधिप्पायो, ति ॥

(२५८) कथं पन भन्ते ! देवतानं अधिप्पायो, ति ?

(२५५) तब सातवें दिन कुसीनाराके मल्लोंको यह हुआ—'हम भगवान्के शरीरको नृत्य० गंधसे सत्कार करते नगरके दक्षिणसे लेजाकर बाहरसे बाहर नगरके दक्षिण भगवान्के शरीरका दाह करें। उस समय मल्लोंके आठ प्रमुख (=मुखिया) शिरसे नहाकर, नये वस्त्र पहिन, भगवान्के शरीरको उठाना चाहते थे; लेकिन वह नहीं उठा पाते थे।

(२५६) तब कुसीनाराके मल्लोंने आयुष्मान् अनुरुद्धसे पूछा—"भन्ते ! अनुरुद्ध ! क्या हेतु है = क्या कारण है; जो कि हम आठ मल्ल-प्रमुख० नहीं उठा सकते ?"

(२५७) "वाशिष्ठो ! तुम्हारा अभिप्राय दूसरा है, और देवताओंका अभिप्राय दूसरा है।"

(२५८) "भन्ते ! देवताओंका अभिप्राय क्या है ?"

(२६३) अथ खो देवता च कोसिनारका च मल्ला भगवतो सरीरं
ब्बे हि च मानुसके हि च नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि
धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता उत्तरेन उत्तरं
ारस्स हरित्वा उत्तरेन द्वारेन नगरं पवेसेत्वा मज्झेन मज्झं
ारस्स हरित्वा पुरत्थिमेन द्वारेन निक्खमित्वा पुरत्थिमतो नगरस्स
कुट-बन्धनं नाम मल्लानं चेतियं, एत्थ च भगवतो सरीरं निक्खिपिंसु ॥

(२६४) अथ खो कोसिनारका मल्ला आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोचुं—
कथं मयं भन्ते आनन्द ! तथागतस्स सरीरे पटिपज्जामा, ति ?"

(२६५) "यथा खो वासिट्ठा ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटि-
जन्ति, एवं तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बन्ति ॥"

(२६६) कथं पन भन्ते आनन्द ! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटि-
जन्ती, ति ?

(२६७) रञ्ञो वासिट्ठा ! चक्कवत्तिस्स सरीरं अहतेन वत्थेन वेठेन्ति ।
हतेन वत्थेन वेठेत्वा विहतेन कप्पासेन वेठेन्ति । विहतेन कप्पासेन
त्वा अहतेन वत्थेन वेठेन्ति । एतेन उपायेन पञ्च हि युग सते हि रञ्ञो
वत्तिस्स सरीरं वेठेत्वा आयसाय तेल-दोणिया पक्खिपित्वा
ञ्ञस्सा आयसाय-दोणिया पटिकुज्जित्वा सब्ब गन्धानं चितकं

(२६३) तब देवताओं और कुसीनाराके मल्लोंने भगवान्‌के शरीरको
और मानुष नृत्य०के साथ सत्कार करते० नगरसे उत्तर उत्तरसे ले जाकर०
) मुकुट-बंधन नामक मल्लोंका चैत्य था, वहाँ भगवान्‌का शरीर रक्खा ।

(२६४) तब कुसीनाराके मल्लोंने आयुष्मान् आनन्दसे कहा - "भन्ते !
न्द ! हम तथागतके शरीरको कैसे करें ?"

(२६५) "वाशिष्टो ! जैसे चक्रवर्ती राजाके शरीरको करते हैं, वैसे ही तथागतके
को करना चाहिये ।"

(२६६) "कैसे भन्ते ! चक्रवर्ती राजाके शरीरको करते हैं ।"

(२६७) "वाशिष्टो ! चक्रवर्ती राजाके शरीरको नये कपड़ेसे लपेटते हैं ० ।

(२५९) तुम्हाकं खो वासिट्ठा ! अधिप्पायो "मयं भगवतो सरीरं नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुं-करोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता दक्खिणेन दक्खिणं नगरस्स हरित्वा बाहिरेन बाहिरं दक्खिणतो नगरस्स भगवतो सरीरं झापेस्सामा, ति" ॥

(२६०) देवतानं खो वासिट्ठा ! अधिप्पायो—"मयं भगवतो सरीरं दिब्बे हि नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता उत्तरेन उत्तरं नगरस्स हरित्वा उत्तरेन द्वारेन नगरं पवेसेत्वा मज्झेन मज्झं नगरस्स हरित्वा पुरत्थिमेन द्वारेन निक्खमित्वा पुरत्थिमतो नगरस्स मकुट-बन्धं नाम चेतियं, एत्थ भगवतो सरीरं झापेस्सामा, ति" ॥

(२६१) "यथा भन्ते ! देवतानं अधिप्पायो तथा होतू, ति" ॥

(२६२) तेन खो पन समयेन कोसिनारका मल्ला याव सन्धिसमल-संकटिरा जण्णुमत्तेन ओधिना मन्धारव पुप्फे हि सन्थाता होति ॥

(२५९) "वाशिष्टो ! तुम्हारा अभिप्राय है, हम भगवान्के शरीरको नृत्य०से सत्कार करते० नगरके दक्षिण दक्षिण ले जाकर, बाहरसे बाहर नगरके दक्षिण, भगवान्के शरीर का दाह करें।

(२६०) देवताओंका अभिप्राय है—हम भगवान्के शरीरको दिव्य नृत्यसे० सत्कार करते० नगरके उत्तर उत्तर ले जाकर, उत्तर-द्वारसे नगरमें० प्रवेशकर, नगरके बीच ले जा, पूर्व-द्वारसे निकल, नगरके पूर्व ओर (जहाँ) *मुकुट-बंधन नामक मल्लोंका चैत्य (=देवस्थान) है, वहाँ भगवान्के शरीरका दाह करें।"

(२६१) "भन्ते ! जैसा देवताओंका अभिप्राय है—वैसा ही हो।"

(२६२) उस समय कुसीनारामें जाँघभर मन्दारव-पुष्प (=एक दिव्य पुष्प) बरसे हुए थे।

---

* वर्तमान रामाभार, कसया (जि. गोरखपुर)।

(२६३) अथ खो देवता च कोसिनारका च मल्ला भगवतो सरीरं दिब्बे हि च मानुस्सके हि च नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करोन्ता गरुंकरोन्ता मानेन्ता पूजेन्ता उत्तरेन उत्तरं नगरस्स हरित्वा उत्तरेन द्वारेन नगरं पवेसेत्वा मज्झेन मज्झं नगरस्स हरित्वा पुरत्थिमेन द्वारेन निक्खमित्वा पुरत्थिमतो नगरस्स मकुट-बन्धनं नाम मल्लानं चेतियं, एत्थ च भगवतो सरीरं निक्खिपिंसु ॥

(२६४) अथ खो कोसिनारका मल्ला आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोचुं— "कथं मयं भन्ते आनन्द! तथागतस्स सरीरे पटिपज्जामा, ति?"

(२६५) "यथा खो वासिट्ठा! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति, एवं तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बन्ति ॥"

(२६६) कथं पन भन्ते आनन्द! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ती, ति?

(२६७) रञ्ञो वासिट्ठा! चक्कवत्तिस्स सरीरं अहतेन वत्थेन वेठेन्ति। अहतेन वत्थेन वेठेत्वा विहतेन कप्पासेन वेठेन्ति। विहतेन कप्पासेन वेठेत्वा अहतेन वत्थेन वेठेन्ति। एतेन उपायेन पञ्च हि युग सते हि रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरं वेठेत्वा आयसाय तेल-दोणिया पक्खिपित्वा अञ्ञिस्सा आयसाय-दोणिया पटिकुज्जित्वा सब्ब गन्धानं चितकं

(२६३) तब देवताओं और कुसीनाराके मल्लोंने भगवान्‌के शरीरको दिव्य और मानुष नृत्य०के साथ सत्कार करते० नगरसे उत्तर उत्तरसे ले जाकर० (जहाँ) मुकुट-बंधन नामक मल्लोंका चैत्य था, वहाँ भगवान्‌का शरीर रक्खा।

(२६४) तब कुसीनाराके मल्लोंने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"भन्ते! आनन्द! हम तथागतके शरीरको कैसे करें?"

(२६५) "वाशिष्टो! जैसे चक्रवर्ती राजाके शरीरको करते हैं, वैसे ही तथागतके शरीरको करना चाहिये।"

(२६६) "कैसे भन्ते! चक्रवर्ती राजाके शरीरको करते हैं।"

(२६७) "वाशिष्टो! चक्रवर्ती राजाके शरीरको नये कपड़ेसे लपेटते हैं०। (२६८) बड़े चौरस्ते पर तथागतका स्तूप बनवाना चाहिये। वहाँ जो माला और

करित्वा रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरं झापेन्ति। चातु महापथे रञ्ञो चक्कवत्तिस्स थूपं करोन्ति। एवं खो वासिट्ठा! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति। "यथा खो वासिट्ठा! रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सरीरे पटिपज्जन्ति, एवं तथागतस्स सरीरे पटिपज्जितब्बं। चातु महापथे तथागतस्स थूपो कातब्बो। तत्थ ये मालं वा गन्धं वा चुण्णकं वा आरोपेस्सन्ति वा अभिवादेस्सन्ति वा चित्तं वा पसादेस्सन्ति, ते सन्तं भविस्सति दीघ रत्तं हिताय सुखाया, ति"॥

(२६८) अथ खो कोसिनारका मल्ला पुरिसे आणापेसुं—"तेन हि भणे! मल्लानं विहतं कप्पासं सन्निपातेथा, ति"॥

(२६९) अथ खो कोसिनारका मल्ला भगवतो सरीरं अहतेन वत्थेन वेठेत्वा विहतेन कप्पासेन वेठेसुं। विहतेन कप्पासेन वेठेत्वा अहतेन वत्थेन वेठेसुं। एतेन उपायेन पञ्च हि युग सते हि भगवतो सरीरं वेठेत्वा आयसाय तेल-दोणिया पक्खिपित्वा अञ्ञिस्सा आयसाय-दोणिया पटिकुज्जित्वा सब्ब गन्धानं चितकं करित्वा भगवतो सरीरं आरोपेसुं॥

या चूर्ण चढ़ायेंगे, या अभिवादन करेंगे, या चित्तको प्रसन्न करेंगे, उनके लिये वह चिरकाल तक हित-सुखके लिये होगा।"

(२६८) तब कुसीनाराके मल्लोंने आदमियोंको आज्ञा दी—"जाओ रे! धुनी रुईको एकत्रित करो।

(२६९) तब कुसीनाराके मल्लोंने भगवान्‌के शरीरको कोरे वस्त्रमें लपेटा। कोरे वस्त्रमें लपेटकर धुने कपाससे लपेटा। धुने कपाससे लपेटकर, कोरे वस्त्रमें लपेटा। इसी प्रकार पाँच सौ जोळेमें लपेटकर ताँवे (=लोह) की तेलवाली कळाही (=द्रोणी) में रख सारे गंध (काष्ठों) की चिता बनाकर, भगवान्‌के शरीरको चितापर रक्खा।

(२७०) तेन खो पन समयेन आयस्मा महाकस्सपो पावाय कुसिनारं अद्धान मग्गप्पटिपन्नो होति महता भिक्खु-संघेन सद्धिं पञ्चमत्ते हि भिक्खु सते हि। अथ खो आयस्मा महाकस्सपो मग्गा ओक्कम्म अञ्ञतरस्मिं रुक्ख मूले निसीदि। तेन खो पन समयेन अञ्ञतरो आजीवको कुसिनाराय मन्दारव पुप्फं गहेत्वा पावं अद्धान मग्गप्पटिपन्नो होति। अद्दसा खो आयस्मा महाकस्सपो तं आजीवकं दूरतो व आगच्छन्तं दिस्वा तं आजीवकं एतदवोच,—

(२७१) "आवुसो! अम्हाकं सत्थारं जानासी, ति?"

(२७२) "आमावुसो! जानामि, अज्ज सत्ताह परिनिब्बुतो समणो गोतमो। ततो मे इदं मन्दारव पुप्फं गहितन्ति"॥

(२७३) तत्थ ये ते भिक्खू अवीतरागा अप्पे कच्चे बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। छिन्नपातं पपतन्ति। आवट्टन्ति। विवट्टन्ति,—"अति खिप्पं भगवा! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं सुगतो! परिनिब्बुतो, अति खिप्पं

महाकाश्यपको दर्शन

चक्खुमा ! लोके अन्तरहितो, ति"। ये पन ते भिक्खू वीतरागा ते सता सम्पजाना अधिवासेन्ति,—"अनिच्चा सङ्खारा तं कुतेत्थ लब्भा, ति"॥

तेन खो पन समयेन सुभद्दो नाम वुड्ढ-पब्बजितो तस्स परिसायं निसिन्नो होति। अथ खो सुभद्दो वुड्ढ-पब्बजितो ते भिक्खू एतदवोच,—"अलं आवुसो ! मा सोचित्थ मा परिदेवित्थ। सुमुत्ता मयं तेन महा-समणेन उपद्दुता च होम 'इदं वो कप्पति, इदं वो न कप्पती, ति'। इदानि पन मयं यं इच्छिस्साम तं करिस्साम। यं न इच्छिस्साम न तं करिस्सामा, ति"॥

(२७४) अथ खो आयस्मा महाकस्सपो भिक्खू आमन्तेसि,—"अलं आवुसो ! मा सोचित्थ मा परिदेवित्थ। ननु एतं आवुसो ! भगवता पटिकच्चेव अक्खातं, सब्बे हेव पियेहि मनापेहि नाना-भावो विना-भावो अञ्ञथा-भावो। तं कुतेत्थ आवुसो ! लब्भा। यन्तं जातं भूतं सङ्खतं पलोक धम्मं, तं तथागतस्सा पि सरीरं मा पलुज्जीति। नेतं ठानं विज्जती, ति"॥

(२७५) तेन खो पन समयेन चत्तारो मल्ला पामोक्खा सीसं न्हाता अहतानि वत्थानि निवत्था मयं भगवतो चितकं आलिम्पेस्सामा, ति। न सक्कोन्ति आलिम्पेतुं। अथ खो कोसिनारका मल्ला आयस्मन्तं अनुरुद्धं

आवुसो ! मत शोक करो, मत रोओ। हम सुमुक्त हो गये। उस महाश्रमणसे पीळित रहा करते थे—'यह तुम्हें विहित है, यह तुम्हें विहित नहीं है।' अब हम जो चाहेंगे, सो करेंगे; जो नहीं चाहेंगे, सो नहीं करेंगे।"

(२७४) तब आयुष्मान् महाकाश्यपने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"आवुसो ! मत सोचो, मत रोओ। आवुसो ! भगवान्‌ने तो यह पहले ही कह दिया है—सभी प्रियों=मनापोंसे जुदाई ० होनी है, सो वह आवुसो ! कहाँ मिलनेवाला है ? जो जात (=उत्पन्न) =भूत ० है, वह नाश होनेवाला है। 'हाय ! वह नाश मत हो'—यह सम्भव नहीं।"

(२७५) उस समय चार मल्ल-प्रमुख शिरसे नहाकर, नया वस्त्र पहिन, भगवान्‌की चिताको आग देना चाहते थे, किन्तु नहीं दे सकते थे। तब कुसीनाराके मल्लोंने

एतदवोचुं—"को नु खो भन्ते अनुरुद्ध ! हेतु को पच्चयो, येनिमे चत्तारो मल्ला पामोक्खा सीसं न्हाता अहतानि वत्थानि निवत्था मयं भगवतो चितकं आलिम्पेस्सामा, ति। न सक्कोन्ति आलिम्पेतुन्ति" ॥

(२७६) "अञ्ञथा खो वासिट्ठा ! देवतानं अधिप्पायो, ति" ॥

(२७७) कथं पन भन्ते ! देवतानं अधिप्पायो, ति ?

(२७८) देवतानं खो वासिट्ठा ! अधिप्पायो,—"अयं आयस्मा महाकस्सपो पावाय कुसिनारं अद्धान मग्गप्पटिपन्नो महता भिक्खु-संघेन सद्धिं पञ्चमत्ते हि भिक्खु सते हि। न ताव भगवतो चितको पज्जलिस्सति, यावायस्मा महाकस्सपो भगवतो पादे सिरसा न वन्दिस्सती, ति" ॥

(२७९) "यथा भन्ते ! देवतानं अधिप्पायो तथा होतू, ति" ॥

(२८०) अथ खो आयस्मा महाकस्सपो येन कुसिनारा मकुट-बन्धनं नाम मल्लानं चेतियं येन भगवतो चितको तेनुपसङ्कमि। उपसङ्कमित्वा एकंसं चीवरं कत्वा अञ्जलिं पणामेत्वा तिक्खत्तुं चितकं पदक्खिणं

कत्वा भगवतो पादे सिरसा वन्दि। तानि पि खो पञ्च भिक्खु सतानि एकंसं चीवरं कत्वा अञ्जलिं पणामेत्वा तिक्खत्तुं चितकं पदक्खिणं कत्वा भगवतो पादे सिरसा वन्दिसु। वन्दिते च पनायस्मता महाकस्सपेन तेहि च पञ्च हि भिक्खु सते हि सयमेव भगवतो चितको पज्जलि ॥

(२८१) झायमानस्स खो पन भगवतो सरीरस्स यं अहोसि छवीति वा चम्मन्ति वा मंसन्ति वा न्हारूति वा लसिकाति वा। तस्स नेव छारिका पञ्ञायित्थ न मंसी। सरीरा नेव अवसिस्सिंसु। सेय्यथा पि नाम,—सप्पिस्स वा तेलस्स वा झायमानस्स नेव छारिका पञ्ञायति न मंसी, एवमेव भगवतो सरीरस्स झायमानस्स यं अहोसि छवीति वा चम्मन्ति वा मंसन्ति वा न्हारूति वा लसिकाति वा, तस्स नेव छारिका पञ्ञायित्थ न मंसी। सरीरा नेव अवसिस्सिंसु। तेसञ्च पञ्चन्नं दुस्स युग सतानं द्वेव दुस्सानि न डय्हिंसु यञ्च सब्ब अब्भन्तरिमं यञ्च बाहिरं। डड्ढे च खो पन भगवतो सरीरे अन्तलिक्खा उदक-धारा पातुभवित्वा भगवतो चितकं निब्बापेसि। उदक-सालतो पि अब्भुन्नमित्वा भगवतो चितकं निब्बापेसि। कोसिनारका पि मल्ला सब्ब गन्धोदकेन भगवतो चितकं निब्बापेसुं ॥

जोळ, तीन वार चिताकी परिक्रमाकर, चरण खोलकर, शिरसे वन्दना की। उन पाँच सौ भिक्षुओंने भी एक कन्धेपर चीवर कर, हाथ जोळ तीन वार चिताकी प्रदक्षिणाकर, भगवान्‌के चरणोंमें शिरसे वन्दना की। आयुष्मान् महाकाश्यप और उन पाँच सौ भिक्षुओंके वन्दना कर लेते ही, भगवान्‌की चिता स्वयं जल उठी।

(२८१) भगवान्‌के शरीरमें जो छवि (=झिल्ली) या चर्म, मांस, नस, या लसिका थी उनकी न राख जान पळी, न कोयला; सिर्फ अस्थियाँ ही बाकी रह गईं; जैसे कि जलते हुए घी या तेलकी न राख (=छारिका) जान पळती है, न कोयला (=मसी)...। भगवान्‌के शरीरके दग्ध हो जानेपर मेघने प्रादुर्भूत हो आकाशसे भगवान्‌की चिताको ठंडा किया।...। कुसीनाराके मल्लोंने भी सर्व-गन्ध(-मिश्रित) जलसे भगवान्‌की चिताको ठंडा किया।

(२८२) अथ खो कोसिनारका मल्ला भगवतो सरीरानि सत्ताहं सन्थागारे सत्ति-पञ्जरं करित्वा धनु-पाकारं परिक्खीपापेत्वा नच्चे हि गीते हि वादिते हि माले हि गन्धे हि सक्करिंसु गरुं-करिंसु मानेसुं पूजेसुं ॥

(२८३) अस्सोसि खो राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहि-पुत्तो,— 'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहि-पुत्तो कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसि,—'भगवा पि खत्तियो अहं पि खत्तियो। अहं पि अरहामि भगवतो सरीरानं भागं। अहं पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामी, ति' ॥

(२८४) अस्सोसुं खो वेसालिका लिच्छवी,—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति।' अथ खो वेसालिका लिच्छवी कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा पि खत्तियो मयम्पि खत्तिया। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामा, ति' ॥

(२८२) तब कुसीनाराके मल्लोंने भगवान्‌की अस्थियों (=सरीरानि) को सप्ताह भर संस्थागारमें शक्ति (-हस्त पुरुषोंके घेरेका)-पंजर बनवा, धनुष (-हस्त पुरुषोंके घेरेका)-आकार बनवा, नृत्य, गीत, वाद्य, माला, गंधसे सत्कार किया= गुरुकार किया, माना=पूजा।

(२८५) अस्सोसुं खो कपिलवत्थु वासी सक्या—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो कपिलवत्थु-वासी सक्या कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा अम्हाकं ञाति सेट्ठो। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्साम, ति'॥

(२८६) अस्सोसुं खो अल्लकप्पका बुलयो—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो अल्लकप्पका बुलयो कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा पि खत्तियो मयम्पि खत्तिया। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्साम, ति'॥

(२८७) अस्सोसुं खो रामगामका कोलिया—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो रामगामका कोलिया कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा पि खत्तियो मयम्पि खत्तिया। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्साम, ति'॥

(२८८) अस्सोसि खो वेठ-दीपको* ब्राह्मणो—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो वेठ-दीपको ब्राह्मणो कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसि,—'भगवा पि खत्तियो अहमस्मि ब्राह्मणो। अहम्पि अरहामि भगवतो सरीरानं भागं। अहंपि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामी, ति'॥

(२८५) कपिलवस्तुके शाक्योंने सुना ०।—'भगवान् हमारे ज्ञातिके (थे) ०।

(२८६) अल्लकप्पके बुलियोंने सुना ०।

(२८७) रामग्रामके कोलियोंने सुना ०।

(२८८) वेठ-दीपके ब्राह्मणोंने सुना ०, भगवान् भी क्षत्रिय थे, हम ब्राह्मण ०।

---

* शिलालेख में 'विष्णु-द्वीप' है।

(२८९) अस्सोसुं खो पावेय्यका मल्ला*—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति'। अथ खो पावेय्यका मल्ला कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा पि खत्तियो मयम्पि खत्तिया। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामा, ति'॥

(२९०) एवं वुत्ते कोसिनारका मल्ला ते सङ्घे गणे एतदवोचुं—'भगवा अम्हाकं गाम-खेत्ते परिनिब्बुतो। न मयं दस्साम भगवतो सरीरानं भागन्ति'॥

(२९१) एवं वुत्ते दोणो ब्राह्मणो ते सङ्घे गणे एतदवोच,—

"सुणन्तु भोन्तो! मम एक वाचं, अम्हाकं बुद्धो अहु खन्ति-वादो।
नहि साधु यं उत्तम पुग्गलस्स, सरीर-भागे सिया संपहारो॥
सब्बे व भोन्तो! सहिता समग्गा, सम्मोदमाना करोमट्ठ भागे।
वित्थारिका होन्तु दिसासु थूपा, बहूजना चक्खुमतो पसन्ना, ति॥"

(२९२) "तेन हि ब्राह्मण! त्वञ्ञेव भगवतो सरीरानि अट्ठधा समं सुविभत्तं विभज्जाही, ति"॥

(२८९) पावाके मल्लोंने भी सुना०।

(२९०) ऐसा कहनेपर कुसीनाराके मल्लोंने उन संघों और गणोंसे कहा—"भगवान हमारे ग्राम-क्षेत्रमें परिनिर्वृत हुए, हम भगवान्के शरीरों (=अस्थियों) का भाग नहीं देंगे।"

(२९३) "एवं भो" ति खो दोणो ब्राह्मणो तेसं सङ्घानं गणानं पटिस्सुत्वा भगवतो सरीरानि अट्ठधा समं सुविभत्तं विभज्जित्वा ते सङ्घे गणे एतदवोच—"इमं मे भोन्तो! तुम्बं ददन्तु, अहं पि तुम्बस्स थूपञ्च महञ्च करिस्सामी, ति" ॥

(२९४) अदंसु खो ते दोणस्स ब्राह्मस्स तुम्बं ॥

(२९५) अस्सोसुं खो पिप्पलिवनिया मोरिया—'भगवा किर कुसिनारायं परिनिब्बुतो, ति' ॥ अथ खो पिप्पलिवनिया मोरिया कोसिनारकानं मल्लानं दूतं पाहेसुं,—'भगवा पि खत्तियो मयम्पि खत्तिया। मयम्पि अरहाम भगवतो सरीरानं भागं। मयम्पि भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च करिस्सामा, ति' ॥

"नत्थि भगवतो सरीरानं भागो, विभत्तानि भगवतो सरीरानि। इतो अङ्गारं हरथा, ति"। ते ततो अङ्गारं आहरिंसु ॥

(२९६) अथ खो [१] राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहि-पुत्तो राजगहे भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकासि ॥

(२९३) "अच्छा भो!"...द्रोण ब्राह्मणने भगवान्‌के शरीरोंको आठ समान भागोंमें सुविभक्त (=बाँट) कर, उन सबों गणोंसे कहा—"आप सब इस तुम्बेको मुझे दें, मैं तुम्बका स्तूप बनाऊँगा और पूजा करूँगा।"

(२९४) उन्होंने द्रोण ब्राह्मणको तुम्ब दे दिया।

(२९५) पिप्पलीवनके मोरियों (=मौर्यों) ने सुना ० "भगवान्‌भी क्षत्रिय हमभी क्षत्रिय ०।"

"भगवान्‌के शरीरोंका भाग नहीं है, भगवान्‌के शरीर बँट चुके। यहाँ से कोयला (=अंगार) ले जाओ।" वह वहाँसे अंगार ले गये।

(२९६) तब [१] राजा० * अजातशत्रु ० ने राजगृहमें भगवान्‌के अस्थियोंका

* अ. क. "कुसीनारासे राजगृह पचीस योजन है। इस बीचमें आठ ऋषभ

[२] वेसालिका पि लिच्छवी वेसालियं भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु ॥

[३] कपिलवत्थु-वासी सक्या कपिलवत्थुस्मिं भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु ॥

[४] अल्लकप्पका पि बुलयो अल्लकप्पे भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु ॥

[५] रामगामका पि कोलिया रामगामे भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु ॥

स्तूप (बनाया) और पूजा (=मह) की [२] वैशाली के लिच्छवियोंने भी ०। [३] कपिलवस्तुके शाक्योंने भी ०। [४] अल्लकप्पके बुलियोंने भी ०। [५] राम-

---

चौड़ा समतल मार्ग बनवा, मल्ल राजाओंने मुकुट-बंधन और संस्थागारमें जैसी पूजा की थी, वैसीही पूजा पचीस योजन मार्गमें की।...(उसने) अपने पाँच सौ योजन परिमंडल (=घेरेवाले) राज्यके मनुष्योंको एकत्रित करवाया। उन धातुओंको ले, कुसीनारासे धातु (-निमित्त) क्रीड़ा करते निकलकर (लोग) जहाँ सुन्दर पुष्पोंको देखते, वहाँ पूजा करते थे। इस प्रकार धातु लेकर आते हुए, सात वर्ष सात मास सात दिन बीत गये।.. लाई गई धातुओंको लेकर (अजातशत्रुने) राजगृहमें स्तूप बनवाया, पूजा कराई।..

इस प्रकार स्तूपोंके प्रतिष्ठित हो जानेपर महाकाश्यप स्थविरने धातुओंके अन्तराय (=विघ्न) को देखकर, राजा अजातशत्रुके पास जाकर कहा—"महाराज! एक धातु-निधान

[६] वेठ-दीपको पि ब्राह्मणो वेठ-दीपे भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकासि।

[७] पावेय्यका पि मल्ला पावायं भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु॥

[८] कोसिनारका पि मल्ला कुसिनारायं भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकंसु॥

[९] दोणो पि ब्राह्मणो तुम्बस्स थूपञ्च महञ्च अकासि॥

[१०] पिप्पलिवनिया पि मोरिया पिप्पलिवने अङ्गारानं थूपञ्च महञ्च अकंसु॥

(२९७) इति अट्ठ सरीर-थूपा, नवमो तुम्ब-थूपो, दसमो अङ्गार-थूपो; एवमेतं भूत-पुब्बन्ति॥

अट्ठ दोणं चक्खुमतो सरीरं, सत्त दोणं जम्बुदीपे महेन्ति।

(२९८) एकञ्च दोणं पुरिस वरुत्तमस्स, रामगामे नागराजा महेति॥

एका हि दाठा ति दिवे हि पूजिता, एका पन गन्धार-पुरे महीयति।

कालिङ्ग रञ्ञो विजिते पुनेकं, एकं पन नागराजा महेति॥

गामके कोलियोंने भी ०। [६] वेठदीपके ब्राह्मणोंनेभी ०। [७] पावाके मल्लोंने भी ०। [८] कुसीनाराके मल्लोंने भी ०। [९] द्रोण ब्राह्मणने भी तुम्बका ०। [१०] पिप्पलीवन के मौर्योंने भी अंगारोंका ०।

(२९७) इस प्रकार आठ शरीर (=अस्थि) के स्तूप, नवाँ तुम्ब-स्तूप और दसवाँ कोयला-स्तूप पूर्वकाल (=भूतपूर्व) में थे।

(२९८) "चक्षुमानका शरीर आठ द्रोण था, (जिसमें) सात द्रोण जम्बूदीपमें पूजित होते हैं।

(और) पुरुषोत्तमका एक द्रोण राम-गाममें नागोंसे पूजा जाता है।

एक दाढ़ (=दाठा) स्वर्ग-लोकमें पूजित है, और एक गंधारपुरमें पूजी जाती है।

तस्सेव तेजेन अयं वसुन्धरा, आयाग सेट्ठे हि मही अलङ्कता ।
एवं इमं चक्खुमतो सरीरं, सुसक्कतं सक्कत सक्कतेहि ॥
देविन्द नागिन्द नरिन्द पूजितो, मनुस्सिन्द सेट्ठे हि तथेव पूजितो ।
तं वन्दथ पञ्चलिका लभित्वा, बुद्धो हवे कप्प सते हि दुल्लभो, ति ॥

चत्तालीस समा दन्ता, केसा लोमा च सब्बसो ।
देवा हरिंसु एकेकं, चक्कवाल परंपरा, ति ॥

महापरिनिब्बानसुत्तं ततियं ॥

एक कलिंगराजाके देशमें है; और एकको नागराज पूजते हैं ।
उसी तेजसे पटुकाकी भाँति यह वसुंधरा मही अलंकृत है ।
इस प्रकार चक्षुष्मान् (=बुद्ध) का शरीर सत्कृतों द्वारा सुसत्कृत हुआ ।
देवेन्द्रों नागेन्द्रों नरेन्द्रोंसे पूजित, तथा श्रेष्ठ मनुष्योंसे पूजित हुआ ।
उसे हाथ जोळकर वंदना करो, सौ कल्पमें भी बुद्ध होना दुर्लभ है ।
चालीस केश, रोम आदिको चारों ओर,
एक एक करके नाना चक्रवालोंमें देवता ले गये ।

तृतीय महापरिनिर्वाण सूत्र ॥
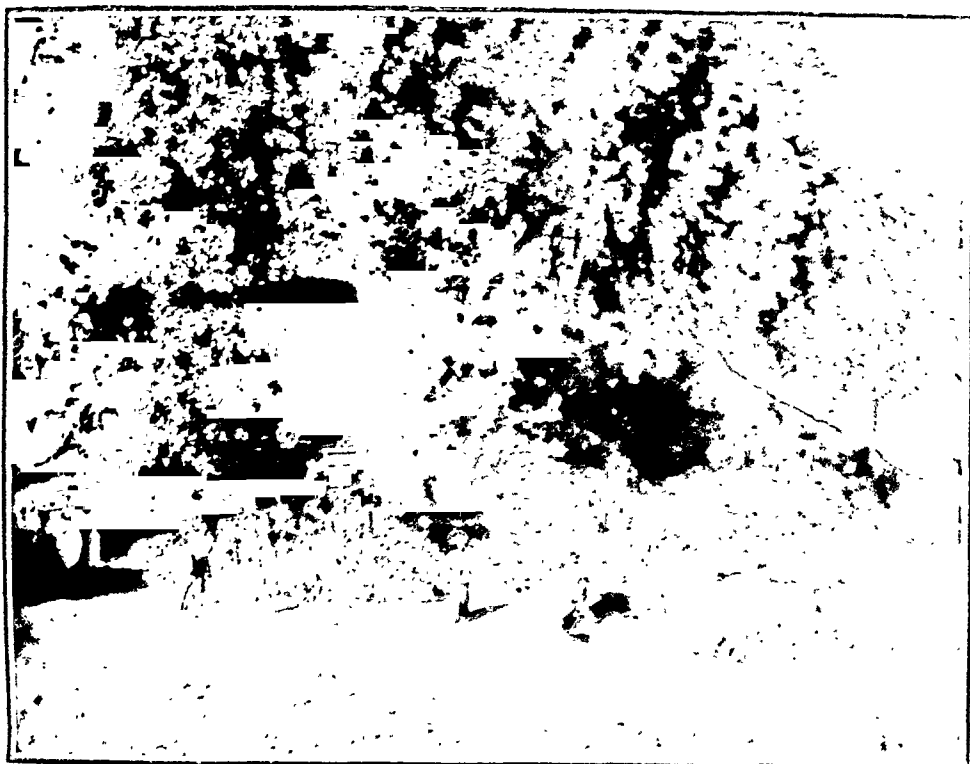
कुशिनगर का वर्तमान "रामाभार" स्तूप: इसी स्थान पर भगवान की दाह क्रिया हुई थी।
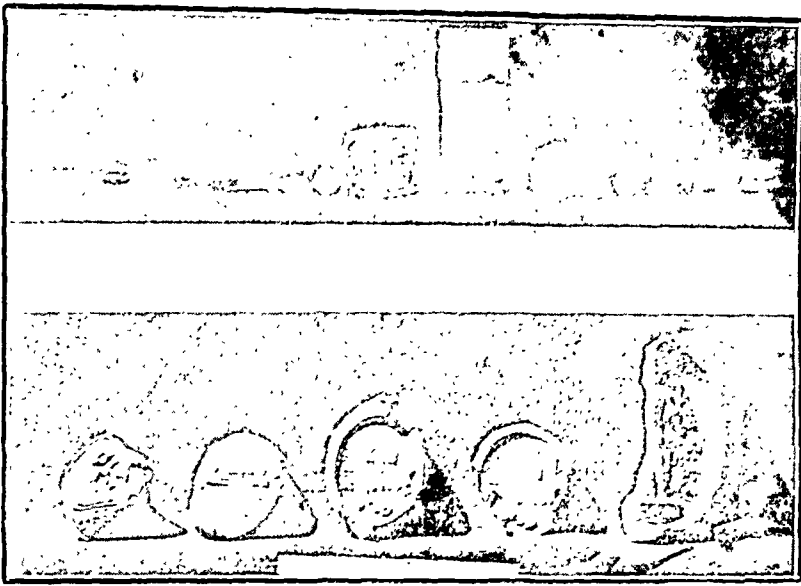
(१) कुशिनगर के महापरिनिर्वाण-स्तूप की खुदाई में प्राप्त भगवान् के शरीर-धातु रखने की कुछ डिब्बियाँ।

(२) कुशिनगर महापरिनिर्वाण-स्तूप के अन्दर से मिली हुई पकी मिट्टी की कुछ मुद्राएँ; इन मुद्राओं के मध्य में "श्रीमहापरिनिर्वाण" आदि लेख खुदे हैं।
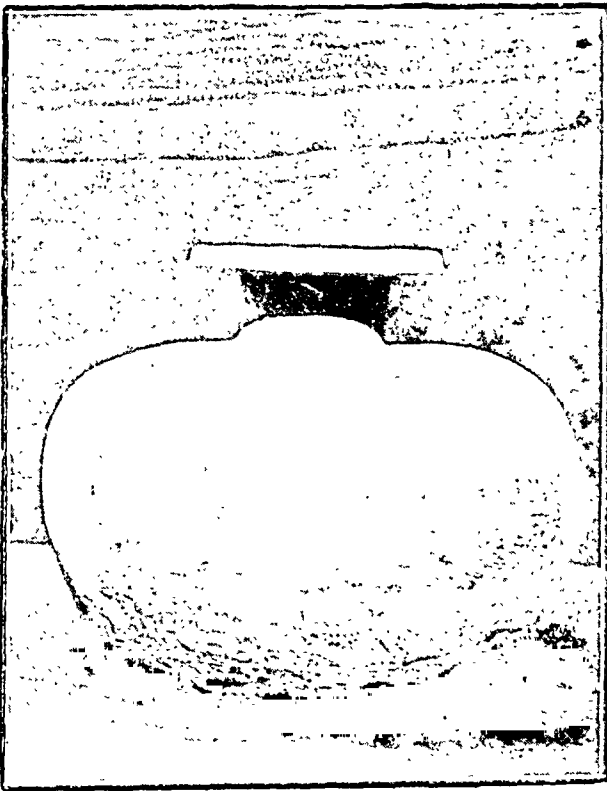
कुशिनगर के महापरिनिर्वाण-स्तूप की खुदाई में प्राप्त ताम्र-घट। इस घट में कोयला, मोती, सोना आदि अनेक चीजें मिली हैं।

कुसिनगर का

पुरातत्त्व-लेख संग्रह

भगवान् बुद्ध के परिनिर्व्वाण स्थान, कुसिनगर (वर्त्तमान, माथाकुंवर. जि० गोरखपुर) में पुरातत्त्व विभाग की ओर से समय समय पर जो खुदाई हुई थी, उसमें मिले हुए पुराने लेखों में से कुछ आवश्यक लेखों का यहाँ संग्रह है।

यहाँ की खुदाई सन् १८७५ ई० से लेकर सन् १९११ ई० तक हुई थी। अधिकांश लेख सन् १९१०—११ ई० के बीच प्राप्त हुए।

(१) एक पत्थर के छत्र (जिसमें सारिपुत्र की मूर्त्ति भी बनी है) पर कुटिल अक्षर में निम्नलिखित लेख लिखा हुआ है—

"×××××(ते) ष्वभ्युवाच—तेषञ्च यो निरोधो—

×××××संघ सारिपुत्रस्य।"

(२) श्री महापरिनिर्व्वाण मन्दिर के सामने आँगन के अन्दर से एक ताम्र-पत्र मिला था, उस पर भगवान् के शिष्य अश्वजित (अश्वजित्) द्वारा सारिपुत्र को राजगिरि में दिया हुआ उपदेश संस्कृत भाषा में लिखा है —

(१) कुशिनगर के महापरिनिर्वाण-स्तूप की खुदाई में प्राप्त भगवान् के शरीर-धातु रखने की कुछ डिब्बियाँ।

(२) कुशिनगर महापरिनिर्वाण-स्तूप के अन्दर से मिली हुई पकी मिट्टी की कुछ मुद्राएँ; इन मुद्राओं के मध्य में "श्रीमहापरिनिर्वाण" आदि लेख खुदे हैं।

कुशिनगर के महापरिनिर्वाण-स्तूप की खुदाई में प्राप्त ताम्र-घट। इस घट में कोयला, मोती, सोना आदि अनेक चीजें मिली हैं।

कुसिनगर का

पुरातत्त्व-लेख संग्रह

भगवान् बुद्ध के परिनिर्व्वाण स्थान, कुसिनगर (वर्त्तमान्, माथाकुंवर, ज़ि० गोरखपुर) में पुरातत्त्व विभाग की ओर से समय समय पर जो खुदाई हुई थी, उसमें मिले हुए पुराने लेखों में से कुछ आवश्यक लेखों का यहाँ संग्रह है।

वहाँ की खुदाई सन् १८७५ ई० से लेकर सन् १९११ ई० तक हुई थी। अधिकांश लेख सन् १९१०—११ ई० के बीच प्राप्त हुए।

(१) एक पत्थर के छत्र (जिसमें सारिपुत्र की मूर्त्ति भी बनी है) पर कुटिल अक्षर में निम्नलिखित लेख लिखा हुआ है—

"× × × × × (ते) सन्युवाच—तेसञ्च यो निरोधा—
× × × × × संघ सारिपुत्रस्य।"

(२) श्री महापरिनिर्वाण मन्दिर के सामने जमीन के अन्दर से एक ताम्र-पत्र मिला था, उस पर भगवान् के शिष्य अस्सजित (अश्वजित्) द्वारा सारिपुत्र को राजगिरि में दिया हुआ उपदेश संस्कृत भाषा में लिखा है—

"ये धर्म्मा हेतु प्रभवा हेतु तेष्यान्—
तथागताह्य वदत्। तेषञ्च यो
निरोध एवम् वादी महाश्रमण:।"

(३) मिट्टी को पकाकर बनाई हुई मुद्राएँ (Clay seals) सब मिलाकर ८९५ प्राप्त हुईं। उनमें से कुछ मुद्राओं पर निम्नलिखित लेख हैं—

(क) आर्य्या-ष्ट वृध्यै॥

(ख) श्री महापरिनिर्व्वान विहारे भिक्षु संघस्य॥

(ग) श्री महापरिनिर्व्वान विहारीयार्य्य भिक्षुसंघस्य॥

(घ) कुसनगर॥

(ङ) देयधर्म्मोयम् साक्य भिक्षुर्भदन्त सुवीरस्य कृतिर्दिनस्य॥

(च) श्री विष्णु-द्वीप* विहारे भिक्षु संघस्य॥

* पालि पिटक में 'वेठ-दीप' है।

(छ) श्रीमद् परण्ड महाविहारे आर्य्य भिक्षु संघस्य ॥

(४) बाकी मुद्राओं पर लिखे हुए नाम इस तरह हैं—

घरण्डक। विड्डिसम्पर। ताराश्रय। रत्नमति। प्रसन्ता श्रीप्रभा। अभिप्रासिद्धि। वासुक। विक्काक। शन्त ज्ञान। छत्र दत्त। आनन्द सिंग। गङ्गायस्स। सिरिन्द। दिवाकर पभा। तारामित्र। तारा-शरण। तारावल। तारक-ऊंम्। यक्खपालित। प्रद्धान श्रीप्रभ। सीलगुत्त। देनुक। कुसल। अप्रमाद। कमल सिरीप्रभ। कमल प्रभ। सब्ब सिद्धि। सब्ब मित्त। यखुक। पञ्चावला। सावक। सील। दूगसरण। यागदत्त। भूरद्धर दत्त। वल्लभ। सीरिममाक। प्रिय गुप्त। हरक। बाला।···अरिय। दद्दुक।...मन। सीरिमद्द दिन। वीरसेन। सीरिवाला। सीरिसेन। लाचेक। विगीत-मत। कुमारामातस्स। कमलसीरिप्रभ। सुप्पवुद्ध ॥

(५) श्री महापरिनिर्बाण स्तूप को खोदते समय उसके अन्दर ताम्बे का एक बड़ा घड़ा मिला था। उसके ऊपर जो ताम्र-पत्र ढका हुआ था, उस पर निम्नलिखित लेख लिखा हुआ है। डा० फ्लीट के मता-नुसार यह लेख सन् ४००—५०० ई० के बीच गुप्त-काल का है*।

1—एवम् मया श्रुतम्=एकस्मिं समयेन भगवान् श्रावस्त्याम् विहरतिस्म जेतवने अनाथपिण्डदस्यारामे [······]

2—तत्र [भ] गवान=भिक्षूना—म [···············] ध [र्माणाम् वो भिक्षवः ·····················देश] यिश्यामि—अपचयम् च तच्च श्रि [णुत········· साधु च]

3—सुष्ठु च मनसि कुरुत भाषिश्ये [धर्मा] ना [माचयः कतमो यदुत=ऽस्मिं सतिदम् भव] ति. अस्योत्पादादि [दमुत्पद्यते यदुता]

4—विद्या प्रत्ययाः संस्काराः संस्कार प्रत्ययम् विज्ञानम् [विज्ञान-प्रत्ययम् नाम रूपम् नामरूप—प्रत्] य [ऽयम्] षडायतनम् षडा [यतन—प्रत्ययः स्पर्शः]

5—स्पर्श-प्रत्यया वेदना वेदना-प्रत्यया तृष्णा तृष्णा-[प्रत्ययम्=उपादानम्= उपादान-प्रत्ययो भुवो] भुव-प्रत्यया जाति [जाति-प्रत्यया···जरा]

---

* विस्तार के लिये 'The Archæological Annual Report, 1910—11' को देखो।

6—मरण-शोक-परिदेव-दुःख-दौर्मनस्योपा [यासा भवन्ति। एवम् अस्य केवल]स्य मह [तो दु:]ख-स्कन्धस्य समुद [यो भवति……अय-]

7—[मु] च्यते धर्माणाम्=आचयः धर्माणाम्=अपचयः कतमः]…[………
……] तद् न भवत्यस्य निरोधादि […] निरुध्यते—
[………………]

8—नि[रो]धः संस्कार-निरोधाद्-विज्ञान-निरोधाः विज्ञान निरोधान-ना [म-रूप-नि]रोधाः नामरूप-निरोधात्-षडायतन-निरोधाः ष [ड-आयतन निरोधात्-स्पर्श-निरोधाः]

9—स्पर्श-निरोधाद्=वेदना-निरोधो वेदना-नि [रोधात्-तृष्णा-]नि[रोधाः तृष्णा]-निरोधाद्=उपादा [न] निरोधाः उपादान-निरोधाद्=भुव-निरोधाः [भुव-निरोधाज्जाति-निरोधो]

10—जा[ति]-निरोधाज्जरा-मरण-शोक-[परिदेव]-दुःख-[दौर्मनस्यो] पाया-सानिरुध्यन्ते एवम्-अस्य केवलस्य मह [तो] दुःख-[स्कन्धस्य निरोधो]

11—भवति अयमुच्यते धर्म्मा [णाम्=अपच-] यः धर्म्माणाम् वो भिक्षवः आ [चय] म् च देशयिष्यामी=ऽपचयम् च इति मे य [दुक्तम्=इदमे]

12—[त] त्=प्रत्युक्तमि [दमऽ] वोचद्=भगवाना [त्तम] नासस्ते भिक्षवो भगवतो [भाषितम् अ]भ्यनन्द [न्. दे] यधर्मोयम् अने [क विहार]-स्वामिनो हरिवलस्य य [द=ऽ-

13—त्र] पु [ण्यम्] तद् [=भ] वतु सर्व-सत्वानाम्=अनुत्तर-ज्ञानावाप्तये साक्य [भि-] क्षुर्धर्मानन्दो सर्वत्रानुमोदते [………नि]र्वाण चैत्ये ताम्र-पट्ट इति ॥

इस ताम्रपत्र का खास अर्थ इतना ही है कि "अनेक विहारों के स्वामी (कर्त्ता) हरिवल ने इस महापरिनिर्वाण चैत्य को वनाया है ॥"

(६) महापरिनिर्वाण मन्दिर के अन्दर भगवान् की मूर्त्ति के सिंहासन पर सुभद्र परिव्राजक की एक छोटी मूर्त्ति है, ठीक उसी के नीचे एक शिला-लेख अभी तक वर्तमान है—

१—देयधर्मोयम् महाविहारे स्वामिनो हरिवलस्य

२—प्रतिमाचेयम् घटिता दिने × × मा तु स्वारेन॰ ।

(७) माथाकुंवर मन्दिर (वर्त्तमान्, माथाबाबा) के दक्षिण दीवाल पर लगा हुआ एक काले रंग के पत्थर पर शिलालेख खुदा है। लेकिन् अधिक खराब हो जाने के कारण पूरा नहीं पढ़ सका। शेष लेख इस प्रकार है—

"ॐ नमो बुद्धाय। नमो बुद्धाय भिक्षुन्........"

इस स्थान के मुख्य मन्दिर तथा बौद्ध धर्म का अन्त किस तरह हुआ? इसको जानने के लिये पुरातत्त्व वेत्ता मि० ए० सी० एल्० कारलाईल् के रिपोर्ट का कुछ अंश नीचे दिया गया है—

"........but in the inner doorway of the temple itself I made an interesting discovery. In two hollows, one on each side, at the lower part of the doorway, I found the ancient cup-shaped iron pivot hinges of the former doors; and with and adhering to the hinges I found some fragments of black charred wood, which showed that the doors had been destroyed by fire, and as numerous human bones and various charred substances were found in the outer chamber, as well as in both doorways, it was evident that Buddhism had here been annihilated by fire and sword."

(From the Report of a tour in the Gorakhpur District. By A. C. L. Carlleyle, in 1875-76 & 1876-77; page, 62 and 63)

———

परिशिष्ट

शब्दानुक्रमणी ।

———

पुस्तक मिलने का पता—

किन्तिमा,

बर्मा बौद्ध मन्दिर,

सारनाथ, बनारस।

महाबोधि बुक एजेन्सी,

सारनाथ, बनारस।